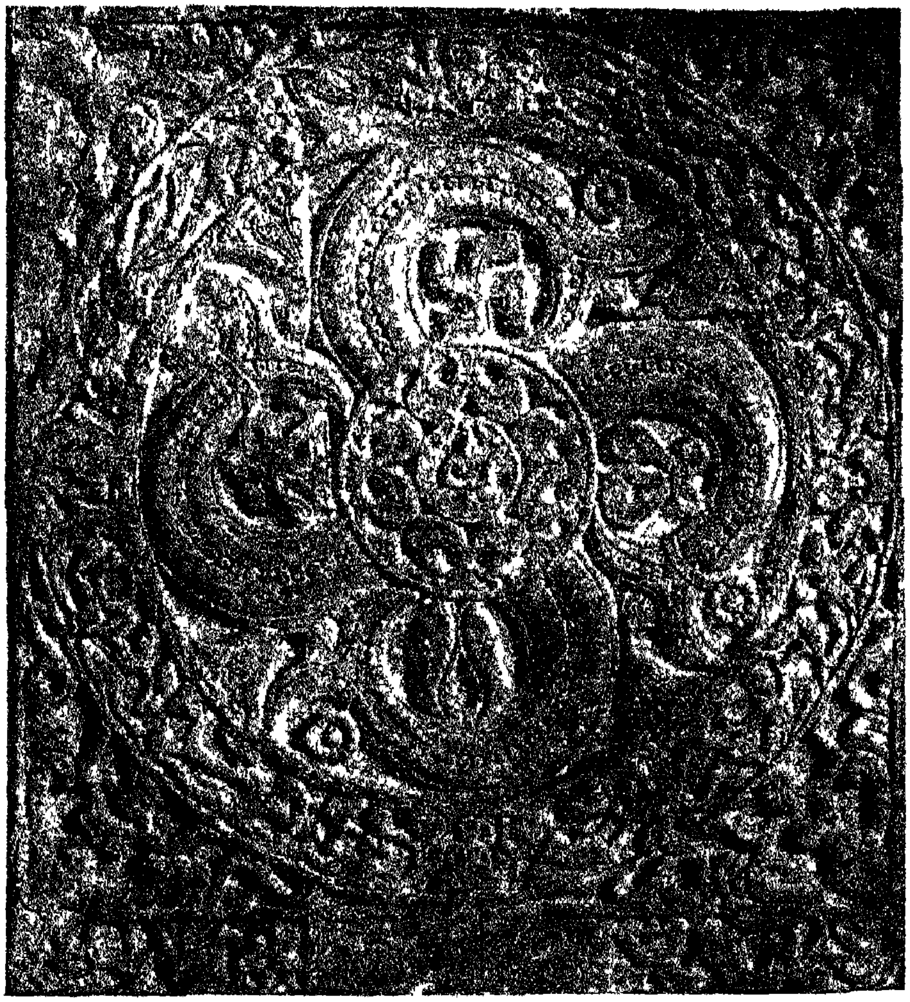
श्री स्याद्वाद महाविद्यालय

स्वर्ण-जयन्ती

भदैनी — बनारस

संस्मरण



सम्पादक

प्रो० खुशालचन्द्र गोरावाला

वीर नि० २४८१ वि० २०१२ ई० १९५५



3

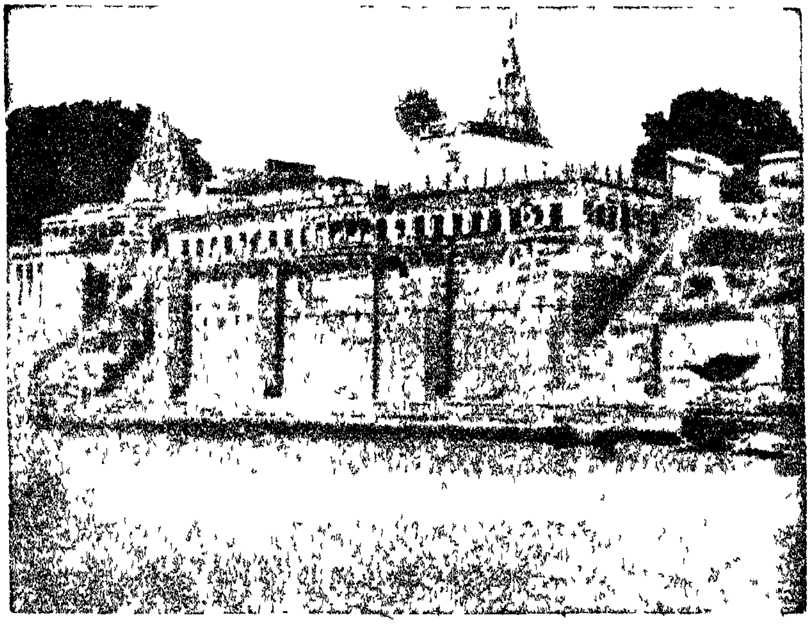
इस संस्था की [illegible] मेरे हाथ [illegible]
[illegible] है। [illegible] करता हूं कि इस संस्था के शिक्षक
[illegible] सिद्ध [illegible]

[illegible] मोहनदास करमचंद गांधी

माघ [illegible]

श्री स्याद्वाद् महाविद्यालय काशी

स्थापित—वी० नि० सं० २४३१ (१९०५)
स्वर्ण जयन्ती—वी० नि० सं० २४८१ (१९५५)



विद्यालय-भवन



विद्यालय-भवनका टूटा घाट

सन्त्यत्र——

ऐतिहासिक स्तुति

जैन परम्परामें यह कथा प्रसिद्ध है कि पूज्यवर श्री माघनन्दी आचार्य एक दिन आहार के लिये किसी गाँवमे जा रहे थे। मार्ग मे एक कुम्हारकी कन्या पर उनकी दृष्टि पडी। उसे देखकर वे उस पर आसक्त हो गये और पवित्र मुनिलिङ्गको त्याग कर उसके साथ विवाह कर लिया। उसके बाद वे कुम्हारके घरमे रहने लगे। उन्हे घडा बनाना तो आता नही था। अत वे बने हुए घडो को थपकी देने का काम करते थे। यद्यपि वे सयम से भ्रष्ट हो गये थे किन्तु सम्यग्दर्शन से च्युत नही हुए थे। अत घडो पर थपकी लगाते समय चौबीस तीर्थङ्करो को स्तुति रचकर गाते थे। नीचे उनकी बनायी एक स्तुति ज्यो की त्यो दी जाती है। सगीतज्ञोका कहना है, कि यह स्तुति घडे की थपकी पर ठीक बैठती है। स्तुति अति ललित, प्रसादगुणयुक्त तथा भक्तिपूर्ण है।

वन्दे तानमरप्रवेकमुकुटप्रोत्तारणप्रस्फुट-
द्धामस्तोमविमिश्रिता पदनखा ईपत्करा रेजिरे।
येषा तीर्थकरेशिना सुरसरिद्वारिप्रवाहोल्लुठ-
द्दीव्यद्देवनितम्बिनीस्तनगलत्काश्मीरपूरा इव ॥१॥

वृषभं त्रिभुवनपतिशतवन्द्य, मन्दरगिरिमिव धीरमनिन्द्यम्।
वन्दे मनसिजगजमृगराज, राजिततनु**मजित** जिनराजम् ॥२॥

संभवदुज्ज्वलगुणमहिमान, सभवजिनपतिमप्रतिमानम्।
अभिनन्दनमानन्दितलोक, विद्यालोकितलोकालोकम् ॥३॥

सुमति शमितानयसमुदाय, निर्दलिताखिलकर्मसमूहम्।
वन्दे त **पद्मप्रभ**जिनदेव देवासुरनरकृतसेवम् ॥४॥

सेवकमुनिजनसुरतरुपार्श्व, प्रणमाम्यमित त जिन**पार्श्वम्**।
त्रिभुवनजननयनोत्पलचन्द्र, **चन्द्रप्रभ**मपवर्जितचन्द्रम् ॥५॥

सुविधि विधुधवलोज्ज्वलकीर्ति, त्रिभुवनजनपतिकीर्तितमूर्तिम्।
भूतलपतिनुत**शीतलनाथ**, ध्यानमहानलहुतिरतिनाथम् ॥६॥

स्पष्टानन्तचतुष्टयनिलय, **श्रेयो** जिनपतिमपगतविलयम्।
श्री **वसुपूज्यसुतं** नुतपाद, भव्यजनप्रियदिव्यनिनादम् ॥७॥

कोमलकमलदलायतनेत्र **विमलं** केवलसस्यक्षेत्रम्।
निर्जितकन्तु**मनन्त**जिनेश, वन्दे मुक्तिवधूपरमेशम् ॥८॥

धर्मं निर्मलशर्मापन्न, धर्मपरायणजनताशरणम् ।
शान्ति शान्तिकर जनतायाः, शान्तिभरक्रमकमलनताया ॥९॥

कुन्थुं गुणमणिरत्नकरण्ड, ससाराम्बुधितरणतरण्डम् ।
अमरीनेत्रचकोरीचन्द्र, भुवि परम पदविनुतमहेन्द्रम् ॥१०॥

उद्धतमोहमहाभटमल्ल, **मल्लि** फुल्लमुरप्ततिमल्लम् ।
सुव्रतमपगतदोषनिकाय, चरणाम्बुजनुतदेवनिकायम् ॥११॥

नौमि **नमि** गुणरत्नसमुद्र, योगिनिरूपितयोगसमुद्रम् ।
नीलश्यामलकोमलगात्र, **नेमि**स्वामिनमेनोदात्रम् ॥१२॥

फणिफणमण्डपमण्डितदेह, **पार्श्वं** निजहितगतसन्देहम् ।
वीरमपारचरित्रपवित्र कर्ममहीरुहमूललवित्रम् ॥१३॥

ससाराप्रतिमप्रतिबोध, प्रागनिष्क्रमण केवलबोधम् ।
परिनिर्वृतिसुखबोधितबोध, सारासारविचारविबोधम् ॥१४॥

वन्दे मन्दरमस्तकपीठे, कृतजन्माभिषव नुतपीठे ।
दर्शनान्तविलब्धिविकरण, केवलबोधामृतसुखकरणम् ॥१५॥

अनणुगुणनिबद्धामर्हता माघनन्दि-
व्रतिरचितसुवर्णानेकपुष्पव्रजानाम् ।
स भवति जयमाला यो विधत्ते स्वकण्ठे
प्रियपदममरश्रीमोक्षलक्ष्मीवधूनाम् ॥१६॥

संस्मरणीय

स्वास्थ्य यदात्यन्तिकमेष पुसा स्वार्थो न भोग परिभङ्गुरात्मा ।
तषोनुषङ्गान्न च तापशान्ति रितीदमाख्यद्भगवान्सुपार्श्व ॥

आत्मीयोके विषयमे विचार प्रकट करना यदि कठिन और सकटाकीर्ण है तो अपने विद्याकुलपर कुछ भी लिखना दुर्गम तथा समालोचना-सकटका आह्वान है। दुर्गम इसलिए कि "तुमको कैसे पूजूँ माली ?" और समालोचना-सकटकी आशका इसलिए कि "गुणानुरागमनस" सन्तोकी सख्या विरल है। यह आशका तब अधिकतम हो जाती है जब विवेच्य युग निर्माता हो, जैसा कि श्री स्याद्वाद महाविद्यालय काशी है।

पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसादजी वर्णीकी हीरक-जयन्तीके समय अभिनन्दन-ग्रन्थका सम्पादकत्व स्वीकार करते तथा उसकी समस्त योजना कार्यान्वित करते हुए मेरे मनमे एक ही भाव था कि अपने ग्राम-गुरु (आज देश-गुरु) तथा विद्याकुलके सस्थापकका अभिनन्दन करके परम्परया विद्याकुलसे भी उऋण हो लूं। यह कल्पना भी उस समय न आयी थी कि अपने निर्माता विद्यालयके लिए प्रकट रूपमे साक्षात् कुछ करनेका अवसर पूज्य बाबाजीकी आज्ञासे इतनी जल्दी आयगा।

मानवकी दृष्टि स्थूलग्राही है। स्थान, सख्या आदि की दृष्टिसे स्याद्वाद विद्यालय उतना विशाल नही है जितने भारतके विविध विश्वविद्यालय है। फलत इसके महत्त्वको यदि देश और समाज न आँक सका हो तो आश्चर्य की बात नही है, क्योकि शरीरमे चेतनाके समान व्याप्त रहकर भी यह अदृश्य रहा है। यही कारण है कि 'जीव-शास्त्र'के समान 'सस्मरण' भी स्वर्ण-जयन्तीका एक अग बनाया गया है। इसमे अत्यन्त सक्षिप्त रूपमे स्वभावोक्ति द्वारा विद्यालयका परिचय देना ही हमारा उद्देश्य है। उसपरसे वाचक स्वय ही परिणाम निकाले और देखे कि इस विद्यालयने धर्म-समदृष्टिता अथवा धार्मिक सहिष्णुता, भारतीय सस्कृति, व्यापक रूपसे प्राच्य विद्या, और व्याप्य रूपसे जैनधर्म तथा दर्शनके प्रचारके लिए जो किया है क्या वह किसी भी विश्वविद्यालयसे कम है या जितना सब विश्वविद्यालयोने किया उससे भी अधिक है ?

दूसरा विकल्प इसलिए कि विशालकाय विश्वविद्यालयोमे बहुत थोडे ऐसे है जिनमे प्राच्यविद्यालय हो। जिनमे है भी, वहाँपर भी केवल सस्कृत साहित्यका अध्यापन होता है। प्राचीन भारतीय लोकभाषाओ (प्राकृत तथा पाली) की व्यवस्था अब स्वराज्य होनेपर वहाँ होने जा रही है या हुई है, जब कि यह विद्यालय अपने प्रारम्भ से ही अर्धमागधी आदि साहित्योका अध्यापन कराकर समाजका अज्ञान दूर कर रहा है और पुरुषार्थप्रधान वि-(विशिष्ट) ज्ञानसे आलोकित करनेका प्रयत्न करता चला आ रहा है।

वर्तमान विश्व विज्ञानके नादसे गूँज रहा है। राष्ट्रोके नायक बात बातमे विज्ञान (साइन्स) की दुहाई देते है। और समस्त विश्वविद्यालयोके कलेवरोको "जीविका"के साधनोके नामपर विज्ञान-विद्यालयों द्वारा अति स्थूल करते जा रहे हैं। प्रतीत होता है कि ये "जीव उद्धार" की विद्याका वही हाल कर डालेगे जो अत्यन्त स्थूल शरीरमें हृदयका होता है और वह चारो ओरसे आक्रान्त होकर अपनी गति

ही बन्द कर देता है। आजका विज्ञान विपरीत-अथवा कु-ज्ञान ही हो रहा है क्योंकि उसके प्रयोग 'विष,जन्तु-कूड-पंजर, बन्ध-वधादि'के साधनोंको उत्पन्न करनेमें स्वयमेव सहायक हो रहे हैं। इसका एक-मात्र कारण यही है कि पाश्चात्य जगतकी चकाचौंधमें हम भी उस आत्म-विद्याको भूलने जा रहे हैं जिसकी ओर हमारी दृष्टि गौराङ्ग विदेशियों द्वारा पूर्ण दास बनाये जानेपर गयी थी। तथा जिसके सहारे भारतीय स्वातन्त्र्य-संग्रामकी भूमिका ही तैयार नहीं हुई थी, अपितु प्रारम्भ भी हुआ था, क्योंकि ब्रह्म-प्रार्थना-जैन-आर्य समाज आदि ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके पूर्वचर थे।

तात्पर्य यह कि स्याद्वाद विद्यालय या अन्य प्राच्य विद्यालयोंकी परम्परा १९वीं शतीके उत्तरार्द्धमें इसलिए चली थी कि भारतीय संस्कृति विषयक हमारा अज्ञान दूर हो जाय। किन्तु अज्ञानका दूसरा रूप विभंग-ज्ञान या कुज्ञान भी शास्त्रोंमें बताया है। धर्मके मूल दयासे ओतप्रोत न होनेके कारण विज्ञान आज कुज्ञान ही हो रहा है। अज्ञानके स्थानपर ज्ञानकी स्थापना स्वाभाविक और सरल है किन्तु कुज्ञानका निराकरण संघर्ष है। यतः स्याद्वाद विद्यालयका इतिहास ही नूतन धाराओंके प्रवाहकी कथा है। अतः इसकी स्वर्ण-जयन्ती द्वारा हम देश और समाजका इसीलिए आह्वान कर रहे हैं कि वे इस विद्यालय-को इतना सबल बनायें कि यह विश्वकी प्रवृत्तियोंको आत्मविद्यामय बनानेके अपने भावी कार्यक्रममें भी सफल हो सके।

अपने ढंगके एकमात्र इस युगप्रवर्तक विद्यालयके समस्त अंगों और कार्योंका परिचय इस संक्षिप्त संस्मरण द्वारा कराना असंभव है। आशा है, इस रूपरेखा मात्रके लिए विद्यालयके प्रेमी और भारतीय संस्कृतिके अनुरागी हमें क्षमा करेंगे।

मैं पूज्य श्री १०५ क्षु० गणेशप्रसादजी वर्णीके सातिशय पुण्यका ही यह प्रताप मानता हूँ जो अनेक बाधाएं आनेपर भी इस कार्यको पूर्ण कर सका। स्याद्वाद विद्यालयके आजीवन मूक सेवक और अपने आत्मीयके समान विद्यालयके संचालक बाबू सुमतिलालजी मंत्री तथा धर्म-समाज सेवाके समान इस विद्यालयकी सहायता एवं संचालनको स्वनामधन्य स्व० सेठ रामजीवनजी सरावगीसे विरासतमें पानेवाले, साहित्य-मनीषी बाबू छोटेलालजी रईस कलकत्ताका मैं अत्यन्त आभारी हूँ जिनकी कृपासे क्रमशः विवरणात्मक सामग्री और यह सुन्दर कलात्मक रूप 'संस्मरण' को प्राप्त हो सका है। स्याद्वाद विद्यालयके आचार्य और अपने पूज्य भाई पं० कैलाशचन्द्रजी शास्त्रीके विषयमें कैसे और क्या लिखूं? स्याद्वाद विद्यालयके यशस्वी वर्तमानके समान यह 'संस्मरण' भी उनके उत्संग और आत्मनिह्नवके बिना निश्चित ही इस रूपमें पाठकोंके सामने न आता।

वर्णी ग्रन्थमालाके मंत्री पं० फूलचन्द्र शास्त्री, जैन विजय प्रेसके स्वामी सेठ मूलचन्द्र किशनदास कापड़िया, जैन सन्देशका संचालक भा० दिगम्बर जैनसंघ, हीराचन्द्र गुमानचन्द्र बोर्डिङ्गके मंत्री जयन्तीलाल लल्लूभाई पारिख तथा समस्त कवियों और लेखकोंका आभारी हूँ।

भार्गव भूषण प्रेस और उसके स्वामी श्री पृथ्वीनाथ, शम्भूनाथ भार्गव को हार्दिक धन्यवाद है जिनकी तत्परतासे यह संस्मरण एक सप्ताहमें तैयार हो सका है।

काशी विद्यापीठ
११ पौष २०१२

खुशालचन्द्र गोरावाला

स्वर्ण-जयन्ती

धरती पर उतरी है मानो स्वर्ण-किरण ले ऊषा
एक ओर हिमगिरि का
गर्वोन्नत-सा माथ हुआ है ।
एक ओर गगाने, कोई
पावन चरण छुआ है ।।
मादक मलयानिल जगते ही
हार गया अंधियारा
कुछ 'साधक' सपनो की ही
जब साध हुई साकारा ।।
धरती की अम्बर दिगत की बदल गई ही भूषा ।
धरती पर उतरी है मानो स्वर्ण-किरण ले ऊषा ।।

उस दिन हुई सगर्व मनुजता
मानव भारत वासी
उसदिन हुई सगर्वा निजमे
पतित - पावनी काशी
जिसदिन 'भागीरथ' 'गणेश'ने
स्वर्गों को ललकारा
गगाके तट पर आ छोडी
'स्याद्वाद' की धारा ।
स्वर्गों का वरदान कि जैसे रहा धरणि ही छू-सा
धरती पर उतरी है मानो स्वर्ण-किरण ले ऊषा ।।

सरस्वती माता के मन्दिर–
का वह अथक पुजारी
साधन जब-तब हारे
जिसकी श्रद्धा कभी न हारी
सहज बन गया साध्य–
सदा ही फहराई वैजती
उसी प्रतिष्ठित माँ के मन्दिर–
की यह 'स्वर्ण-जयंती' ।
स्वर्ण-जयती ! जिसपर है न्योछावर रत्न-मंजूषा ।
धरती पर उतरी है मानों स्वर्ण-किरण ले ऊषा ।।

ललितपुर (झाँसी)– —हरिप्रसाद 'हरि'

स्याद्वाद महाविद्यालयका संरम्भ

श्री १०५ क्षु० गणेशप्रसादजी वर्णी

सवत् १९६१ मे बनारस चला गया, यहाँ पर धर्मशालामे ठहरा। बिना कार्यके कुछ उपयोग स्थिर नही रख सका–यो ही भ्रमण करता रहा। कभी गगाके किनारे चला जाता था और कभी मन्दाकिनी (मैदागिन)। परन्तु फिर भी चित्तको शान्ति नही मिलती थी।

उस समय क्वीस कालेजमे न्यायके मुख्य अध्यापक जीवनाथ मिश्र थे। बहुत ही प्रतिभाशाली विद्वान् थे। आपकी शिष्य मण्डलीमे अनेक शिष्य प्रखर बुद्धिके धारक थे। एक दिन मै उनके निवास-स्थान पर गया और प्रणाम कर महाराजसे निवेदन किया कि महाराज! मुझे न्यायशास्त्र पढना है–"यदि आपकी आज्ञा हो तो आपके बताये हुए समयसे आपके पास आया करूँ।" मैने एक रुपया भी उनके चरणोमे भेट किया।

पण्डितजीने पूछा—"कौन ब्राह्मण हो?" सुनते ही अन्तरगमे चोट पहुँची। मनमे आया—"हे प्रभो! यह कहाँकी आपत्ति आ गई?" अवाक् रह गया, कुछ उत्तर नही सूझा। अन्तमे निर्भीक होकर कहा—"महाराज! मै ब्राह्मण नही हूँ और न क्षत्रिय हूँ, वैश्य हूँ। यद्यपि मेरा कौलिक मत श्रीरामका उपासक था—सृष्टिकर्ता परमात्मामे मेरे वशके लोगोकी श्रद्धा थी और आजतक चली भी आ रही है परन्तु मेरे पिताकी श्रद्धा जैनधर्ममे दृढ हो गई तथा मेरा विश्वास भी जैनधममे दृढ हो गया। अब आपकी जो इच्छा हो सो कीजिये।"

श्रीमान् नैयायिकजी एकदम आवेगमे आ गये और रुपया फेकते हुए बोले—"चले जाओ, हम नास्तिक लोगोको नही पढाते। तुम लोग ईश्वरको नही मानते हो और न वेदोमे ही तुम लोगोकी श्रद्धा है। तुम्हारे साथ सम्भाषण करना भी प्रायश्चितका कारण है, जाओ यहा से।"

मैने कहा—"महाराज! इतना कुपित होनेकी बात नही। आखिर हम भी तो मनुष्य है, इतना आवेग क्यो? आप तो विद्वान् है, साथ ही प्रथम श्रेणीके माननीय विद्वानोमे मुख्यतम है। आप ही इसका निर्णय कीजिये—जब कि सृष्टिकर्ता ईश्वर है तब उसने ही तो हमको बनाया है तथा हमारी जो श्रद्धा है उसका भी निमित्त कारण वही है। 'कार्या'न्तर्गत हमारी श्रद्धा भी तो एक 'काय' है। जब कार्य मात्रके प्रति ईश्वर निमित्त कारण है तब आप हमको क्यो कोसते है? ईश्वरके प्रति कुपित होना चाहिये। आखिर उसने ही तो अपने विरुद्ध पुरुषोकी सृष्टि की है या फिर यो कहिये कि हम जैनोको छोडकर अन्यका कर्ता है। और यथार्थ मे यदि ऐसा है तो कार्यत्व हेतु व्यभिचारी हुआ। यदि मेरा कहना सत्य है तो आपका हमपर कुपित होना न्यायसगत नही।"

श्री नैयायिकजी महाराज बोले—"शास्त्रार्थ करने आये हो?" मैने कहा—"महाराज! यदि शास्त्रार्थ करने योग्य पाडित्य होता तो आपके सामने शिष्य बननेकी चेष्टा ही क्यो करता? खेदके साथ कहना पडता है कि आप-जैसे महापुरुष भी ऐसे शब्दोका प्रयोग करते है जो साधारण पुरुषके लिए भी

सर्वथा असगत है। वही मनुष्यता आदरणीय होती है जिसमें शान्तिमार्गकी अवहेलना न हो। आप तर्कशास्त्रमें अद्वितीय विद्वान् हैं फिर मेरे साथ इतना निष्ठुर व्यवहार क्यो करते है ?"

नैयायिकजी तेवरी चढ़ाते हुए बोले—"तुम बडे ढीठ हो। जो कुछ भी भाषण करते हो उसमें ईश्वरके अस्तित्वका लोप कर एक नास्तिक मतकी ही पुष्टि करते हो। "मैंने ठीक ही तो कहा है कि तुम नास्तिक हो—वेद-निन्दक हो, तुमको विद्या पढाना सर्पको दुग्ध और मिश्री खिलानेके सदृश होगा। गुड और दुग्ध पिलानेसे क्या सर्प निर्विश हो सकता है ? तुम-जैसे हठग्राही मनुष्यको न्यायविद्याका पण्डित बनाना नास्तिक मतकी पुष्टि करना है। जानते हो—ईश्वरकी महिमा अचिन्त्य है उसीके प्रभावसे यह सब व्यवहार चल रहा है। यदि यह न होता तो आज ससारमें नास्तिक मतकी ही प्रभुता हो जाती।"

नैयायिकजी यह कह कर ही सतुष्ट नही हुए, डेस्कपर हाथ पटकते हुए जोर से बोले—"हमारे स्थानसे निकल जाओ।"

मैंने कहा—"महाराज ! आखिर जब आपको मुझसे सम्भाषण करनेकी इच्छा नही तब अगत्या जाना ही श्रेयस्कर होगा। किन्तु खेद होता है कि आप तार्किक विद्वान् होकर भी मेरे साथ ऐसा व्यवहार करते हैं। मेरी समझमें तो यही आता है कि आप स्वय ईश्वरको नही मानते और हमसे कहते हैं कि तुम नास्तिक हो। जब कि ईश्वरकी इच्छाके बिना कोई कार्य नही होता तब हम 'क्या ईश्वरकी इच्छा बिना ही हो गये ? नही हुए,तब आप जाकर ईश्वरसे झगडा करें कि आपने ऐसे नास्तिक क्यो बनाये जो कि आपका ही अस्तित्व स्वीकार नही करते। आप मुझसे कहते है कि चूँकि तुम वेद-निन्दक हो अत नास्तिक हो, परन्तु अन्तरदृष्टिसे परामर्श करनेपर मालूम हो सकता है कि हम वेदके निन्दक है या आप ? वेदमें लिखा है—'मा हिंस्यात्सर्वभूतानि' अर्थात् 'यावन्त प्राणिन सन्ति ते न हिंस्या'—जितने प्राणी हैं वे अहिंस्य हैं। अब आप ही बतलाइये कि जो मत्स्य-मासादि का भक्षण करे, देवता को बलि प्रदान करे और श्राद्धमें पितृतृप्तिके लिए मासपिण्डका दान करे वे वेदको न माननेवाले हैं या हम लोग जो कि जलादि जीवोकी भी रक्षा करनेकी चेष्टा करते है ? ईश्वरकी सृष्टिमें सभी जीव है तब आपको क्या अधिकार है कि सृष्टिकर्ताकी रची हुई सृष्टिका घात करे और ऐसे-ऐसे निम्नाकित वाक्य वेदमे प्रक्षिप्त कर जगतको असन्मार्गमें प्रवृत्त करे—

'यज्ञार्थं पशव सृष्टा यज्ञार्थं पशुघातनम् ।
अतस्त्वा घातयिष्यामि तस्माद्यज्ञे वधोऽवध ॥"

और इस 'मा हिंस्यात् सर्वभूतानि' वाक्य को अपनी इन्द्रियतृप्तिके लिए अपवाद वाक्य कहे ? खेदके साथ कहना पडता है कि आप स्वय तो वेदको मानते नही और हमपर लाञ्छन देते है कि जैन लोग वेदके निन्दक हैं।"

पण्डितजी फिर बोले—"आज कैसे नादानके साथ सभाषण करनेका अवसर आया ? क्यो जी, तुमसे कह दिया न कि यहाँसे चले जाओ, तुम महान् असभ्य हो। आजतक तुममे भाषण करनेकी भी योग्यता न आई। किन ग्रामीण मनुष्योके साथ तुम्हारा सम्पर्क रहा ? अब यदि बहुत बक-झक करोगे तो कान पकडकर बाहर निकाल दिये जाओगे।"

जब पण्डितजी महाराज ये शब्द कह चुके तब मैंने कहा——महाराज ! आप कहते हैं कि तुम बडे असभ्य हो, ग्रामीण हो, शरारत करते हो, निकाल दिये जाओगे। महाराज ! मैं तो आपके पास इस अभिप्रायसे आया था कि दूसरे ही दिन उष कालसे न्यायशास्त्रका अध्ययन करूँगा, पर फल यह हुआ कि कान पकडने तक की नौबत आ गई। अपराध क्षमा हो, आप ही बताइये कि असभ्य किसे कहते हैं ? और महाराज ! क्या यह व्याप्ति है कि जो-जो ग्रामवासी हो वे वे असभ्य ही हो और जो-जो नगरनिवासी हो वे-वे सभ्य ही हो ? ऐसा कुछ नियम तो नही जान पडता। अन्यथा इस बनारस नगरमे, जो कि भारतवर्षमे सस्कृत भाषाके विद्वानोका प्रमुख केन्द्र है, गुण्डाव्रज नहीं होना चाहिये था और यहाँपर जो बाहरसे ग्राम-निवासी बडे-बडे धुरन्धर विद्वान् काशीवास करनेके लिए आते हैं उन्हे सभ्यकोटिमे नही आना चाहिये था। साथ ही महाराज ! आप भी तो ग्राम-निवासी ही होंगे। तथा कृपा कर यह तो समझा दीजिये कि सभ्यका क्या लक्षण है ? केवल विद्याका पाण्डित्य ही तो सभ्यताका नियामक नही है, साथमे सदाचारादि गुण भी तो होने चाहिये। मै तो बारम्बार नतमस्तक होकर आपके साथ व्यवहार कर रहा हूँ और आप मेरे लिए उसी नास्तिक शब्दका प्रयोग कर रहे है ! महाराज ! ससारमे उसीका मनुष्य-जन्म प्रशसनीय है जो राग-द्वेषसे परे हो। जिसमे राग-द्वेषकी कलुषता है वह चाहे बृहस्पति-तुल्य भी विद्वान् क्यो न हो, ईश्वराज्ञाके प्रतिकूल होनेसे अधोमार्गको ही जानेवाला है। आपकी मान्यताके अनुसार ईश्वर चाहे जो हो परन्तु उसकी यह आज्ञा कदापि नही हो सकती कि किसी प्राणीके चित्त को खेद पहुँचाओ। अन्यकी कथा छोडें, नीतिकारका भी कहना है कि——

'अय निज परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरिताना तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥'

'परन्तु आपने मेरे साथ ऐसे मधुर शब्दोमे व्यवहार किया कि मेरी आत्मा जानती है। मेरा तो निजी विश्वास है कि सभ्य वही है जो अपने हृदयको पापपङ्कसे अलिप्त रखे। आत्महितमे प्रवृत्ति करे। केवल शास्त्रका अध्ययन ससार-बधनसे मुक्त करनेका मार्ग नही। तोता राम-राम उच्चारण करता है परन्तु रामके मर्मसे अनभिज्ञ ही रहता है। इसी तरह बहुत शास्त्रोका बोध होनेपर भी जिसने अपने हृदय-को निर्मल नही बनाया उससे जगत्का क्या उपकार होगा ? उपकार तो दूर रहा अनुपकार ही होगा। किसी नीतिकारने ठीक कहा है कि——

'विद्या विवादाय धन मदाय शक्ति परेषा परिपीडनाय।
खलस्य साधोर्विपरीतमेतत् ज्ञानाय, दानाय च रक्षणाय॥'

'यद्यपि मै आपके समक्ष बोलनेमे असमर्थ हूँ क्योकि आप विद्वान् है, राजमान्य हैं, ब्राह्मण हैं तथा उस देशके हैं जहाँ ग्राम-ग्राममे विद्वान् हैं फिर भी प्रार्थना करता हूँ कि आप शयन-समय विचार कीजियेगा कि मनुष्यके साथ ऐसा अनुचित व्यवहार करना क्या सभ्यता के अनकूल था ? समयकी बलवत्ता है कि जिस धर्मके प्रवर्त्तक वीतराग सर्वज्ञ थे और जिस नगरीमे श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकरका जन्म हुआ था आज उसी नगरीमे जैनधर्मके माननेवालोका इतना तिरस्कार !'

उनके साथ कहाँतक बात हुई लिखना बेकार है। अन्तमे उन्होने यही उत्तर दिया कि यहाँसे चले जाओ, इसीमे तुम्हारी भलाई है। मैं चुपचाप वहाँसे चल दिया और मार्गमें भाग्यकी निन्दा तथा पञ्चम कालके दुष्प्रभावकी महिमाका स्मरण करता हुआ श्री मन्दाकिनी आकर कोठरीमे रुदन करने लगा पर सुननेवाला कौन था ?

सायकाल का समय था, कुछ जलपान किया, अनन्तर श्री पार्श्वनाथ स्वामीके मन्दिरमे जाकर सायकालकी बन्दनासे निवृत्त हो कोठरीमे आकर सो गया। सो तो गया पर निद्राका अश भी नही। सामने वही, नैयायिकजी महाराजके स्थानका, दृश्य अन्धकार होते हुए भी दृष्टिगत हो रहा था। नाना विकल्पोकी लहरी मनमे आती थी और विलय जाती थी।

मनमे आता—हे प्रभो ! यह वही वाराणसी है जहाँ आपके गर्भमे आनेके पहले छ मास पर्यन्त तीनो समय अविरल रत्नधारा बरसती थी और जिसकी सख्या प्रतिदिन साढे दस करोड होती थी। इस तरह छ मास गर्भसे प्राक् और नौ मास जबतक आप गर्भमे रहते थे इसी प्रकार रत्नधारा बरसती थी। आज उसी नगरीमे आपके सिद्धान्तपथपर चलनेवालोपर यह वाग्वज्र-वर्षा हो रही है। हे प्रभो ! क्या करे ? कहाँ जावे ? कोई उपाय नही सूझता। क्या आपकी जन्मनगरीसे मैं विफल-मनोरथ ही देशको चला जाऊँ ? इस तरह के विचार करते-करते कुछ निद्रा आ गई। स्वप्नमे क्या देखता हूँ—

एक सुन्दर मनुष्य सामने खडा है। कहता है—'क्यो भाई ! उदास क्यो हो ?' मैंने कहा—'आपको क्या प्रयोजन ? न आपसे हमारा परिचय है और न आपसे हम कुछ कहते है, फिर आपने कैसे जान लिया कि मैं उदासीन हूँ ?' उस भले आदमीने कहा कि 'तुम्हारा मुख-वैवर्ण्य तुम्हारे शोकको कह रहा है।' मैंने उसे इष्ट समझकर नैयायिक महाराज की पूरी कथा सुना दी। उसने सुनकर कहा—'रोनेसे किसी कार्यकी सिद्धि नही होती। पुरुषार्थ करनेसे मोक्ष लाभ हो जाता है फिर विद्याका लाभ कौन-सी भारी बात है।' मैंने कहा—'हमारी परिस्थिति ऐसी नही कि हम कुछ कर सके।' आगन्तुक महाशयने सान्त्वना देते हुए कहा—'चिन्ता मत करो, पुरुषार्थ करो, सब कुछ होगा। दुःख करनेसे पाप ही का बन्ध होगा और पुरुषार्थ करनेसे अभीष्ट फलकी सिद्धि होगी। तुम्हारे परम हितैषी बाबा भागीरथजी हैं। उन्हे बुलाओ, उनके द्वारा तुमको बहुत सहायता मिलेगी। हम विश्वास दिलाते है कि उनका तुम्हारा साथ आमरण रहेगा। वह निस्पृह और तुम्हारे शुभचिन्तक हैं। उन-जैसा तुम्हारा मित्र 'न भूतो न भविष्यति।' शीघ्र ही उनको बुलानेकी चेष्टा करो, उनके आते ही तुम्हारा कार्य सिद्ध होगा। तुम दोनो यहाँपर एक पाठशाला खोलनेका प्रयत्न करो। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि तुम्हारा मनोरथ श्रुतपञ्चमी तक नियम से पूर्ण होगा।'

मैंने कहा—'इतनी कथा क्यो करते हो ? क्या तुम अवधिज्ञानी हो ? इस कालमें इतने ज्ञानी नही देखे जाते। अथवा सभव है आपका निमित्तज्ञान ठीक भी हो क्योकि खुर्जाकि एक ज्योतिषीने हमसे जो कहा था वह यथार्थ हुआ। हम आपको कोटिश धन्यवाद देते है और इच्छा करते है कि आपके वाक्य सफलीभूत हो।' आगन्तुक महाशयने कहा—'धन्यवाद अपने पास रखो किन्तु विशुद्ध परिणामोसे पुरुषार्थ करो, सब कुछ होगा। अच्छा, हम जाते है।'

इतनेमे निद्रा भग हो गई, देखा तो कुछ नही। प्रात कालके ५ बजे होगे। हाथ-पैर धोकर श्री पार्श्वप्रभुकी स्मृतिके लिए बैठ गया और इसीमे सूर्योदय हो गया। पक्षिगण कलरव करने लगे, मनुष्य-गण जयध्वनि करते हुए मन्दिरमे आने लगे। मै भी स्नानादि क्रियासे निवृत्त हो श्री पार्श्वनाथ स्वामीके पूजनादि कार्य कर पञ्चायती मन्दिरमे वन्दनाके निमित्त चला गया। वहाँसे बाजार भ्रमण करता हुआ चला आया। भोजनादिसे निवृत्त होकर गगाजीके घाटपर चला गया। सहस्रो नर-नारी स्नान कर रहे थे जय गगे! जय विश्वनाथ!' के शब्दसे घाट गज रहा था। वहाँसे चलकर विश्वनाथजीके मन्दिरका दृश्य देखनेके लिए चला गया।

वहाँपर एक महानुभाव मिल गये—बोले 'कहाँ आये हो ?' मैने कहा—'विश्वनाथजीका मन्दिर देखने आया हूँ।' 'क्या देखा ? उन्होने कहा। मैने उत्तर दिया—'जो आपने देखा सो मैने देखा, देखना काम तो आँख का है। सबकी आँख देखनेका ही कार्य करती है। हाँ, आप महादेवके उपासक है—आपने देखनेके साथ मनमे यह विचार किया होगा कि हे प्रभो! मुझे सासारिक यातनाओ-से मुक्त करो। मै जैनी हूँ, अत यह भावना मेरे हृदयमे नही आयी, प्रत्युत यह स्मरण आया कि महादेव तो भगवान आदिदेव—नाभिनन्दन ऋषभदेव है जिन्होने स्वय आत्मकल्याण किया और जगतके प्राणियो-को कल्याणका मार्ग दर्शाया। इस मन्दिरमे जो मूर्ति है, उसकी आकृतिसे तो आत्म-शुद्धिका कुछ भी भाव नही होता। उन महाशयने कहा—'विशेष बात मत करो अन्यथा कोई पण्डा आ गया तो सर्वनाश हो जावेगा। यहाँसे शीघ्र ही चले जाओ।' मैने कहा—'अच्छा जाता हूँ।'

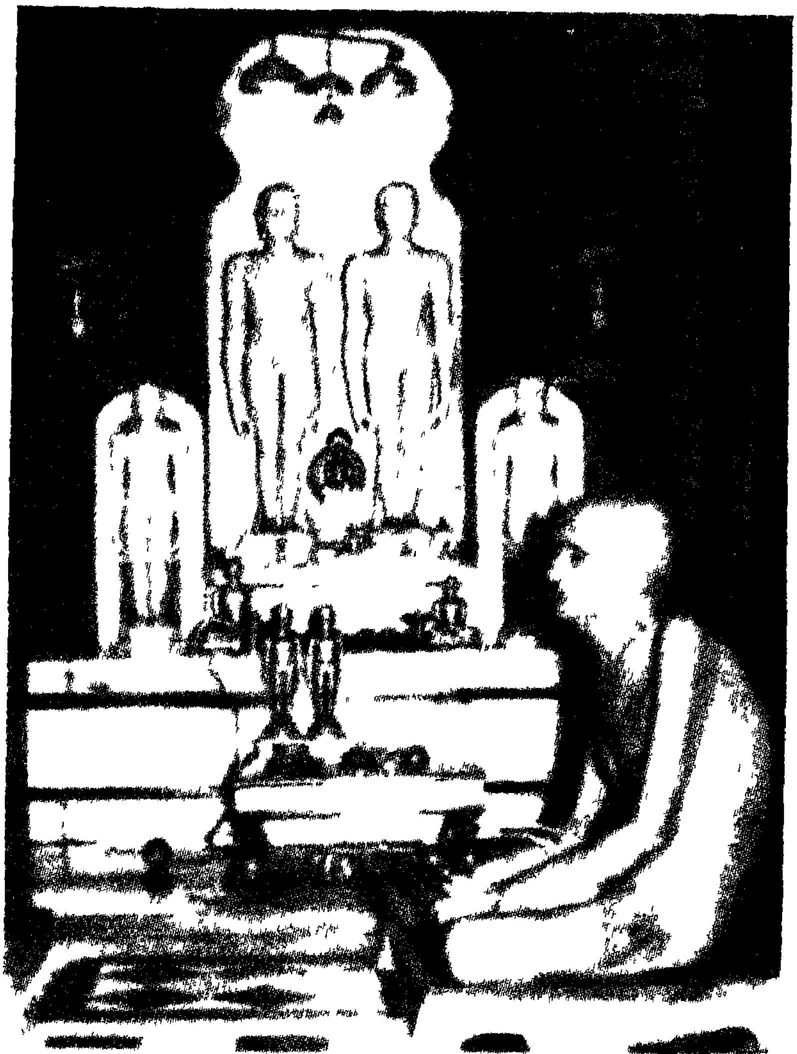
जाते-जाते मार्गमे एक श्वेताम्बर विद्यालय मिल गया, मै उसमे चला गया। वहाँ देखा कि अनेक छात्र सस्कृत अध्ययन कर रहे है, अनेक साधु, जिनके कि शरीर पर पीतवस्त्र थे, भी अध्ययन कर रहे है। साहित्य, न्याय तथा धर्मशास्त्र का अध्ययन हो रहा है। मैनेपाठशालाध्यक्ष श्री धर्मविजय सूरिको विनयके साथ प्रणाम किया। आपने पूछा—'कौन है ?' मैने कहा—'जैनी हूँ ?' उन्होने कहा—'किस धर्मके उपासक हो और यहाँ किस प्रयोजनसे आये हो ?'

मैने कहा—'दिगम्बर सम्प्रदायका माननेवाला हूँ। यहाँ अनायास ही आ गया—कोई उद्देश्य आनेका नही था। हाँ, बनारस इस उद्देश्यसे आया हूँ कि सस्कृतका अध्ययन करूँ।' उन्होने कहा—'कहाँ तक अध्ययन किया है ?' मैने कहा—'न्यायमध्यमाके प्रथम खण्डमे उत्तीर्ण हूँ और अब इसी विषय-का आगे अध्ययन करना चाहता हूँ। परन्तु यहाँ पर कोई पढानेको राजी नही। कल मैं एक नैयायिक महोदयके पास गया था। उन्होने पढाना स्वीकार भी कर लिया और कहा कि कलसे आना परन्तु जब उन्होने पूछा कि कौन ब्राह्मण हो ? तब मैने कहा—ब्राह्मण नही जैनधर्मानुयायी वैश्य हूँ। बस क्या था, जैनका नाम सुनते ही उन्होने मर्मभेदी शब्दोका प्रयोग कर अपने स्थानसे निकाल दिया। यही मेरी रामकथा है। आज इसी चिन्तामे भटकता-भटकता यहाँ आ गया हूँ।'

'बस, और कुछ कहना चाहते हो, नही तो हमारे साथ चलो, हम तुमको न्यायशास्त्रमे अद्वितीय व्युत्पन्न शास्त्रीके पास ले चलते है। वे हमारे यहाँ अध्यापक है।' मै श्री धर्मविजय सूरिके साथ श्री अम्बादासजी शास्त्रीके पास पहुँच गया। आप छात्रोको अध्यापन करा रहे थे। मैने बडी नम्रताके

दिवंगत —

श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी महाराज



श्री १०८ आचार्य शांति सागरजी महाराज

— समाधि में —

आचार्यश्री के समाधिमरणके बाद ३ मास तक 'निर्वेदकालमे उत्सव स्थगित रहा



स्व० पू० बाबा भागीरथजी वर्णी



स्व० ब्र० दीपचन्द्रजी वर्णी

साथ महाराजको प्रणाम किया। उन्होंने आशीर्वाद देते हुए बैठनेका आदेश दिया और मेरे आनेका कारण पूछा। मैंने जो कुछ वृत्तान्त था अक्षरश सुना दिया।

इसके अनन्तर श्रीयुत् शास्त्रीजी बोले—'क्या चाहते हो ?' मैंने कहा—'चाहनेसे क्या होता है ? मेरी तो चाह इतनी है कि सब विद्याओका पण्डित हो जाऊँ परन्तु भाग्य तो अनुकूल नही, दैवके अनुकूल हुए बिना हाथका ग्रास मुखमे जाना असभव हो जाता है।' श्री धर्मविजय सूरि महाराजने कहा कि तुम चिन्ता मत करो, यहाँ पर आओ और शास्त्रीजीसे अध्ययन करो, तुम्हे कोई रोक-टोक नही। मैंने कहा—'महाराज ! आपका कहना बहुत सतोषप्रद है परन्तु साथमे मेरा यह कहना है कि मैं दिगम्बर सम्प्रदायका हूँ, अत मेरी श्रद्धा निर्ग्रन्थ साधुमे है। आप साधु है। लोग आपको साधु मुनि कहते भी है पर मै जो वस्त्रधारी है उन्हे साधु नही मानता। क्योकि दिगबर सम्प्रदायमे एक लँगोटीमात्र परिग्रह होनेसे श्रावक सज्ञा हो जाती है, इत्यादि। अब आप ही बतलाइये, यदि मैंने आपके शिष्यवर्गकी तरह आपकी वन्दना न की तो आपके चित्तमे अनायास क्षोभ हो जावेगा और उस समय आपके मेरे प्रति क्या भाव होगे सो आप ही जान सकते ह। अत मै अध्ययनका सुअवसर मिलते हुए भी उसे खो रहा हूँ। आपके शिष्ट व्यवहारसे मेरी आपमे श्रद्धा है, आप महान् व्यक्ति हैं परन्तु चूकि जैन मतमें साधुका जैसा स्वरूप कहा है वैसा आपमे नही पाता अत श्रद्धा होते हुए भी साधु-श्रद्धा नही। अब मै आपको प्रणाम करता हूँ और अपने निवास-स्थानपर जाता हूँ।'

जानेकी चेष्टा कर ही रहा था कि इतनेमे श्री शास्त्रीजीने कहा कि अभी ठहरो, एक घण्टा बाद हम यहाँसे चलेगे तुम हमारे साथ चलना। मैंने कहा—'महाराज ! जो आज्ञा।'

शास्त्रीजी अध्ययन कराने लगे। मै आपकी पाठन-प्रणालीको देखकर मुग्ध हो गया। मनमे आया कि यदि ऐसे विद्वान्से न्यायशास्त्रका अध्ययन किया जावे तो अनायास ही महती व्युत्पत्ति हो जावे।

एक घण्टाके बाद श्री शास्त्रीजीके साथ पीछे-पीछे चलता हुआ उनके घर पहुँच गया। उन्होने बडे स्नेहके साथ बातचीत की और कहा कि तुम हमारे यहाँ आओ हम तुम्हे पढावेगे। उनके प्रेमसे ओत-प्रोत वचन श्रवण कर समस्त क्लेश एक साथ चला गया।

वहाँसे चलकर मदाकिनी आया। यहाँसे शास्त्रीजीका मकान दो मील पडता था। प्रतिदिन पैदल जानेमे कष्ट होता था, अत वहाँसे डेरा उठाकर श्री भदैनीके मन्दिरमे, जो अस्सीघाटके निकट है, चला आया। यहाँ पर श्री बद्रीदास पुजारी रहते थे जो बहुत ही उच्च प्रकृतिके जीव थे। उनके सहवासमे रहने लगा और एक पत्र श्री बाबाजीको डाल दिया। उस समय आप आगरामे रहते थे। बनारसके सब समाचार उसमे लिख दिये, साथ ही यह भी लिख दिया कि महाराज ! आपके शुभागमनसे सभी कार्य सम्पन्न होगा अत आप पत्र देखते ही चले आइये।

महाराज पत्र पाते ही बनारस आ गये।

-- -

स्याद्वाद महाविद्यालय की स्थापना

पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसादजी वर्णी

माघका महीना था, सर्दी खूब पडती थी। मै अपना भोजन स्वय बनाता था। बाबाजी और हम दोनो भोजनादिसे निवृत्त होकर २४ घण्टा यही चर्चा करते थे कि कौन से उपायोका अवलम्बन किया जावे जिससे काशीमे एक दिगम्बर विद्यालय स्थापित हो जावे।

इतनेमे ही बनारसमे अग्रवाल महासभाका जल्सा हुआ। राजघाटके स्टेशनके पास सभाका मण्डप लगा था। मैने बाबाजी से कहा—'महाराज! हम लोग भी सभा देखनेके लिए चले।' बाबाजीने सहर्ष चलना स्वीकृत किया। हम, बाबाजी तथा कामा जिला मथुराके श्री झम्मनलालजी—तीनो व्यक्ति एक साथ सभास्थान पर पहुँचे। सभाकी व्यवस्था देखकर बहुत ही प्रसन्नता हुई। अच्छे-अच्छे व्याख्यान श्रवणगोचर हुए। हम भी चार मिनट बोले।

जब हम लोग सभासे लौटे तब मार्गमे यही चर्चाका विषय था कि यहाँ दिगम्बर जैन विद्यालय कब स्थापित होगा। इसे सुनकर झम्मनलालजी कामावालोने एक रुपया विद्यालयकी सहायताके लिए दिया। मैने बडी प्रसन्नता से वह रुपया ले लिया। बाबाजीने कहा—'भाई! एक रुपयासे क्या होगा?' मैने कहा—'महाराज! आपका आशीर्वाद ही सब कुछ करेगा। जगसे बीजसे ही तो वटका महान् वृक्ष हो जाता है जिसके तलमे हजारो नर-नारी, पशु-पक्षिगण आश्रय पाते है। कौन जाने, वीर प्रभुने यह एक रुपया ही जैन विद्यालयके उत्थानका मूल कारण देखा हो! मैने श्री झम्मनलालको सहस्रो धन्यवाद दिये और मार्गमे ही पोस्टआफिससे ६४ पोस्टकार्ड ले लिए। यह स्मरण आया कि—

'अवश्य भाविनो भावा भवन्ति महतामपि।
नग्नत्व नीलकण्ठस्य महाहिशयन हरे॥'

यही निश्चय किया, जो होनेवाला है वह अवश्य होगा। बडे हर्षके साथ निवासस्थानपर आये।

सायकाल हो गया, जलपान कर छतके ऊपर श्री पार्श्वप्रभुके मन्दिरमे दर्शन किये और वही गङ्गाजीके सम्मुख सामायिक की। मनमे यह भाव आया कि हे प्रभो! क्या आपके ज्ञानमे काशी नगरीमे हम लोगोका साक्षर होना नही देखा गया? अन्तरात्मासे उत्तर मिलता है कि 'नही शब्दको मिटा दो। अवश्य ही तुम लोगोके लिए इसी स्थानपर विद्याका ऐसा आयतन होगा जिसमे उच्च कोटिके विद्वान बनकर धर्मका प्रसार करेगे। जाओ, आज से ही पुरुषार्थ करनेकी चेष्टा करो।'

क्या करे! मनमे प्रश्न हुआ। अन्तरात्माने यही उत्तर दिया कि खरीदे हुए पोस्टकार्डोका उपयोग करो। वहाँसे आकर रात्रिको ही ६४ पोस्टकार्ड लिखकर ६४ स्थानोपर भेज दिये। उनमे यह लिखा था—

"वाराणसी-जैसी विशाल नगरीमे जहाँ हजारो छात्र सस्कृत विद्याका अध्ययन कर अपने अज्ञानान्धकारका नाश कर रहे हो वहाँपर हम जैन छात्रोको पढनेकी सुविधा न हो। जहाँपर छात्रोको भोजन

प्रदान करनेके लिए सैकडो भोजनालय विद्यमान हो वहाँ अधिककी बात जाने दो, पाँच जैन छात्रोके लिए भी निर्वाह योग्य स्थान न हो । जहाँपर श्वेताम्बर समाजका यशोविजय विद्यालय है जिसके भव्य भवनको देखकर चकाचौध आ जाती है, जहाँ पर २० साधु और १० छात्र श्वेताम्बर जैन साहित्यका अध्ययन कर अपने धर्मका प्रकाश कर रहे है, यह सब श्री धर्मविजय सूरिके पुरुषार्थका फल है। क्या हमारी दिगम्बर-समाज १० या २० छात्रो के अध्ययनका प्रबन्ध न कर सकेगी ? आशा है, आप लोग हमारी वेदनाका प्रतिकार करेगे । यह मेरी एक की ही वेदना नही है किन्तु अखिल समाजके छात्रोकी वेदना है । यद्यपि महाविद्यालय मथुरा, महापाठशाला जयपुर, तथा सेठ मेवारामजीका खुर्जाका विद्यालय आदि स्थानोपर संस्कृतके पठन-पाठनका सुभीता है तथापि यह स्थान जितना भव्य और संस्कृत पढनेके लिए उपयुक्त है वैसा अन्य स्थान नही है । आशा है, हमारी नम्र प्रार्थना पर आप लोगोका ध्यान अवश्य जायगा," इत्यादि ।

एक मासके भीतर बहुतसे महानुभावोके आशाजनक उत्तर आ गये, साथ ही १००) मासिक सहायताके भी वचन मिल गये । हम लोगोके हर्षका ठिकाना न रहा, मारे हर्षके हृदयकमल फूल गये । तब श्रीमान् गुरु पन्नालालजी बाकलीवालको भी एक पत्र इस आशयका लिखा कि यदि आप आकर इस कार्यमें सहायता करे तो यह कार्य अनायास हो सकता है । १० दिनके बाद आपका भी शुभागमन हो गया । आपके पधारते ही हमारे हृदयकी प्रसन्नताका पारावार न रहा । रात्रि-दिन इस विषयकी चर्चा और इसी विषयका आन्दोलन प्रायः समस्त दिगम्बर जैन पत्रोमे कर दिया कि काशीमे एक जैन विद्यालयकी महती आवश्यकता है ।

कितने ही स्थानोसे इस आशयके पत्र आये कि आप लोगोने यह क्या आन्दोलन मचा रक्खा है । काशी जैसे स्थानमे दिगम्बर जैन विद्यालयका होना अत्यन्त कठिन है । जहाँपर कोई सहायक नही, जैन मतके प्रेमी विद्वान् नही, वहा क्या आप लोग हमारी प्रतिष्ठा भग करायेगे । परन्तु हम लोग अपने प्रयत्नसे विचलित नही हुए ।

श्रीमान् स्वर्गीय बाबू देवकुमारजी रईस आराको भी एक पत्र इस आशयका दिया कि 'आपकी अनुकम्पासे यह कार्य अनायास हो सकता है । आप चाहे तो स्वय एक विद्यालय खोल सकते है । भदैनी घाटपर गङ्गाजीके किनारे आपके जो विशाल मन्दिर है उन्हे देखकर आपके पूर्वजोके विशाल द्रव्य तथा भावोकी विशदताका स्मरण होता है । उनमे ५० छात्र सानन्द अध्ययन कर सकते है, ऊपर रसोईघर भी है। आशा है, आपका विशाल हृदय हमारी प्रार्थना पर अवश्य साक्षी होगा कि यह कार्य अवश्य करणीय है ।' आठ दिनके बाद ही उत्तर आ गया कि चिन्ता मत करो, श्री पार्श्वप्रभुके चरणप्रसादसे सब होगा ।

एक पत्र श्रीमान् स्वर्गीय सेठ माणिकचन्द्रजी, जे० पी० बम्बईको भी लिखा कि जैन धर्मका मर्म जाननेके लिए संस्कृत विद्याकी महती आवश्यकता है । इस विद्याके लिए बनारस-जैसा स्थान अन्यत्र उपयुक्त नही । इस समय आप ही एक ऐसे महापुरुष है जो यथाशक्ति धर्मकी उन्नति करनेमे दत्त-चित्त है । आप तीर्थक्षेत्रो तथा छात्रावासोकी व्यवस्था कर दिगम्बरोका महोपकार कर रहे है । एक कार्य यह भी करनेमे अग्रसर हूजिये । मेरी इच्छा है कि इस विद्यालयका उद्घाटन आपके ही कर कमलोसे हो । आशा है नम्र प्रार्थनाकी अवहेलना न होगी । बनारस समाजके गण्यमान्य बाबू छेदीलालजी, श्री

स्वर्गीय बाबू बनारसीदासजी जौहरी आदि सब समाज, सब तरहसे सहायता करनेके लिए प्रयत्नशील है। केवल आपके शुभागमन की महती आवश्यकता है।'

आठ दिन बाद सेठजीका पत्र आ गया कि हम उद्घाटनके समय अवश्य काशी आवेंगे। इतनेमें एक पत्र बरुआसागरसे बाईजीका आया कि 'भैया! पत्र देखते ही शीघ्र चले आओ। यहाँपर श्री सर्राफ मूलचन्द्रजी सख्त बीमार है, पत्रका तार जानो।' हम तीनों अर्थात् मैं, गुरुजी और बाबाजी मेल ट्रेनमें बैठकर बरुआसागरको चल दिये। दूसरे दिन बरुआसागर पहुँच भी गये। श्री सर्राफजीकी अवस्था रोगसे ग्रसित थी किन्तु श्रीजीके प्रसादसे उन्होंने स्वास्थ्यलाभ कर लिया। हमने कहा—'सर्राफजी! हम लोगोंका विचार है कि बनारसमें एक दिगम्बर जैन विद्यालय खोला जावे जिससे जैनियोंमें प्राचीन साहित्यका प्रचार हो।' आपने कहा—'उत्तम कार्य है। २०००) गजरशाही जिनके १५०० कलदार होते हैं हम देंगे।' हम लोग बहुत ही प्रसन्न हुये।

यहाँसे ललितपुर व बमराना जहा कि श्री ब्रजलाल-चन्द्रभान-लक्ष्मीचन्द्रजी सेठ रहते थे,गये और अपनी बात उनके सामने रक्खी। उन्होंने भी सहानुभति दिखलायी। ललितपुर-निवासी सेठ मथुरादास-जीने अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट की और यहाँतक कहा कि यदि जैसा मेरा नाम है वैसा धनी होता तो आपको अन्यत्र भिक्षा माँगनेकी अभिलाषा नहीं रहती। उनके उद्गारोंको श्रवण कर हमारा साहस दृढ़तम हो गया।

अब यही विचार हुआ कि बनारस चलें और इसके खुलनेका मुहूर्त निकलवावें। दो दिन बाद बनारस पहुँच गये और पञ्चाङ्गमें मुहूर्त देखने लगे। अन्त में यही निश्चय किया कि ज्येष्ठ सुदी पञ्चमी-को स्याद्वाद विद्यालयका उद्घाटन किया जावे। कुङ्कुम-पत्रिका बनाई और लाल रंगमें छपवाकर सर्वत्र वितरण कर दी।

बनारसके गण्यमान्य महाशयोंका पूर्ण सहयोग था। श्रीमान् रायसाहब नानकचन्द्रजीकी पूर्ण सहानुभूति थी। ज्यों-ज्यों मुहूर्त निकट आया, अनुकूल कारण कूट मिलते गये। महरौनीसे श्रीयुत वंशी-धरजी, श्रीयुत गोविन्दरायजी तथा एक और छात्रके आनेकी सूचना आ गई। बम्बईसे सेठजी साहबके आनेका तार आ गया। आरासे बाबू देवकुमारजी का भी पत्र आ गया। देहलीसे श्रीमान् लाला मोतीलाल-जीका तार आ गया कि हम आते हैं तथा श्रीमान् एडवोकेट अजितप्रसादजीकी भी सूचना आ गई कि हम आते हैं। जेठ सुदि ४ के दिन ये सब नेतागण आ गये और मैदागिन में ठहर गये।

पञ्चमीको प्रातःकाल विद्यालयका उद्घाटन होना है। 'पण्डितोंका क्या प्रबन्ध है?' उपस्थित लोगोंने पूछा। मैंने कहा—'मैं श्री शास्त्री अम्बादासजीसे न्यायशास्त्र अध्ययन करता हूँ। १५) मासिक स्कालरशिप मुझे बम्बईसे श्री सेठजीके पाससे मिलती है। वही उनके चरणोंमें अर्पित कर देता हूँ। अब २५) मासिक उन्हें देना चाहिये, वे ३ घण्टाको आ जावेंगे।' सबने स्वीकार किया। 'एक अध्यापक व्याकरणका भी चाहिए?' मैंने कहा—'शास्त्रीजीसे जाकर कहता हूँ।' 'अच्छा, शीघ्रता करो।' सबने कहा। मैं शास्त्रीजीके पास गया। २०) मासिक पर एक व्याकरणाचार्य और इतने पर ही एक साहित्याध्यापक भी मिल गया। सुपरिण्टेण्डेण्ट पदके लिए वर्णी दीपचन्दजी नियत हुये। एक रसोइया,

एक ढीमर, एक चपरासी इस तरह तीन कर्मचारी, तीन पडित, एक सुपरिण्टेण्डेण्ट इस प्रकार व्यवस्था ई। उस समय मझे मिलाकर केवल चार छात्र थे।

जेठ सुदि ५ को बडे समारोहके साथ विद्यालयका उद्घाटन हुआ। २५) मासिक श्रीमान् सेठ माणिकचन्द्रजी बम्बईने और इतना ही बाबू देवकुमारजी आराने देना स्वीकृत किया। इसी प्रकार बहुत-सा स्थायी द्रव्य तथा मासिक सहायता बनारसवाले पञ्चोंने दी जिसका विवरण विद्यालयकी रिपोर्टमे है। इस तरह यह महाकार्य श्री पार्श्वनाथके चरणप्रसादसे अल्प ही समयमे सपन्न हो गया।

जेठ सुदि ५ वीरनिर्वाण स० २४३१ और विक्रम स० १९६२ के दिन प्रातःकाल श्री भैदागिनमे सर्वप्रथम श्री पार्श्वनाथ स्वामीका पूजन-कार्य सम्पन्न हुआ। अनन्तर गाज-बाजके साथ श्री स्याद्वाद विद्यालयका उद्घाटन श्रीमान् सेठ माणिकचन्द्रजीके कर-कमलो द्वारा सम्पन्न हुआ। आपने अपने व्याख्यानमे यह दर्शाया——

'भारत धर्म-प्रधान देश है। इसमें अहिसा धर्मकी ही प्रधानता रही, क्योंकि यह एक ऐसा अनुपम अलौकिक धर्म है जो प्राणियोको अनन्त यातनाओंसे मुक्त कर देता है। चूकि इसका साहित्य संस्कृत और प्राकृत में है, अत इस बातकी महती आवश्यकता है कि हम अपने बालकोको इस विद्याका मार्मिक विद्वान् बनानेका प्रयत्न करें। आज ससारमे जो जैन धर्मका ह्रास हो रहा है उसका मूल कारण यही है कि हमारी समाजमे संस्कृत और प्राकृतके विद्वान् नही रहे। आज विद्वानोके न होनेसे जैन धर्मका प्रचार एकदम रुक गया है। लोग यहाँ तक कहने लगे हैं कि यह तो एक वैश्य जातिका धर्म है। पूर्ण वैश्य जातिका नही, इने-गिने वैश्योका है। अत हमे आवश्यकता इस बात की है कि हम उस धर्मके प्रसारके लिए मार्मिक पडित बनानेका प्रयत्न करें। एतदर्थ ही आज मेरे द्वारा इस विद्यालयका उद्घाटन हो रहा है। मैं अपनेको महान् पुण्यशाली समझ रहा हूँ कि मेरे द्वारा इस महान् कार्यकी नीव रखी जा रही है। यद्यपि मेरा यह पक्ष था कि एक ऐसा छात्रावास खोला जाय जिसमे अग्रेजीके छात्रोके साथ-साथ संस्कृतके भी छात्र रहते परन्तु श्रीमान् देवकुमारजी रईस आरा और बाबू छेदीलालजी रईस बनारस ने कहा कि यह सर्वथा अनुचित है, छात्रावासमे विशेष लाभ न होगा। अत मैंने अपना पक्ष छोड इसी पक्षका समर्थन किया और जहाँ तक मझसे बनेगा इस कार्यमे पूर्ण प्रयत्न करूँगा।'

———

ममता की धारा वह निकली
पड़ गये जहाँ ये सबल चरण

१

जब मानव मूछित हुआ,
चल गया जटिल अविद्या का टोना।
तुम "ज्ञान सूर्य" बन उगे
प्रकाशित हुआ देश का हर कोना॥

२

कोई तो नगर नही छोडा,
जिसमे न एक विद्यालय हो—
कर रहे सहस्रो ज्ञान लाभ,
कहते श्री वर्णी की जय हो ।।

३

जब अहकार वश मानव ने,
मानव को दर से दुतकारा,
समता के मौन-प्रचारक का,
तब तुमने जीवन व्रत धारा ।।

४

हम मोह लोभ से ग्रसित हुए,
तुम लख कर करुणा से कॉपे,
पथ बतलाने हित ग्राम, ग्राम
तुमने इन चरणो से नापे ।।

५

नप गए नगर नप गई डगर
नप गया देश का छोर-छोर,
पड गये जिधर ये सदय-चरण
हो गई धरा भी सुख-विभोर,

६

ममता की धारा बह निकली,
पड गए जहाँ ये सबल चरण ।
मानव-मानव का भेद मिटा
औ' अशरण को मिल गई शरण ।।

७

तुम पारस-प्रभु के चरणो मे,
अब करने काल व्यतीत चले ।
ममता के बन्धन तोड चले,
औ' मोह मल्ल को जीत चले ।।

८

जाओ सु-पथ के पथिक
सुगमता सहित लक्ष्य हो प्राप्त तुम्हे,
हो शीत-घाम या शूल-धूल की,
बाधा तनिक न व्याप्त तुम्हे ।।

९

तुम सुख-पूर्वक दर्शन पाओ,
पारस प्रभु शरण-सहाई का,
हर समय तुम्हारे साथ रहे,
वरदान चिरोजाबाई का ।।

१०

पारस प्रभु के दर्शन पाकर
बाबा जी फिर दर्शन देना ।
हम ऑखे बिछा रखेगे प्रभु
हृतल को शीतल कर देना ।।

११

तुम बढो उमडती ऑखो मे,
ऑसू की धारा मत देखो,
देखो प्रकाश की ओर
मोह का यह अँधियारा मत देखो ।।

१२

जब तुम ही माने नही,
मानता कैसे यह मन अज्ञानी,
जब ममता योगी ही न रुका,
क्या रुकता ऑखो का पानी ।।

१३

तुम कही रहो बस शान्ति सहित
बुन्देलखण्ड के लाल जिओ,
हो साल हजारो मासो का,
ओ' तुम ऐसे सौ साल जिओ ।।

—नीरज जैन

सुषमा प्रेस, सतना—

पूज्य श्री १०५ क्षु० गणेशप्रसादजी वर्णी



स्याद्वाद विद्यालयके संस्थापक

पं० गणेश प्रसाद

भारत-भाग्य-विधाताओके आद्य जीवनपर दृष्टि जाते ही वे सब 'चाँदीके चम्मच'से दूध पीते नजर आते हैं। अर्थात् उनके जीवन-निर्माणके साधन माता-पिता आदिने सुलभ कर रखे थे। फलत उन्हे 'भूसुत' अथवा जनसाधारणसे उठा व्यक्ति नही कहा जा सकता है। किन्तु स्याद्वाद विद्यालयके सस्थापक आध्यात्मिक सन्त सर्वथा भूसुत हैं। वि० स० १९३१ (१८७४ई०) मे झाँसी जिलेके मडावरा परगनेके हँसेरा ग्रामके निवासी श्री हीरालाल असाठीके घर एक पुत्र जन्मा और उसका नामकरण गणेश-प्रसाद हुआ था। माता-पितकी आर्थिक स्थिति ऐसी थी कि ६ वर्षके शिशुको लेकर आजीविकार्जन हेतु उन्हे मडावरा आकर बसना पडा। उच्च शिक्षाकी तो बात ही क्या है, प्रारम्भिक शिक्षा भी साबाध रही। किसी प्रकार हिन्दी मिडिल पास करके ही प्रारम्भिक पाठशालामे अध्यापकी करनी पडी।

एक ही जीवनमे साधारणसे असाधारण कैसे बना जा सकता है इसका निदर्शन देखना हो तो वर्णीजीको देखे। जन्मना वैष्णव होनेके कारण बालक गणेशप्रसाद प्रतिदिन वैष्णव-मन्दिर जाकर भी घरके सामनेके जैनमन्दिरके विधि-विधानोपर दृष्टि रखते हैं। और अपने शिशु-दुर्लभ विवेकके बलपर १० वर्षके वयमे वस्त्रपूत जल पीने तथा दिवाहारका व्रत ले लेते है। सवत् १८८५ मे यज्ञोपवीतके समय पुरोहित द्वारा "किसीको यह मत्र मत बताना" कहे जानेपर "आप ही तो सैकडोको जनेऊके समय बता चुके है" उत्तर देकर उसे अवाक् और समस्त लोगोको चकित कर देते हैं। राजकुमार गौतमके समान १८ वर्षकी वय होनेपर माता-पिता विवाह द्वारा गणेशप्रसादको ससारोन्मुख करना चाहते हैं, किन्तु शिष्योको साक्षर करते हुए उन्हे अपनी निरक्षरताका ऐसा भीषण आभास मिल गया था कि वे घर छोड देते है। धर्म और समाजके नामपर प्रचलित रूढियोने युवक गणेशप्रसादके हृदयमे धर्मके ज्ञानकी ऐसी उत्कट इच्छा उत्पन्न की कि वे सस्कृत पढनेके लिए बम्बई, जयपुर, खुरजा, मथुरा आदि नगरोको सब प्रकारके कष्ट उठाते हुए जाते है। हजारो मील पैदल चलते है। तथापि ज्ञान-पिपासा शान्त न हुई तो सवत् १९६१ मे काशी पहुँचते है।

तत्कालीन प्रसिद्ध नैयायिक द्वारा अपमानित होनेपर भी निराश नही होते है। गुरुकी खोजमे घूमते ही रहते हैं। और अन्तमे स्याद्वाद पाठशाला (महाविद्यालय) की स्थापना करके स्वय ही विद्वान् नही बनते है, अपितु भावी पीढीके लिए ज्ञानगगा बहा देते है। और समाज तथा देशके वातावरणमे दासताके साथ आयी सकीर्णताकी किलेबन्दीमे मधुर ढगसे दरारे डालकर उदारताका मार्ग प्रशस्त कर देते है।

अपनी निरीह और कष्ट-सहिष्णु वृत्तिके बलपर गणेशप्रसादजीने बालविधवा स्व० सिघैन चिरोंजाबाईजीको धर्ममाताके रूपमे पाया और उनकी लाखोकी सम्पत्ति सुलभ हो जानेपर भी वे उससे दूर ही रहे। इतना ही नही, प० गणेशप्रसाद न्यायाचार्य होते ही त्यागकी ओर कदम बढाते है और आजीवन ब्रह्मचर्यकी विधिवत् दीक्षा भी ले लेते हैं। नागरिक क्षेत्र सुलभ होनेपर भी गणेश वर्णी ग्रामोको

अपना कार्यक्षेत्र बनाते है और सैकडो ग्रामोमे पाठशालाएँ स्थापित करा देते है। स्थानीय लोग सस्थाके अधिकारी बननेके लिए अनुनय-विनय करते है, पर वर्णीजी निर्लिप्त ही रहते है और स्थानीय लोगोको अधिकारी बनाकर कार्यकर्ताओकी सेना खडी कर देते है।

वर्णीजीके दयालुता, निर्लोभिता, दृढता आदि गुणोकी अपेक्षा उनकी अजातशत्रुता लोकोत्तर है। पूरे जीवन सघर्ष करके भी इन महामानवने किसीके प्रति द्वेषभाव अपने मनमे कैसे नही आने दिया ? यह एक रहस्य है। 'दोषमे घृणा करो, दोषीसे नही' इसका कार्यरूप देखना है तो वर्णीजीके पास रहो। देश-धर्म-जाति-वर्ग आदिके भेदभाव इनके पास भी नही फटके है। 'हित मनोहारि च दुर्लभ वच' के नीति कारने सभवत वर्णीजी ऐसे व्यक्तिकी कल्पना न की होगी। इनका आदर्श 'सत्य ब्रूयात्प्रिय ब्रूयात न चेन्मौनमनुव्रजेत्' ही है। किन्तु इसका यह तात्पर्य नही कि मूल मान्यताओपर प्रहार होनेपर भी वर्णी जी चुप रहते है। उस समय ही तो उनकी दृढता और तेजके दर्शन होते है। विशेषता यही है कि जिसका प्रतिवाद या विरोध करते है उसके भी सुधारके लिए उनका अन्तरग व्याकुल रहता है।

भारतीय सस्कृति ऋषियोकी देन है यह वर्णीजीको देखकर भली भाँति समझमे आ जाता है आजीवन सेवकोके जीवनमे त्याग तथा आत्मानुप्रेक्षण न होनेसे वे अपने आदर्शसे च्युत हो जाते है। किन्तु जो व्यक्ति घर, द्वार पात्र, वस्त्र भी नही रखता है, भोजनमे भी उदासीन है और ज्ञानके साधन पुस्तको-का भी भण्डार नही जोडता उसके शिथिल या भ्रष्ट होनेकी सभावना भी नही है। यही कारण है कि राष्ट्रपिता गाधीजीने ऐसे नेतृत्वका राजनीतिमे भी प्रयोग किया था और वे सर्वथा सफल रहे। किन्तु उनके आदर्शोको उनके ही उत्तराधिकारियोने ताकपर रख दिया है। फलत शासको और सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओके प्रति लोकमे अनास्था उत्पन्न हो गयी है। किन्तु वर्णीजी ८० वर्षके वयमे भी अपने त्याग और सेवामय जीवन द्वारा हमे बता रहे है कि मानवके उद्धारका मार्ग आत्मविद्या और परोपकार है, कोरा विज्ञान (साइन्स) तथा सुख-सामग्रीका सवर्द्धन नही है।

पूज्य बाबा भागीरथजी वर्णी –

बाबाजीका जन्म स० १९२५ मे मथुरा जिलेके पण्डापुर नामक ग्राम मे हुआ था। आपके पिता-का नाम बलदेवदास और माताका मानकौर था। तीन वर्षकी अवस्थामे पिताका और ग्यारह वर्षकी अवस्थामे माताका स्वर्गवास हो गया था। आपके माता-पिता गरीब थे इस कारण आपको शिक्षा प्राप्त करनेका कोई साधन उपलब्ध न हो सका। आपके माता-पिता वैष्णव थे। अत आप उसी धर्मके अनुसार प्रात काल स्नान कर यमुना-किनारे राम-राम जपा करते थे और गीली धोती पहने हुए घर आते थे। जब आप चौदह वर्षके हो गये, तब आजीविकाके निमित्त दिल्ली आये। दिल्लीमे किसीसे कोई परिचय न होनेके कारण मकान की चिनाईके कार्यमे ईंटोको उठाकर राजोको देनेका कार्य करने लगे। उसमे जब ५-६ रुपये पैदा कर लिए तब उसे छोडकर तौलिया रूमाल आदि को बचना शुरू कर दिया। उस समय आपका जैनियोसे बडा द्वेष था। बाबाजी जैनियोके मुहल्लेमे ही रहते थे और प्रति-दिन जैन मदिरके सामनेसे आया-जाया करते थे। उस रास्ते जाते हुए आपको देखकर एक सज्जनने कहा कि तुम थोडे समयके लिए मेरी दुकान पर आ जाया करो। मै तुम्हे लिखना-पढना सिखा दूँगा।' तबसे

आप उनकी दुकानपर नित्य प्रति जाने लगे। इस ओर लगन होनेसे आपने शीघ्र ही लिखने-पढनेका अभ्यास कर लिया।

एक दिन आप यमुना-स्नानके लिए जा रहे थे कि जैनमदिरके सामनेसे निकले। वहाँ 'पद्मपुराण' का प्रवचन हो रहा था। रास्तेमे आपने उसे सुना, सुनकर आपको उससे बडा प्रेम हो गया और आपने उन्ही सज्जनकी मार्फत 'पद्मपुराण' का अध्ययन किया। इसका अध्ययन करते ही आपकी दृष्टिमे सहसा नया परिवर्तन हो गया और जैनधर्मपर दृढ श्रद्धा हो गई। अब आप रोज मदिर जाने लगे तथा पूजन-स्वाध्याय नियमसे करने लगे। इन कार्योमे आपको इतना रस आया कि कुछ दिन पश्चात् आप अपना धन्धा छोडकर त्यागी बन गये, और आपने बालब्रह्मचारी रहकर विद्याभ्यास करनेका विचार किया। विद्याभ्यास करनेके लिए आप जयपुर और खुर्जा गये। उस समय आपकी उम्र पच्चीस वर्ष की हो चुकी थी। खुर्जामे अनायास ही पूज्य प० गणेशप्रसादजी का समागम हो गया। फिर तो आप अपने अभ्यासको और भी लगन तथा दृढताके साथ सपन्न करने लगे। कुछ समय धर्मशिक्षाको प्राप्त करनेके लिए दोनो ही आगरेमे प० बलदेवदासजीके पास गये और पूज्यपादकी सर्वार्थसिद्धिका पाठ प्रारम्भ हुआ। पश्चात् प० गणेशप्रसादजीकी इच्छा अजैन न्यायके पढनेकी हुई, तब आप दोनो बनारस गये और वहाँ भदैनी की धर्मशालामे ठहरे।

न्यायग्रन्थोको लेकर प० जीवनाथ शास्त्रीके मकानपर ये भी गये थे। सामने चौकीपर पुस्तके और १ रुपया गुरुदक्षिणा-स्वरूप रख दिया तब शास्त्रीजीने कहा—'आज दिन ठीक नही है, कल ठीक है।" दूसरे दिन पुन निश्चित समयपर उक्त शास्त्रीजीके पास पहुँचे। शास्त्रीजी अपने स्थानसे पाठस्थानपर आये और आसन पर बैठते ही पुस्तके और रुपया उठाकर फेंक दिया और कहने लगे कि "मैं ऐसी पुस्तकोका स्पर्श तक नही करता।" इस घटनाने बाबाजीको समस्त सामाजिक विषमताओका हिमशीतल शत्रु बना दिया। विद्यालयकी स्थापना तथा सचालनमे बाबाजी वर्णीजीके दक्षिण हस्त रहे, यह सर्वविदित है। इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बाबाजीका वह शान्त सघर्ष था जो इन निर्भीक तपस्वीने अकेले ही तत्कालीन रूढिपालक समाज-नेताओसे सफलतापूर्वक किया था और उपेक्षित भाइयोको धार्मिक तथा सामाजिक अधिकार दिलाये थे।

बाबा भागीरथजीके समान उग्र तपस्वी और शान्त साधक समाजमे कितने हुए है ? जीवनका उत्तरार्ध बिना नमकके ही नही केवल खिचडी और वह भी दिनमे एक बार ऊनोदर रूपसे खाकर बिता दिया। उनका कहना था ब्रह्मचर्यका पालन जिह्वा-निग्रह बिना कुकल्पना है क्योकि "घास-फूस जो चरत है उन्हे सतावे काम। लड्डू पूरी जो चरे उनकी जाने राम॥" अपरिग्रही ऐसे थे कि तीसरी लँगोटी भी उनके पास नही रह सकती थी। और तो और, जिस पुस्तकका स्वाध्याय जहाँ समाप्त हुआ उसे वही रहना पडता था। क्या मजाल है कि यह प्रशस्त परिग्रह भी उनके पास एक फालतू दिन रह ले।

धन्य थे वे पुण्यश्लोक जिनके वज्रसे भी कठोर और कुसुमसे भी कोमल शासनकी लोकोत्तर परम्पराने स्याद्वाद विद्यालयको आदर्श गुरुकुल बना दिया।

विद्यासागर प० पन्नालालजी वाकलीवाल—

किसी एकान्तमे खिले फूलके समान ही प० पन्नालालजी वाकलीवालकी सुकृति-सुगन्धके समाजने दो-चार झोके ही जाने है। यह यशस्वी व्यक्तित्व किस कुल-विटप पर कब खिला, कब मुरझाया और किस थालेमे चू गया यह समाजने जाननेका प्रयत्न नही किया और उन युगपुरुषको स्वय बतानेके लिए समय ही कहाँ था ?

देव-शास्त्र-गुरुके कलेवरोके उपासक परम्परागत जैन शास्त्रोकी हस्तलिखित प्रतियोपर अर्घ्य चढाते थे और सोचते थे कि इनके दर्शन मात्रमे आत्मज्योति जग जायगी। प० वाकलीवालजीको इस भोलेपनपर रुलाई आयी और शास्त्रोके छापने का सक्रिय आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया। हिन्दीके प्रमुख प्रकाशक हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालयका प्रारम्भ ही प०वाकलीवालजीने जैन-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय-के रूपसे नही किया था अपितु उसके यशस्वी, मूक सेवक, स्वामी प०नाथूराम प्रेमीका इस क्षेत्रमे लाना भी उन्हीका काम था, जैसा कि 'जिनके अनुग्रह और उत्साह-दानमे मेरी लेखन-कलाकी ओर प्रवत्ति हुई और जिनका आश्रय मेरे लिए कल्पवृक्ष हुआ, उन गुरुवर प० पन्नालालजी वाकलीवालके कर-कमलोमे सादर सर्मपित" प्रेमीजीके इस उद्धरणसे स्पष्ट है। पूज्य ग्रन्थ छापाखानेमे जाकर पैरोके नीचे डाले जायँगे, जिनवाणीकी भयकर अविनय होगी, आदि नारोके द्वारा पडितजीका विरोध हुआ पर उनके स्थिर पग बढते ही गये। 'जैन हितैषी' का प्रारम्भ हुआ। जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी सस्थाका उदय हुआ। 'वगीय अहिसा परिषद' को जन्म दिया और सराकोको श्रावक बनानेके लिए ही नही बगाली विद्वानोका भी मातृ-भाषा द्वारा जैन शास्त्रोमे भिज्ञ करनेके लिए बगला "जिनवाणी" का सूत्रपात हुआ। विवादसे दूर पडितजीने दर्जनो प्राचीन ग्रन्थो और कोडियो नूतन ग्रन्थोका प्रकाशन करके तथा करवाके भारतीके भडारको भर दिया। ऐसा था वह उदात्त अज्ञात व्यक्तित्व।

सस्कृति और समाजके लिए जहाँसे पुकार आयी पडितजी वही पहुँचते थे। फलत वी० नि० २४३१ मे जब स्याद्वाद विद्यालय की स्थापना हुई तब उसपर भी पडितजीका वरद हस्त होना अनिवार्य था। इनकी उपस्थिति और सहयोगने स्याद्वाद विद्यालयके सचालन और सचालकोमे समाजकी आस्थाको उत्पन्न किया तो क्या आश्चर्य ? क्योकि पडितजी अवैतनिक समाज-सेवकोके परमादर्श थे जैसा कि एक ताव कागज माँगनेवाले छात्रको दत्त निम्न सम्बोधन से स्पष्ट है—

"एक कागज दीजिये न, किताबो पर चढाऊगा ?"
"एक कागजकी कीमत दो पैसे है। पैसे देकर ले सकते हो।"
"यो ही दे दीजिये न, बहुत-से तो है ?"
"मै इनका मालिक नही, मै तो बिना पैसेका नौकर हूँ।"
"तो मालिक कौन है ? उनसे कहकर दिलवा दीजिये न ?"
"मालिक तो सारा जैन-समाज है—हम-तुम सभी मालिक है, पर लेनेके लिए नही, देनेके लिए।"



पं० गणेशप्रसादजी (वर्णी)
(विद्यालयकी स्थापनाके समय का रूप)



पं० अम्बादासजी शास्त्री, आदि गुरु



स्व० सेठ माणिकचन्दजी, जे० पी०, मुम्बई



स्व० बाबू देवकुमारजी, रईस, आरा

दानवीर सेठ माणिकचन्द्रजी, जे० पी०—

दानवीर सेठ माणिकचन्द्रजीका ६३ (वि० स० १९०८ से १९७१ तक) वर्षका जीवन ही एक प्रकारसे सार्वजनिक सेवाकी कथा है। इन्हे दि० जैन समाजके आधुनिक युगका प्रवर्तक कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। सेठ साहब साधारण साक्षर और सम्पत्तिशाली होकर भी ज्ञानसरिताके उद्गम और दानवीर कैसे बन सके? यह महान् आश्चर्यजनक तथ्य है। उनकी भवान्तरकी साधनाका ही यह सुपरिणाम था कि उन्होंने देश और कालको पहिचाना तथा जैन समाजको निर्जीव प्रभावनासे विरत करके सजीव तथा विवेक-सम्मत कार्योंमे लगाया। सभा और सगठनोको व्यर्थ या विनोद माननेवाले श्रीमानोको यह समझाना कि ये सफल प्रभावना और प्रसारके साधन है, सेठजीका ही काम था।

समाजकी वर्तमान पीढी सेठ सा० का दानवीर रूपसे स्मरण करती है। उसे क्या पता है कि यह उनकी कर्मवीरता थी जिसने उन्हे अमर कर दिया है। सेठजी सामाजिक और धार्मिक कार्योंके लिए प्रतिवर्ष महीनो प्रवासमे जाते थे। इतना ही नही, बम्बई रहते हुए भी प्रतिदिन कई घंटे उक्त कार्योंमें लगाते थे चाहे उनका व्यवसाय बने या बिगडे।

लक्ष्मीपति होकर भी अपना सब काम स्वयमेव करते थे। इतना सादा और परिश्रमी जीवन शायद ही किसी श्रीमान्‌का होता हो जितना सेठजीका था। विवादसे दूर रहकर कार्य करते जाना उनकी प्रकृति थी। 'करनी' ही सब भ्रान्तिया दूर करेगी ऐसी उनकी धारणा थी। इसीका यह परिणाम था कि वे अपने जीवनमे दर्जनो जैन छात्रावासोकी स्थापना कर सके प्रकाशक सस्थाओको प्रोत्साहन दे सके और 'जैन डाइरक्टरी' ऐसा अभूतपूर्व कार्य सहज ही कर सके।

सेठजीका जो जीवनचरित सामने आया है उसे देखकर यही भाव होता है कि काश इन्होने अपनी आत्मकथा लिखी होती! ऐसा परमार्थका ज्वलन्त जीवन तथा इतना गुप्त-वृत्त शायद ही किसी श्रीमानका रहा हो। साधर्मी वात्सल्यकी मूर्ति थे तो सर्वधर्म-समभावके परम पोषक थे। फलत इनके द्वारा स्थापित विद्यायतन तथा धर्मायतन सबके लिए थे। शिक्षाके प्रति इनका ऐसा गाढ अनुराग था कि व्युत्पन्न छात्रकी सहायता किये बिना ये विकल हो जाते थे। यही कारण है कि अपने अनुज-युगप्रवर्तक प० गणेशप्रसादजी द्वारा सस्कृत शिक्षाका बीडा उठाये जानेपर वे काशी दौडे आये और स्याद्वाद पाठशाला-को चालू करवा गये। सेठ सा० के अनेक गुणोका बखान न करके यही कहना पर्याप्त होगा कि यदि पूज्य वर्णीजीने आत्मविद्याके प्रसारका बीडा उठाया था तो सेठ सा० ने धार्मिक सस्कार युक्त लोकविद्याके साधन जुटानेमे अपना तन-मन-धन लगा दिया था।

स्व० बाबू देवकुमारजी, आरा—

आपने विद्यालयकी स्थापनामे तन-मन-धनसे पूरा सहयोग दिया। भदैनीमे गगातटपर स्थित जिस विशाल भवन मे अपने जन्मकालसे ही विद्यालय स्थित है वह भवन आपका ही था। आपने उसे विद्यालयके लिए दे दिया। इसके अतिरिक्त आसपासमे आपके जो मकान थे उन्हे भी विद्यालयके कार्यके निमित्त आपने दे दिया। समय-समय पर इन मकानोकी मरम्मत भी आपकी ओरसे ही होती रही। आप ही इस विद्यालयके प्रथम मंत्री नियुक्त हुए। खेद है कि १९०८ मे केवल तेतीस वर्षकी

उम्रमे आपका स्वर्गवास हो गया। आपके पश्चात् आपके पुत्र बा० निर्मलकुमार तथा बा० चक्रेश्वर-कुमारने आपके चरणचिह्नोपर चलते हुए विद्यालय के सवर्धन और पोषणमे पूर्ण सहयोग दिया और जिस भवनमें विद्यालय है वह भवन विद्यालयको अर्पित कर दिया।

श्री स्याद्वाद महाविद्यालय का आरम्भिक इतिहास

प० कैलाशचन्द्र, शास्त्री

श्री स्याद्वाद महाविद्यालय काशीका इतिहास एक तरहसे जैन समाजकी शिक्षा विषयक प्रगतिका ही इतिहास है, क्योकि प्रथम तो जिस समय इस विद्यालयकी स्थापना हुई, उससे पूर्व केवल एक महासभाका महाविद्यालय ही स्थापित हुआ था और जैन समाज में स्व० न्यायदिवाकर प० पन्नालालजी आदि इने-गिने ही विद्वान् थे। दूसरे इस विद्यालयने इन पचास वर्षोमे विविध विषयोके जितने विद्वान् उत्पन्न किये, अन्य सब विद्यालयोने सम्मिलित रूपसे भी उस कोटिके उतने विद्वान् उत्पन्न नही किये। अत इसके विगत इतिहासका परिचय कराना आवश्यक है।

इस विद्यालयकी स्थापनाका मुख्य श्रेय तो तीन महान् व्यक्तियोको है। वे तीन व्यक्ति है—पूज्य क्षुल्लक श्री गणेशप्रसादजी वर्णी, स्व० बाबा भागीरथजी वर्णी और स्व० प० पन्नालालजी वाकलीवाल। सबसे प्रथम इन्ही महानुभावोके हृदयमे काशीमे सस्कृत पाठशालाकी स्थापनाकी तरग उठी थी। इन उत्साही व्यक्तियोने अपने साहसपर निर्भर होकर उद्योग करना प्रारम्भ किया और मध्यप्रदेश वगैरहमे भ्रमण करके द्रव्य एकत्र करने लगे तथा जैन पत्रोमे इसके लिये आन्दोलन किया। समाजके प्रसिद्ध धर्मोत्साही जनोने इस कार्यमे योग दिया और परम धर्मोत्साही स्व० बाबू देवकुमारजी तन, मन, धनसे कटिबद्ध हो गये।

प्रारम्भिक सभा—ता० १८ मई १९०५ ई० को रात्रिके समय काशीके जैन पचायती मन्दिरमे स्थानीय भाइयोकी एक बडी सभा हुई। इस सभामे बाबू नानकचन्दजी हेडमास्टर सागर, आरा-निवासी बा० देवकुमारजी भी, जो उस समय जैन गजटके सम्पादक थे, सम्मिलित हुये। सवसम्मतिसे काशीके पाँच प्रमुख व्यक्तियोकी एक कमेटी बनाई गई और १० विद्यार्थियोके लिये चन्दा किया गया। ३०) मासिक काशीके भाइयोने और २०) मासिक बा० देवकुमारजीने देना स्वीकार किया। इसके अतिरिक्त १००) मासिकका प्रयत्न उक्त तीनो उत्साही व्यक्तियोने भ्रमण करके बाहरसे कर लिया था। इस तरह १५०) मासिकका प्रबन्ध हो गया।

स्थापना—श्री वीरनिर्वाण सवत् २४३१, ज्येष्ठ शुक्ला ५ (ता० १२ जून १९०५ ई०) के शुभ मुहूर्तमें 'स्याद्वाद पाठशाला' का जन्म हुआ। उस दिन मैदागिनके जैन मन्दिरमें सुबहके ८ बजे उक्त पाठशालाके मूहूर्तके लिये एक सभा हुई। इस अवसरपर बम्बईके श्रेष्ठिवर्य माणिकचन्द हीरा-

चन्दजी जे० पी० और दिल्लीके बा० मोतीलालजी आदि अनेक सज्जन उपस्थित थे। सेठ साहबके कर-कमलोंके द्वारा पाठशालाका उद्घाटन हुआ। आपने एक वर्षके लिये २५) मासिक देना स्वीकार किया।

प्रथम प्रबन्धकारिणी सभा—पाठशालाके प्रबन्धके लिये एक प्रबन्धकारिणी सभा बनाई गई जिसके पदाधिकारी तथा सदस्य नीचे लिखे महानुभाव चुने गये—

१ सभापति—सेठ माणिकचन्द पानाचन्द जौहरी, बम्बई।
२ मंत्री—बाबू देवकुमारजी, आरा।
३ उपमंत्री—श्री जैनेन्द्रकिशोरजी, आरा।
४ कोषाध्यक्ष—बा० छेदीलालजी रईस, बनारस।
५ सदस्य—बा० अजितप्रसादजी वकील, लखनऊ।
६ ,, —बा० नानकचन्दजी बी० ए०, हेडमास्टर, सागर।
७ ,, —सेठ मूलचन्द्रजी, बरुआसागर (झाँसी)।
८ ,, —बा० रघुनाथदासजी, पोस्टमास्टर, बनारस।
९ ,, —बा० करोड़ीचंदजी जमींदार, आरा।
१० ,, —बा० मोतीलालजी, दिल्ली।
११ ,, —बा० हनुमानदासजी, बनारस।
१२ ,, —बा० बनारसीदासजी जौहरी, बनारस।
१३ ,, —बा० नानकचन्दजी जौहरी, बनारस।
१४ ,, —पं० पन्नालालजी बाकलीवाल, बम्बई।

स्थान—बाबू देवकुमारजीने भदैनी-स्थित जिन-मन्दिरकी अपनी धर्मशाला पाठशालाके लिये दे दी। यह स्थान गंगाके तटपर अत्यन्त रमणीक है। इस धर्मशालाके अतिरिक्त आसपासके अपने अन्य मकान भी बाबू साहबने पाठशालाके कार्यके लिये दे दिये और उनकी मरम्मत वगैरह भी अपने पाससे ही कराते रहे।

सुपरिन्टेन्डेन्ट—बा० दीपचन्दजी (ब्र० दीपचन्दजी वर्णी) प्रथम सुपरिन्टेन्डेन्ट नियुक्त हुए। अस्व-स्थताके कारण आपके चले जानेपर आगरा-निवासी बाबू ठाकुरदासजीने अवैतनिक रूपसे सुपरिन्टेन्डेन्ट का काय किया।

पाठ्य-क्रम—प्रारम्भमें पाठशालाकी पढ़ाई काशीके क्वीन्सकालिजके अनुसार रखी गई और प्रत्येक खण्डमें धर्मशास्त्रका पढ़ना आवश्यक रखा गया। पीछे आवश्यकतानुसार इसमें परिवर्तन होता रहा।

ध्रौव्य-कोष—बम्बई निवासी पं० पन्नालालजी बाकलीवालके प्रस्ताव तथा प्रबन्धकारिणी सभाकी स्वीकृतिसे एक स्थायी कोषकी स्थापना हुई। अजमेर-निवासी सेठ नेमिचन्दजीने पाठशालाको चिरस्थायी बनानेकी सम्मति दी और दानवीर सेठ माणिकचन्दजीके प्रशंसनीय उद्योगसे बातकी बातमें पन्द्रह हजार रुपयोंके वचन मिल गये।

दो सम्मतियाँ—उस समय विद्यालयका निरीक्षण करके जिन महानुभावोंने अपनी शुभ सम्मतियाँ दी, उनमेसे दो आदरणीय सम्मतियाँ यहाँ दी जाती है—

जयपुर निवासी बाबा दुलीचन्दजीने डिप्टी चम्पतरायजीको पत्र लिखते हुए इस पाठशालाके बारेमे लिखा था—

'बनारसमे गंगा नदीके किनारे दिगम्बर मन्दिरकी धर्मशालामे स्याद्वाद पाठशाला है। उसमे दूर देशान्तरोके बीस-पच्चीस लडके पढते हैं। चार ब्राह्मण पढाते है। यहाँ पढाई उम्दा है। लडके भी मेहनतसे पढते है। इस क्षेत्रका अतिशय ऐसा है कि सर्वको विद्याकी प्राप्ति होती है। हिन्दुस्तान भरमे जितनी पाठशालाएँ श्वेताम्बर दिगम्बरोकी है, उनमे यहाँकी दोनो सम्प्रदायोकी पाठशालाएँ अच्छी है परन्तु दिगम्बरी पाठशालामे कोष नही है।'

न्याय दिवाकर पं० पन्नालालजीकी सम्मति—'आज मिति कार्तिक कृष्ण १३ गुरुवार स० १९६२ को मैने स्याद्वाद पाठशाला देखी। विद्यार्थी ११ पढते है। सर्व जैन दिगम्बरीय है और व्याकरण, न्याय, कोष काव्य अध्ययन करते है। अध्यापक ३ है और सुयोग्य है। भाई गणेशप्रसाद विद्यार्थी (क्षुल्लक श्री गणेशप्रसादजी वर्णी) सज्जन होनहार विद्यापरायण है। मैं इस पाठशालाको देखकर अत्यन्त अनिर्वचनीय प्रमोदको प्राप्त हुआ। यह पाठशाला इसी प्रकार निर्विघ्न चली जावेगी तो थोडे ही समयमे प्राचीन अध्यायको उदयरूप कर बतावेगी और जैन सम्प्रदायमे विद्वान है ऐसी इतर सम्प्रदायमे गणना अग्रणीय होवेगी। जैनी भाई मात्रका त्रियोग द्वारा इस पाठशालाकी वृद्धि रूप चिरस्थायी रहनेकी दृष्टि पूर्णरूपसे होनी चाहिये।

स्व० न्यायदिवाकरजीकी भविष्यकी आशा कि 'जैन सम्प्रदायमे विद्वान् है ऐसी इतर सम्प्रदायमे गणना अग्रणीय होगी' कितने अशमे सत्य प्रमाणित हुई है यह इससे पढकर निकले हुए स्नातकोकी सूचीसे स्पष्ट है।

पाठशालासे महाविद्यालय- भा० दि० जैन महासभाने मथुरामे जो महाविद्यालय खोला था, वह सु-प्रबन्धके न होनेसे मथुरास सहारनपुर चला गया। वहापर भी दशा न सुधरनेपर महासभाने मार्च १९०६ मे अपने कुण्डलपुर अधिवेशनमे उसे काशी भेजनेका प्रस्ताव किया। तदनुसार महाविद्यालयके ७ विद्यार्थी १ जून १९०६ को काशी स्याद्वाद पाठशालाके छात्रालयमे प्रविष्ट हुये।

फिर महासभाने अपने श्री शिखरजीके वार्षिक अधिवेशन (फरवरी १९१०) मे निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत किया—

(१) महाविद्यालय काशीमे स्याद्वाद पाठशालाके साथमे बदस्तूर रहे और नाम दोनोका स्याद्वाद महाविद्यालय रखा जावे।

(२) विद्यालयका खर्चा आधा-आधा महाविद्यालय और स्याद्वाद पाठशालाके भण्डारोसे दिया जावे और विद्यार्थी भी बराबर दोनोके समझे जावे।

(३) पठनक्रम महाविद्यालयके परीक्षालयके अनुसार स्याद्वाद महाविद्यालयमे रहेगा और कुल विद्यार्थियोको महासभाके परीक्षालयमे परीक्षा देनी होगी।

(४) महाविद्यालयके विद्यार्थी अन्य यूनिवर्सिटीकी परीक्षा न दे सकेंगे। यदि कोई देवे तो उसका नाम स्याद्वाद महाविद्यालयसे खारिज कर दिया जावेगा।

(५) स्याद्वाद पाठशाला फण्डसे पढनेवाले विद्यार्थी अन्य यूनिवर्सिटीकी परीक्षा भी यदि चाहेंगे तो दे सकेंगे। मगर शर्त यह है कि महासभाके परीक्षालयके धर्मशास्त्रमे अनुत्तीर्ण होनेपर वे स्याद्वाद पाठशालामे न पढ सकेंगे। परन्तु महामत्री महासभा अनुत्तीर्ण विद्यार्थियोके योग्य कारण दिखलानेपर पुन पढनेकी भी आज्ञा दे सकते हैं।

(६) महासभाके मत्री विद्या विभागको महाविद्यालय सम्बन्धी विद्यार्थियोके पठन-पाठन सम्बन्धी सर्वाधिकार होगे। परन्तु अध्यापक तथा अन्य प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार स्याद्वाद पाठशाला कमेटीको होगे।

(७) स्याद्वाद पाठशाला कमेटीके मत्रीको विद्या सम्बन्धी हर प्रकारकी रिपोर्ट महासभाके मत्री विद्या विभागके पास और खर्च सम्बन्धी रिपोर्ट महासभाके महामत्रीके पास माहवारी भेजनी होगी।

इस प्रस्तावके प्रस्तावक थे प० गोपालदासजी वरैया, समर्थक थे बाबू अर्जुनलालजी सेठी, और अनुमोदक थे ब्र० शीतलप्रसादजी। तबसे यह स्याद्वाद पाठशाला स्याद्वाद महाविद्यालय बन गई। किन्तु यह सयोग १९१३ मे वियोगके रूपमे परिणत हो गया।

संस्मरणीय वार्षिकोत्सव—सन् १९११ के बाद इस विद्यालयको दो ऐसे युवकोकी सेवाका लाभ प्राप्त हुआ, जिनमे कार्य करनेकी लगन और सेवाकी प्रबल भावना थी। ये दो युवक थे—बा० नन्दकिशोरजी देहली और कुमार देवेन्द्रप्रसादजी आरा। नन्दकिशोरजी युवावस्थामे पत्नीका वियोग हो जानेपर घर छोडकर चले आये थे और विद्यालयकी व्यवस्था मे योगदान करनेके कारण उसके अधिष्ठाता बना दिये गये थे। सम्भवतया प्रथम अधिष्ठाता वही थे। तथा कुमार देवेन्द्रप्रसादजी कालिजमे पढते थे। उन्हे कार्य करनेकी धुन थी। दोनो ही युवक मिलनसार, परिश्रमी और कार्यदक्ष थे। इन दोनोके श्रम और चातुर्यसे १९१३ के दिसम्बर मासमे विद्यालयका बडा ही शानदार और प्रभावक वार्षिकोत्सव हुआ। इस उत्सवके कारण यह विद्यालय काशीमे बहुत ही ख्यात हो गया।

इस उत्सवमे सम्मिलित होनेके लिये भारतके प्रत्येक प्रान्त और नगरसे जैनी भाई आये थे तथा स्या० वा० प० गोपालदासजी वरैया, न्यायाचार्य प० माणिकचन्दजी, कुँवर दिग्विजयसिहजी, बा० सूरजभानजी, प० जुगलकिशोरजी मुख्तार, लाला भगवानदीनजी, बा० जुगमन्दिरदासजी बैरिस्टर, बा० अजितप्रसादजी वकील, मि० उदानी आदि अनेक विद्वान् पधारे थे। जर्मनीके प्रसिद्ध विद्वान् डा० हर्मन जैकोबी, डा० स्ट्रास कलकत्ता, डा० सतीशचन्द्र विद्याभूषण प्रिंसिपल सस्कृत कालिज कलकत्ता, रायबहादुर लालबिहारी सतना, मिसेज एनी बेसेन्ट आदिने सभापतिका आसन ग्रहण किया था। प्रतिदिन जैनधर्म पर विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान होते थे।

इस उत्सवपर अन्य सस्थाओको भी निमत्रित किया गया था। तदनुसार भारत जैन महामण्डल और ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रमने अपने अधिवेशन किये। इस अवसरपर समस्त दिगम्बर जैनोकी ओरसे डा० हर्मन

जैकोत्रीको चाँदीकी कास्केटमे एक मानपत्र अर्पित किया गया। तथा स्याद्वाद प्रचारिणी सभाकी ओरसे विद्यालयके छात्रोने डा० सतीशचन्द्र विद्याभूषणको सस्कृतमे मानपत्र भेट किया।

इसके पश्चात् प्रतिवर्ष अजैन विद्वानोके सभापतित्वमे विद्यालयके वार्षिकोत्सव करनेकी प्रथा-सी चालू हो गई, जो ब्र० शीतलप्रसादजीके कार्यकाल तक बराबर चालू रही।

श्री स्याद्वाद महाविद्यालयकी प्रगतिका दिग्दर्शन——१९१५ मे एक लघु विद्यार्थीके रूपमे मैने श्री स्याद्वाद महाविद्यालयमे प्रवेश किया। उस समय प० उमरावसिहजी, जो बादको ब्र० ज्ञानानन्दके नामसे ख्यात हुए विद्यालयके सुपरिन्टेन्डेन्ट और धर्माध्यापक थे। स्व० प० अम्बादासजी शास्त्री न्यायकी गद्दीको सुशोभित करते थे। और प० गुलाब झाजी व्याकरणके अध्यापक थे।

तब विद्यालयको स्थापित हुए १० वर्ष हुए थे और ८० स्नातक योग्यता प्राप्त करके जा चुके थे। उस समयके छात्रोमे उल्लेखनीय है——प्रज्ञाचक्षु प० गोविन्दरायजी महरौनी, धर्मालङ्कार प० पन्नालालजी मालथौन, प० रमानाथजी इन्दौर, प० चैनसुखदासजी जयपुर, प० जीवन्धरजी इन्दौर और स्व० प० कुँवरलालजी विलराम। प० राजेन्द्रकुमारजी तो मेरे साथ ही विद्यालयमे प्रविष्ट हुए थे।

उस समय कोई समय-विभाग नही था। अध्यापक अपने समयमे आते थे और छात्र सुविधानुसार पढने जाते रहते थे। छात्रोको अध्ययनमे इतना प्रेम था कि आगे-पीछे पढनेके लिये कभी-कभी आपसमे झगड भी जाते थे। अग्रेजी मास्टर भी थे किन्तु अग्रेजी पढनेकी ओर उतना ही लक्ष्य था जितना लक्ष्य आजके छात्रोका सस्कृत पढनेकी ओर है। उस समय कलकत्तेकी परीक्षाका विशेष चलन था——क्वीन्स कालिज बनारसकी परीक्षा बहुत कडी समझी जाती थी और इसलिये उसमे विरले ही साहसी सम्मिलित होते थे। धार्मिक शिक्षाकी ओर कडाईसे ध्यान नही दिया जाता था।

उस समयके छात्र अध्ययनकी तरह अध्यापनके भी प्रेमी होते थे। बडे छात्रोके पास छोटे छात्र पढते और अनुवाद आदि करते थे। बडे छात्रोमे इस बातकी स्पर्धा रहती थी कि उनके पास औरोसे अधिक छात्र पढनेके लिए आयें।

उस समय नवीन छात्रावास नही बना था। विद्यालयके विस्तृत भवनमे ही छात्र रहते थे। और रात्रिमे अपने-अपने स्थानोपर जब सब दीपक जलाकर पढने बैठते थे तो दीपावलीका दृश्य उपस्थित हो जाता था। रात्रिका देरतक अध्ययन करनेमे भी स्पर्धा रहती थी।

छात्र-सख्या ४२ थी और विद्यालयका मासिक खर्च ६००) रुपये था। तीस हजार रुपये ध्रौव्य कोषमे थे और मासिक आय खर्चसे अधिक थी। अधिष्ठाता स्व० ब्र० शीतलप्रसादजी थे और बाबा भागीरथजी वर्णी तथा ब्र० प० गणेशप्रसादजी वर्णी जब-तब आते रहते थे। तब तक हिन्दू विश्व-विद्यालयकी स्थापना नही हुई थी। उसी वर्ष माघ मास मे उसकी स्थापना हुई और बनारसमे शिक्षाकी दिशामे एक क्रान्तिके युगका सूत्रपात हुआ।

१९२१ मे विद्यालयके ही पास काशी विद्यापीठकी स्थापना महात्मा गाधीके कर-कमलो द्वारा निष्पन्न हुई और शिक्षाकी दिशामे राष्ट्रीयताका सूत्रपात हुआ। उस समय डा० भगवानदास-जैसे

विख्यात मनीषी विद्यापीठके संचालक थे और वे सन्ध्यासमय विद्यालयकी छतपर प्राय भ्रमणार्थ आ जाते थे और छात्रोको अनायास ही उनके समागमका लाभ हो जाता था। उसी वर्ष मैंने विद्यालय छोड़ दिया। १९२३ में प्रथम बार मै धर्माध्यापक होकर आया और अस्वस्थ हो जानेके कारण एक वर्षतक कार्य करके घर चला गया। साढ़े तीन वर्ष बाद १९२७ मे मुझे दुबारा अपने पुराने पदपर आनेका सुअवसर मिला। इस बीचमे नये छात्रावास की एक मंजिल बन गयी थी जो बादको दुमंजिली हो गयी। न्यायाध्यापक प० अम्बादासजी शास्त्रीका स्वर्गवास हो चुका था। सुपरिटेंडेट के पदपर बा० पन्नालाल चौधरी थे। ब्र० शीतलप्रसादजी अपनी नयी विचारधाराके कारण विद्यालयसे संबंध छोड चुके थे और पूज्य प० गणेशप्रसादजी वर्णी अधिष्ठाता थे। कुछ समय बाद उन्होंने अपने पदसे त्यागपत्र दे दिया और उनके स्थानपर बाबू हर्षचन्द्र वकील अधिष्ठाता हुए। मंत्री बाबू सुमतिलालजी थे।

१९२४ मे ब्र० शीतलप्रसादजीके प्रयत्नसे संस्कृत और धार्मिक शिक्षाके साथ अंग्रेजी पढ़ने वाले छात्रोको विशेष वृत्ति देनेका नियम बना था जिसके कारण प० मथुरादासजी, प० राजेन्द्रकुमार-जी आदि अध्यापकी छोडकर पुन अध्ययन करनेके लिए बनारस आये। किन्तु बादको व्यय-भारके कारण यह व्यवस्था बन्द कर देनी पडी।

अब विद्यालयका समयविभाग बनने लगा था और उसीके अनुसार पढाई होती थी। सब छात्रोको धार्मिक शिक्षा लेना वैसा ही आवश्यक था जैसा संस्कृतकी शिक्षा लेना। फलत प्रवेशिकासे लेकर शास्त्री तककी समस्त कक्षाओमे धर्मका अध्ययन होने लगा और क्वीन्स कालिजकी परीक्षामे भी छात्रो की संख्या धीरे-धीरे बढने लगी। और जब कलकत्तेकी परीक्षा देना बन्द कर दिया गया तबसे तो क्वीन्स कालिजकी परीक्षा देना वैसे ही अनिवार्य हो गया जैसे बम्बई जैन परीक्षालयकी परीक्षा देना। फलत इस कालमे स्याद्वाद विद्यालयसे प्रथम बार क्वीन्स कालिजके छहो खण्ड पास आचार्य निकलना प्रारम्भ हुआ। प० वंशीधर बीना व्याकरणाचार्य सर्वप्रथम समग्र आचार्य (व्याकरण) थे। प० महेन्द्रकुमार तथा प० दरबारीलाल कोठिया ने न्यायाचार्य, प० राजधरलालने व्याकरणाचार्य और प० नेमिचन्द्र आराने ज्योतिषाचार्य परीक्षा उत्तीर्ण की। प्रो० खुशालचन्द्रने साहित्याचार्यके साथ एम० ए० की परीक्षा भी उत्तीर्ण की। यह जैन समाज के प्रथम व्यक्ति है जो साहित्याचार्यके साथ एम० ए० भी हुए थे।

अब छात्रोकी रुचि अंग्रेजी शिक्षाकी ओर हो चली थी और वे धर्म और संस्कृतके साथ अंग्रेजी भी विशेष रूपसे पढने लगे थे। मैट्रिककी परीक्षा मे भी बैठने लगे थे। १९४१मे प० सुमेरचन्द्रजी दिवा-कर सिवनी तथा बा० चेतनलालजी डालमियानगरकी प्रेरणासे दानवीर साहू शान्तिप्रसादजी साहबने ऐसे छात्रोको प्रोत्साहन देनेके लिए अपनी स्वर्गीया मातेश्वरीके नामपर मूर्तिदेवी छात्रवृत्ति देना स्वीकृत किया। तबसे इस दिशामे छात्रोकी विशेष अभिरुचि होती गयी और अनेक छात्र धर्मशास्त्रीके साथ एम० ए० और आचार्य परीक्षा उत्तीर्ण करके कालिजोमे प्रोफेसर हो गये।

यद्यपि अब छात्रोकी रुचि संस्कृत शिक्षाकी ओर वैसी नही है जैसी आजसे दो दशक पूर्व थी और इसके कई कारण है तथापि साथमे अंग्रेजी शिक्षा का प्रलोभन रहनेसे स्याद्वाद महाविद्यालय मे छात्रोकी

सख्या घटनेके बजाय बढी ही है। प्रवेशिका कक्षाके छात्रोका प्रवेश बहुत वर्ष पूर्व बन्द कर दिया गया था। अत विशारद और मध्यमा कक्षासे ही छात्र प्रविष्ट किये जाते है फिर भी इस वर्ष छात्र-सख्या ५५ है। अब तो उत्तर प्रदेशकी सरकारने सस्कृत परीक्षाके साथ अग्रेजी भी चालू कर दी है और पूर्व मध्यमा परीक्षा अग्रेजीके साथ उत्तीर्ण करनेवाला छात्र इन्टरमे प्रविष्ट हो सकता है।

इस प्रकार स्याद्वाद विद्यालयने जैन समाजकी शिक्षाकी दिशामे प्रगति की है।

स्याद्वाद विद्यालयके संपोषक

विगत पचास वर्षोमे जिन त्यागियो, दानियो और सेवकोने अपने तन, मन और धनसे स्याद्वाद विद्यालयका सरक्षण सपोषण और सवर्धन किया है, विद्यालयकी स्वर्णजयन्तीके अवसरपर उनका स्मरण करना और परिचय देना आवश्यक है—

स्व० ब्र० ज्ञानानन्दजी—आप गुरुवर्य गोपालदासजीके अन्यतम शिष्य थे। पूर्वनाम प० उमराव सिंह था। केवल २५) मासिक लेकर वर्षों तक आपने धर्माध्यापक और सुपरिटेडेटका काम किया। आप बडे ही अध्यवसायी व्यक्ति थे। छात्रोके आचरणपर विशेष दृष्टि रखते थ। सप्तम प्रतिमा धारण कर लेनेपर आपका नाम ब्र० ज्ञानानन्द हो गया। आपने विद्यालयको ही अपना कार्य-क्षेत्र बनाकर बनारससे 'अहिंसा' नामक पत्र निकाला और विद्यालयकी बराबर देखभाल करते रहे। १९२३मे आपका स्वर्गवास हो गया।

स्व० ब्र० शीतलप्रसादजी—आपने विद्यालयकी स्थापनामे तो सहयोग दिया ही, ब्रह्मचारी होनेके पश्चात् वर्षोतक विद्यालयके अधिष्ठाता रहकर उसकी अमूल्य सेवा की। उनके कार्यकालमे विद्यालयके सामने आर्थिक समस्याका रूप यह था कि चालू कोषमे पन्द्रह हजार रुपया जमा हो गया था, जिसे ध्रौव्य कोषमे डालना पडा। आप जब भी विद्यालयमे पधारते, बराबर कार्यरत रहते और सब व्यवस्थाका निरीक्षण करते। विद्यालयसे सबध छूट जानेपर भी आपका स्नेह पूर्ववत् बना रहा। १९१४ मे '२६ तक आप अधिष्ठाता रहे। आप लखनऊके निवासी थे और स्व० सेठ माणिकचन्द्रजीके अनन्य सहयोगी थे। लखनऊमे ही आपका स्वर्गवास हो गया।

सर सेठ हुकुमचन्दजी इन्दौर—सेठ माणिकचन्दजीका स्वर्गवास हो जानेके बादसे आप विद्यालयके सभापति-पदको सुशोभित किये हुए है और समय-समयपर द्रव्यसे भी सहायता करते रहते है।

साहू शान्तिप्रसादजी डालमियानगर—डालमियानगरके प्रसिद्ध उद्योगपति और दान-वीर साहूजीके सुनामसे कौन परिचित नही है। आप इस विद्यालयके सरक्षक है। आपने विद्यालयके ध्रौव्य कोषमे एकमुश्त एक लाख रुपया प्रदान किया है और बराबर विद्यालयका ध्यान रखते है।



स्व० ब्र० शीतलप्रसादजी, अधिष्ठाता



स्व० बाबू छेदीलाल जी, रईस काशी



स्व० सेठ बनारसीदासजी जौहरी काशी



स्व० बाबू नान्हकचन्द्रजी —



— लखमीचन्द्रजी जौहरी, काशी

आपसे भविष्यमे भी बहुत कुछ आशाएँ है । आपने लाखो रुपया प्रदान करके काशीमें भारतीय ज्ञान-पीठ नामक साहित्यिक सस्था स्थापित की है । आपकी धर्मपत्नी श्रीमती रमारानी जी भी आपके अनुसार ही दानशीला है । आप प्रतिवर्ष हजारो रुपया छात्रवृत्तिमे प्रदान करती है ।

स्व० सेठ रामजीवनजी और उनके पुत्र—कलकत्ताके प्रसिद्ध व्यवसायी और दानी स्व० सेठ रामजीवनजी की इस विद्यालयके ऊपर बडी आस्था थी । अन्तिम समय आप पाँच हजार रुपया विद्यालयके ध्रौव्य कोषमे प्रदान कर गये थे । आपके बाद यो तो आपके सभी सुपुत्रोकी भी इस विद्यालयपर असीम आस्था रही है, किन्तु उनमे भी बाबू छोटेलाल जी तथा बाबू नन्दलाल जी सरावगीका नाम विशेष रूपमे उल्लेखनीय है । बाबू छोटेलालजी जैन पुरातत्त्वके अच्छे विद्वान् और सुलेखक भी है । भारत-सरकारके पुरातत्त्वविदोंसे आपका घनिष्ठ परिचय है । आपके प्रयत्नसे आपके बडे भाई स्व० बाबू गुलजारीलालजीने पच्चीस हजार रुपया तथा स्व० बाब दीनानाथजीने पन्द्रह हजार रुपया विद्यालयके ध्रौव्य कोषमे प्रदान किया । इस तरह आपके घरानेमे पचास हजारसे भी अधिक रुपया विद्यालयको प्राप्त हुआ है और अब भी बराबर सहायता मिलती रहती है ।

बनारसके सज्जन—बनारसके प्रमुख व्यक्तियोका सहयोग विद्यालयको जन्मकालसे ही प्राप्त होता रहा है । जब इसकी स्थापना हुई तब काशीके भाइयोने तीस रुपया मासिक चन्दा लिखाया था । स्व० बाबू छेदीलालजी प्रथम कोषाध्यक्ष थे । उनके पश्चात् स्व० बाबू बनारसीदासजी जौहरी कोषाध्यक्ष हुए । उनका स्वर्गवास हो जानेपर स्व० बाबू नानकचन्दजी और उनके लघु भ्राता स्व० बाबू लक्ष्मीचन्दजी कोषाध्यक्ष हुए । अब स्व० बाबू छेदीलालजी के सुपौत्र बा० सालिगराम व बा० ऋषभचन्द्र कोषाध्यक्ष है और स्व० बाबू नानकचन्दजीके सुपुत्र बाबू हर्षचन्द वकील २७ वर्षसे अधिष्ठाता है । उक्त सज्जनोके सिवाय स्व० बाबू माणिकचन्दजी, स्व० सेठ बनारसीदासजी मारवाडी आदि सज्जनोको भी विद्यालयसे बडा प्रेम था । उपसभापति बा० दाऊजी अस्वस्थ होनेपर भी विद्यालयके कार्यके लिए सदा तत्पर रहते है । सचमुचमे विद्यालयके चालू रहनेका बनारसके सज्जनोको बहुत बडा श्रेय प्राप्त है ।

बाबू सुमतिलालजी इलाहाबाद—आप विद्यालयके मंत्री है । आपको तन, मनसे विद्यालयकी सेवा करते हुए ४२ वर्ष हो चुके है । विद्यालयके ध्रौव्य कोषकी सुरक्षा और व्ययपर नियन्त्रण आप उसी प्रकार करते रहते है जिस प्रकार कोई व्यक्ति अपनी निजी सम्पत्ति और व्ययकी करता है । ७० वर्षकी अवस्था हो जानेपर भी विद्यालयके कार्यके लिए आप सदा युवक है । आपके जैसा सेवाभावी निस्वार्थ व्यक्ति भाग्यसे ही किसी सस्थाको मिलता है ।

श्री स्याद्वाद महाविद्यालय का छात्रावास

यो तो किसी भी सस्थाकी स्थापनाके लिए जिन वस्तुओकी विशेष आवश्यकता होती है, उसमे स्थानका स्थान प्रमुख है, किन्तु एक शिक्षा सस्थाके लिए तो उसका और भी अधिक महत्त्व है ।

श्री स्याद्वाद महाविद्यालयको विगत ५० वर्षोंमे जो सफलता और ख्याति प्राप्त हुई उसमें उस भवनकी विशालता, भव्यता और रमणीयताका भी हाथ है, जिसमे विद्यालय स्थापित है। काशीमें गगाके तटपर इस प्रकारका भव्य और विशाल भवन अन्यत्र नही है। देश और विदेशके जितने भी अभ्यागत और दर्शक पधारे है, सभी इस भवनकी भव्यता तथा स्थानकी मनोहरतासे आनन्दित हुए है।

भवनकी विशाल छतपर भगवान् श्री सुपार्श्वनाथका सुन्दर जिनालय है। विक्रम सवत् १९१३ मे आराके रईस प० प्रभुदासजीके सुपुत्रोने इसका निर्माण कराकर प्रतिष्ठाविधि की थी। प० प्रभुदासजीके पौत्र स्व० दानवीर बाबू देवकुमारजीने यह भवन तथा उसके आसपासकी जगह विद्यालयके लिए प्रदान कर दी थी। तबसे यह विद्यालय उसी भवनमे स्थापित है। इसकी मरम्मत वगैरहका प्रबन्ध भी बराबर बाबू साहबकी तरफसे ही होता रहा और उनके स्वर्गवासके पश्चात् उनके सुपुत्र बाबू निर्मलकुमारजी व चक्रेश्वरकुमारजीने भी अपने पूज्य पिताका ही अनुसरण किया।

दो तीन वर्ष पूर्व उन्होने यह भवन विद्यालयको ही अर्पित कर दिया है।

प्रारम्भमे छात्रावास भी इसी भवनमे था। किन्तु एक स्वतत्र छात्रावासकी कमी खटकती थी। सन् १९२१ मे विद्यालय भवनके निकटवर्ती स्थानमे १६ छात्रोके रहने योग्य तीन कमरे बनवाये गये। जिसमे नीचे लिखे महानुभावोने सहायता प्रदान की —

१०००) रायबहादुर सेठ नेमीचन्दजी टीकमचन्दजी सोनी, अजमेर।
८७१) श्रीमती चाँदबाई धर्मपत्नी सेठ केदारमल दत्तमल जी, छपरा।
७००) साहू गणेशीलालजी, नजीबाबाद।
७००) साहू सलेखचन्दजी, नजीबाबाद।
५००) सेठ हरीभाई देवकरणजी, शोलापुर।
५००) श्रीमती चमेलाबाई धर्मपत्नी बा० अजितप्रसादजी, देहरादून।
५००) लाला उम्मेदसिंह मुसद्दीलालजी, अमृतसर।
५००) सेठ मथुरादास मोहनलालजी, खुरई।

५२७१)

इसके पश्चात् सन् '२७ मे पुरानी भोजनशालाके स्थानमे विद्यालयके व्ययसे कुछ कमरे और बनवाये गये। फिर सन् '४१-'४२ तथा '४३-'४४ मे दूसरी मजिलपर ५ कमरे बनवाये गये, जिनके निर्माणमें नीचे लिखे महानुभावोसे सहायता प्राप्त हुई —

१०००) सेठ रामजीवनजी सरावगी एण्ड सन्स, कलकत्ता।
११००) सेठ मुन्नालाल द्वारकादासजी, कलकत्ता।
५००) सेठ जोखीराम बैजनाथजी, कलकत्ता।
५०१) ब्र० जीवराज गौतमचन्दजी दोशी, शोलापुर।
६२१) दिगम्बर जैन पचान, मुलतान।
२९१) जैन पचान, जबलपुर।

जबतक हिन्दू विश्वविद्यालयके पास सन्मति जैन निकेतन स्थापित नहीं हुआ था कालिजोंमें पढ़नेवाले छात्र भी विद्यालयके छात्रावासमें रहते थे। उसकी स्थापनाके पश्चात् स्थानकी कमीके कारण उनको स्थान देना बन्द कर देना पड़ा। वर्तमानमें एक भोजनशालाकी बहुत आवश्यकता है। अभीतक एक अस्थायी भोजनशाला बनाकर काम चलाया जाता है।

श्री स्याद्वाद प्रचारिणी सभा द्वारा धर्म-प्रचार व समाज सेवा

इस विद्यालयमें छात्रों और कार्यकर्ताओंकी उक्त नामसे एक सभा है जिसका अधिवेशन प्रत्येक अष्टमी और प्रतिपदाको होता है। उसमें छात्र संस्कृत तथा हिन्दी में व्याख्यान देना और लेख लिखना सीखते हैं।

इस सभाकी ओरसे पर्वों तथा सामाजिक और धार्मिक उत्सवोंपर छात्र तथा अध्यापक धर्म प्रचारार्थ बाहर भी जाते रहते हैं, और इस तरह जहाँ एक ओर विद्यार्थियोंको सामाजिक सेवा और धर्म-प्रचारका अनुभव होता है वहाँ विद्यालयके विद्वानोंसे समाजको लाभ भी पहुँचता है। समाजमें जितने भी बड़े बड़े उत्सव होते हैं प्राय सभीमें इस विद्यालयके विद्वानोंको आमन्त्रित किया जाता है और उनके द्वारा धर्मकी प्रभावना होती है। जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है —

(१) सन् १९०७ के लगभग कानपुरमें जिनबिम्बप्रतिष्ठा महोत्सव हुआ था। पंचायतके द्वारा निमन्त्रित होकर विद्यालयके कुछ विद्यार्थी महोत्सवमें सम्मिलित हुए और वहाँ विद्यार्थियोंकी परीक्षा भी ली गयी। स्व० डिप्टी चम्पतरायजीने विद्यालयकी सराहना की।

(२) सन् १९१४ में ऋषिकुल हरिद्वारमें हुए संस्कृत साहित्य सम्मेलनमें पं० तुलसीरामजी काव्य-तीर्थने जैन साहित्यके विषयमें संस्कृतमें निबन्धपाठ किया। जिससे विद्वन्मण्डलीमें जैन साहित्यके प्रति जिज्ञासा उत्पन्न हुई।

(३) जैनदर्शनके विषयमें एक लेख अमरीकाके पत्रोंमें छपने के लिए भेजा गया।

(४) सन् १९१७ में पं० उमरावसिंहजीने हरिद्वार संस्कृत साहित्य सम्मेलनमें ईश्वर-कर्तृत्वके खण्डनमें एक निबन्ध पढ़ा, जो बादको 'जैनमित्र'में भी प्रकाशित हुआ था।

(५) भा० दि० जैन महासभाके कानपुर तथा लखनऊ अधिवेशनके अवसर पर इस विद्यालयके छात्र सतीशचन्द्रने साहित्य विषयपर निबन्धपाठ किया, जिसमें उन्हें स्वर्णपदक तथा पारितोषिक मिला।

(६) पानीपतमें आर्यसमाजसे होनेवाले लिखित शास्त्रार्थमें पं० कैलाशचन्द्रजी शास्त्री सम्मिलित हुए और उसमें योगदान किया। इसके सिवा भी पंडितजी प्रतिवर्ष दशलाक्षिणी पर्वमें तथा सामाजिक और धार्मिक उत्सवोंमें निमन्त्रित होकर बराबर जाते रहते हैं और छात्रगण भी उनका अनुसरण करते रहते हैं।

वार्षिक वाद-विवादोत्सव

सन् १९३४ से इस विद्यालयमें प्रतिवर्ष संस्कृत तथा हिन्दीमें वाद-विवाद प्रतियोगिता होती है। इसमें बनारसकी प्राय सभी संस्कृत पाठशालाएं और विद्यालय अपने छात्र भेजते हैं। निर्णायकत्वका

पद काशीके प्रमुख प्रमुख ख्यातनामा विद्वान् अलकृत करते है। जो छात्र प्रथम और द्वितीय आते हैं उन्हे स्वर्णमय पदक प्रदान किये जाते है। तथा जिस विद्यालयके छात्र सबसे अधिक नम्बर प्राप्त करते है उन्हे 'समन्तभद्र विजय-चिह्न' दिया जाता है।

इस उत्सवसे जहाँ एक ओर छात्रोमे भाषणके प्रति अभिरुचि उत्पन्न होती है वही वे अन्य विद्यालयोके छात्रोके सम्पर्कमे भी आते है। तथा काशीके प्रतिष्ठित विद्वानोके परस्पर समागमका और विचारोके आदान-प्रदानका सुअवसर मिलता है। इस उत्सवका आयोजन बहुत ही आकर्षक और दर्शनीय होता है। छात्र वक्ताओके भाषण जहाँ गाभीर्य और विद्वत्ताको हुए लिये होते है, वहाँ हास्यरसके लिये भी सामग्री मिल ही जाती है। इन उत्सवोमे निर्णायक बनकर जितने भी विद्वान् पधारे है सभीने इस आयोजनकी तथा जैन विद्यालयके छात्रवक्ताओकी भूरि भूरि प्रशसा की है।

श्री अकलंक सरस्वतीभवन

श्री अमृतलाल, शास्त्री, जैनदर्शनाचार्यादि

जिस प्रकार बिना हृदयके मनुष्य-शरीरकी कल्पना असभव है उसी प्रकार पुस्तकालय बिना शिक्षा सस्थाकी स्थिति है। यत छात्रोको स्याद्वाद पाठशाला पाठ्य पुस्तके भी देती थी अत प्रारम्भमे ही अनायास ग्रन्थ-सचय प्रारम्भ हो गया था। तथापि यह पर्याप्त नही है यह अनुभव दस वर्ष बाद हुआ, और वीर निर्वाण २४४१ मे उक्त पुस्तकालयकी स्थापना सेठ भोजराजजी उर्फ मातीलाल रावजी के पाँच सौ रुपयोके दानसे हुई थी।

इसके बाद पूज्य सस्थापक जी स्व० ब्रह्मचारी ज्ञानानन्दजी तथा शीतलप्रसादजीके सतत प्रयत्नसे इस सरस्वतीभवनका अभिधान (Reference) विभाग वर्द्धमान है। इन सज्जनोके शास्त्र-प्रेमका ही यह सुपरिणाम है जो इस भवनमे तिलोयपण्णत्ति, गोम्मटसार, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति अष्टसहस्री युक्त्यनुशासनादि ३७० महत्त्वपूर्ण ग्रन्थोकी हस्तलिखित प्रतिया विराजमान हैं। इनकी प्रेरणासे अतीतमे जिन लोगोने अनेक ग्रन्थ भेट किये है उनमे सेठ नाथारगजी गाँधी बम्बई ज्योतिराम दलचन्द्रजी पढरपुर, स्व० सिघैन चिरौंजाबाईजी, धर्ममाता पूज्य श्री १०५ क्षु० गणेशप्रसाद वर्णी लाला मुसद्दीलालजी अमृतसर, प० नाथूरामजी प्रेमीकी पुत्रवधू चम्पादेवी आदिके नाम विशेष रूपसे उल्लेखनीय है।

पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसादजी वर्णीने इस भवनको अपना समग्र व्यक्तिगत पुस्तक-सग्रह ही नही दिया है अपितु परिग्रह त्याग करते समय २००० मुद्राएँ भी इसे दी है। स्व० ब्र० शीतलप्रसादजीके निजी पुस्तकालयका भी बहु भाग इसे मिला है। इसके अतिरिक्त सेठ माणिकचन्द्र दि० जैन ग्रन्थमाला भा० दि० जैन सघ ग्रन्थमाला, वर्णी ग्रन्थमाला आदि अनेक प्रकाशकोसे भेट-स्वरूप ग्रन्थ मिलते रहते है। वर्तमानमे ग्रन्थ सख्या निम्न प्रकार है —

जैन धर्म तथा दर्शन १६००, इतर धर्म तथा दर्शन ४००, व्याकरण २००, काव्य-अलकार ५५०, गणित ज्योतिष आयुर्वेद १५०, हिन्दी साहित्य इतिहास-विज्ञान आदि १५००, मराठी, गुजराती, अग्रेजी आदि भाषाएँ १०००। अर्थात् अभिधान विभाग में ५३०० ग्रन्थ है तथा

पाठ्य पुस्तक विभागमें ३५०० ग्रन्थ हैं। इस पुस्तकालयका वाचनालय विभाग भी है जिसमे दैनिक, साप्ताहिक और मासिकादि पत्र पत्रिकाए आती हैं।

इस सचयका श्रेय स्याद्वाद विद्यालयके अतिरिक्त रावजी मोतीलालजी शोलापुर ५००), सौ० सजनीदेवी अमृतसर १०००), पूज्य श्री वर्णीजी २०००), सेठ सागरमलजी पाड्या गिरीडीह १०००) को भी है। वर्तमानमे ग्रन्थागारके लिए भवनकी अतीव आवश्यकता है। इसके लिए 'भागीरथ भवन' योजना भी प्रारम्भ की थी, पर वह इतनी सफल नही हुई है कि उसके द्वारा उपयुक्त पुस्तकालयका निर्माण हो सके। जैसी कि वर्तमान उपमत्रीजीकी इच्छा है वैसा शोधोपयोगी पुस्तकालय तभी बन सकता है जब इसमे समस्त प्रकाशित तथा अप्रकाशित जैनग्रन्थोका सचय हो जाय। यह पुस्तकालय देशी तथा विदेशी शोधको और जिज्ञासुओके आकर्षणका केन्द्र रहा है। यह समयकी माँग भी तभी पूर्ण हो सकती है जब विद्यालय तथा समाज यह समझे कि ग्रन्थ भण्डार प्रौढोकी भी प्रौढ शिक्षाका आलय है।

स्याद्वाद विद्यालय और संस्कृत शिक्षा

पं० जगमोहनलाल शास्त्री, कटनी

भारतीय वाङमयकी समस्त रचनाए सस्कृत भाषामे होती रही है। आज भिन्न-भिन्न प्रान्तोमे चलनेवाली प्रान्तीय भाषाए सस्कृत भाषामे ही उत्पन्न उसके ग्राम्य भाषाके रूपमे है। प्राकृत भाषाने भाषाका रूप बादमे प्राप्त किया है, वास्तवमे वह स्वतत्र भाषा नही है। एक ही भाषा है जो नियम-बद्धताके साथ सम्हाली हुई नागरिक-साहित्यिक भाषा थी उसे सस्कृत नाम प्राप्त था, और वही भाषा ग्राम्यजनो, बालको, वृद्धो तथा अशिक्षित जनताके द्वारा बोली जानेके कारण सर्वसाधारणमे प्रचलित थी वह 'प्राकृत' नाम प्राप्त कर चुकी थी। लोकभाषाके नाते प्राकृतका जब प्रचलन अधिक हुआ तब सस्कृत केवल शास्त्रीय भाषामात्र रह गई। लोकहितैषी अनेक ग्रन्थकारो ने, जिनमे जैनाचार्य प्रमुख है, अपने उपदेश लोकभाषामे लिखे। उस समय 'प्राकृत' का महत्त्व बढ गया। वह भी नियमो मे बाँधी गई। उसके भी व्याकरण बने और इस नाते वह भी धीरे-धीरे शास्त्रीय भाषा बन गई। सर्वसाधारण जनता, जो उन नियमोका पालन अपनी बोल-चालमे न कर सकी, उसके द्वारा जो भाषाका प्रवाह आगे बढा उसने भिन्न-भिन्न प्रान्तोमें प्रान्तके नामपर ढुँढारी, व्रजभाषा, पजाबी, बिहारी, बगाली, महाराष्ट्री, गुजराती आदि नाम प्राप्त किये। उत्तर हिन्दुस्तानका क्षेत्र जो प्राय हिन्दके नामपर प्रख्यात हुआ, उसकी प्रचलित भाषाने 'हिन्दी' नाम पाया। हिन्दी भाषाका गत ६-७ सौ वर्षोमे क्रमिक विकास हुआ है। वह भी कुछ नियमोमे बँधती गई और आज वह भी एक प्रमुख भाषा है। उसका भी व्याकरण है और अब तो वह राष्ट्रभाषा (जनभाषा) का सौभाग्य प्राप्त कर चुकी है। उसका भाण्डार दिन-प्रति-दिन विभिन्न विषयोमे लिखे जानेवाले ग्रन्थोमे वृद्धिगत हो रहा है। और इस प्रकार हिन्दी भी शास्त्रीय भाषाका रूप प्राप्त कर चुकी है। ग्रथोमे प्रयुक्त, पत्र-पत्रिकाओमे प्रयुक्त, नागरिकोमे प्रचलित हिन्दी ही नागरिक हिन्दी—शुद्ध हिन्दी या शास्त्रीय हिन्दी है। ग्रामोमे, अपढ लोगोमें, माताओमे, बालकोमे अभी भी जो हिन्दी चलती है, वह क्षेत्रभेदसे विभिन्न प्रकारकी है। भारतकी

स्वतन्त्रताके बाद 'हिन्दी'को ज्यों ही 'राष्ट्रभाषा' घोषित किया गया, वैसे ही हिन्दी की शिक्षाके प्रचारके लिए भी सरकारने अनेक योजनाएँ कार्यान्वित की। इन सब प्रयत्नोंके बाद यह प्रतीत होता है कि कुछ कालमे ही नागरिक हिन्दी और ग्राम्य हिन्दीके बीचकी दीवार मिट जायगी और प्राय लेखनमे बोलचालमें एक शुद्ध हिन्दीकी ही प्रतिष्ठा होगी।

ऊपर लिखे क्रमिक प्रवाहसे यह स्पष्ट है कि 'संस्कृत भाषा' इस देशकी मूल भाषा रही है। हजारो वर्षोंसे भारतीय साहित्य इसी भाषामे लिखा जाता रहा है। सम्प्रदाय-भेदोंके प्राचुर्य होनेपर भी इस भाषाको सबने मान दिया है। जैनाचार्योंने अपने धर्मसिद्धान्त हमेशा लोकभाषामें लिखे हैं अत जब संस्कृत लोकभाषा थी तब जैनधर्मके सिद्धान्त, उपदेश, दर्शन, न्याय, व्याकरण,साहित्यादि अनुयोग-ग्रन्थ संस्कृत भाषामे प्रचुर मात्रामे लिखे गये। जब प्राकृत भाषाको लोकभाषाका पद मिला तब 'प्राकृत' मे, और जब हिन्दीको लोकभाषाका रूप प्राप्त होने लगा तबसे हिन्दीमे विभिन्न विषयोंके ग्रन्थ लिखे गये।

जैनधर्मका साहित्य 'संस्कृत भाषा'मे जितना अधिक पाया जाता है उतना अन्य भाषाओंमें नहीं। इस कारण संस्कृत भाषाका पठन-पाठन जैन बन्धुओंके लिए अत्यावश्यक था। ऐसा होनेपर भी आजके ५०-६० वर्ष पूर्वतकका, तीन चार सौ वर्षका जैन इतिहास हमें बता रहा है कि उसमे संस्कृत भाषाके जानकार विद्वानोंका प्राय अभाव ही था। जब संसारमे संस्कृत भाषाका पठन-पाठन ब्राह्मणवर्गमे अपना एकमात्र धर्म माना जाता था तब जैन भाई उससे इतने दूर थे कि जैसे इस भाषाके पठन-पाठनमे उनका कोई संबंध ही न हो। न कोई पाठशाला थी, न कोई परीक्षालय था, न कोई विद्वान था, जहाँ संस्कृत । थोड़ा-सा भी स्थान हो। धर्मज्ञान भी इसीलिए शून्य जैसा था। हिन्दी भाषाके पाठी पद्मपुराण सदा-सुखदासजीका रत्नकरण्डश्रावकाचार अथवा अध्यात्मचर्चाके नाते बनारसीदासजीका समयसार पढ़ते थे और ऐसे भी विद्वत्ताप्राप्त व्यक्ति इने-गिने थे।

सर्वसाधारणमे तो भक्तामरपाठ, सूत्रपाठ अथवा संस्कृत पूजा बाचनेवाला व्यक्ति पंडित माना जाता था। गुरुवर्य पं० गणेशप्रसादजी वर्णी जब अध्ययनार्थ काशी गये तब उन्हे इस विद्याके पढ़ने में जिस कठिनाईका अनुभव करना पड़ा वह इस युगके जैन इतिहासकी एक कहानी बन गई है।

पूज्य वर्णीजीने अपने जीवनको कठिनाइयोंकी भट्टीमें झोंककर समाजमे संस्कृत विद्याके पठन-पाठनके अबाध प्रचलनके हेतु इस स्याद्वाद दिगम्बर जैन महाविद्यालयकी संस्थापना सन् १९०५मे की थी। तबसे यह विद्यालय हजारो छात्रोंको संस्कृत विद्याका दान कर चुका कर रहा है और करता रहेगा। स्याद्वाद महाविद्यालय एक पवित्र संस्था है। इसकी अमर कीर्ति सदा अक्षुण्ण रहेगी। कैसी भी स्थिति हो, काशी-जैसी संस्कृत विद्यानगरीमें विद्यालयकी आवश्यकता सदा रहेगी। इसके द्वारा शिक्षित छात्रोंके प्रयाससे समाजमे १०-२० संस्कृत विद्यालय चलते हैं। अनेक ग्रंथमालाएँ संस्कृत ग्रंथोंका सम्पादन व प्रकाशन करती हैं। सहस्रों ग्रंथ सुसम्पादित तथा सुव्यवस्थित होकर प्रकाशमें आ चुके हैं। इसी समय गुरु गोपालदासजीने धर्मसिद्धान्त व जैनन्यायके शिक्षण प्राप्त करने तथा प्रदान करनेमे भी बहुत बड़ा क्रान्तिकारी कदम उठाया था। वह भी अविस्मरणीय रहेगा। वह इतिहास भी स्वर्णाक्षरोंमें अंकित होगा तथापि उनके भी कार्यमें योगदान करनेवाले सुयोग्य विद्वानोंपर इस विद्यालयका बहुत बड़ा ऋण है।

यदि आशाधरजीके शब्दोमें कलिकालमें धर्मस्थिति (धर्मश्रद्धा) चैत्यालयमूलक है तो मैं कहता हूँ कि इस युग में धार्मिक ज्ञान के प्रवाह के तीर्थभूत इन संस्कृत विद्यालयोमें स्याद्वाद महाविद्यालयका स्थान भी बहुत ऊँचा है।

जैन समाजके बच्चे-बच्चेका कर्त्तव्य है कि वह इसे अपनी शक्ति लगाकर वृद्धिगत करे। अध्ययन करनेवाले छात्रोका प्रधान कर्तव्य है कि वे इसके आदर्शको सामने रखकर विद्याभ्यासमें अपनी समुन्नति करें। सदा ही अपने सदाचारो व उत्तम विचारो द्वारा इसकी कीर्तिको बढावें। मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि यदि मेरा पुनर्जन्म इसी क्षेत्रमे, मानव-पर्यायमें हो तो मुझे पुन इस विद्यालय द्वारा उत्तम प्रकारसे संस्कृत वाङमयका विशाल ज्ञान हो और वह ज्ञान मेरे उत्तम विचारो व सदाचारोमें सहायक हो। इन शब्दो द्वारा मै विद्यालयके प्रति अपनी हार्दिक भक्ति प्रदर्शित करता हुआ इसकी सर्वांगीण उन्नतिका अभिलाषी हूँ।

जय हे युग-निर्माता

प्रो० खुशालचन्द्र गोरावाला एम० ए०, साहित्याचार्य, आदि

"स्याद्वाद विद्यालयका उद्देश्य—प्राकृत, संस्कृत तथा जैनधर्मकी शिक्षा प्रदान करना होगा। अन्य उपयोगी विषयो (गणित, वैद्यक, ज्यौतिष, उद्योग, अंग्रेजी, आदि) की शिक्षाका भी प्रबन्ध आवश्यकतानुसार होगा।" अर्थात् संस्थापकोने श्रुत (ज्येष्ठ शुक्ल) पञ्चमी वीर-निर्वाण संवत् २४३१ में भारतीय वाङमय तथा तब तक उपेक्षित जैन साहित्यके अध्ययनके लिए ही इसका सूत्रपात किया था। और आवश्यकतानुसार अन्य विषयोके अध्यापनको भी अपना उद्देश्य इसलिए बनाया था कि उन्हे संस्कृत पडितोकी एकाङ्गिताका पूर्ण ज्ञान था। "उष्ट्र—पक्षिविशेष" अर्थ करनेवाले पडितोके ही कारण भारतने अपने विशाल हृदय, विशद विवेक और जीवित सदाचारको खोया था तथा इनके स्थानपर संकीर्णता, रूढिवादिता तथा कर्मकाण्डको बैठा दिया था। भगवान् महावीरके बाद धर्म समभावके प्रचारक सम्राट् अशोककी लोकप्रदत्त उपाधि "देवाना प्रिय" को "इति मूर्खे" कर दिया था। फलत स्याद्वाद विद्यालयके संस्थापक (उस समय) प० गणेशप्रसाद वर्णी तथा विवेकी तपस्वी बाबा भागीरथजीने वैदिक तथा जैन विद्यालयोमें प्रचलित केवल अपने ही साहित्यकी शिक्षा देनेकी तत्कालीन परम्पराका त्याग किया और यह नियम बना दिया कि विद्यार्थीको जैनेन्द्र-शाकटायन व्याकरणके समान पाणिनीय व्याकरण, जैन दर्शनके समान बौद्ध तथा वैदिक षड्दर्शनो तथा समस्त साहित्यो, पुराणो और धर्मशास्त्रोका अध्ययन ही न करना होगा अपितु वर्तमान रूपमे इनकी शिक्षा तथा दीक्षाके लिए लौकिक विषयो तथा भाषाओका भी प्रौढ ज्ञान प्राप्त करना होगा।

धार्मिक सहिष्णुताका आरम्भ—"नास्तिको वेदनिन्दक" परिभाषा करनेवालोके वंशधरोकी दृष्टि जैनियोपर ही गडती थी क्योकि दूसरे वेदनिन्दक बौद्धोंके तो भारतभूमि पर विशाल अवशेष ही

खडे थे। इस्लाम तथा ख्रीष्ट धर्म-प्रसारकोंके साथ आयी उग्र धर्म-प्रसारकी पद्धति से भारतीय धर्म भी अछूते न रह सके थे। एक धर्मावलम्बीने इतर धर्मावलम्बियोंका उसी प्रकार दमन तथा हनन किया था जिसकी कथा योरपके धर्मयुद्धोंके इतिहास है। शतियाँ बीत जानेपर भी यह कटुता निर्मूल न हो सकी थी। देवभाषाके पुजारी पंडित जैनियोंको भी अस्पृश्य कहते थे। इस संकीर्णताकी अन्तिम फुंकार पं० जीवनाथ मिश्रकी वह भर्त्सना थी जो उन्होंने विद्यार्थी गणेशप्रसाद पर की थी। स्याद्वाद विद्यालयकी स्थापनाने इस पर ऐसी मीठी मार दी कि धुरन्धर पंडितोंने जैन विद्यालयकी अध्यापकी स्वीकार की। जैन बौद्ध ग्रन्थोंकी अस्पृश्यता देखते-देखते विलीन हो गयी और इस उदात्त भावनाका सूत्रपात हुआ कि भारतीय संस्कृतिका ज्ञान प्राप्त करनेके लिए वैदिक-जैन-बौद्ध वाङमयोंका अध्ययन अनिवार्य है। फलत काशी विश्वविद्यालयके बाद गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेजने भी डा० मंगलदेव ऐसे विवेकी पीठस्थविरके समयमें जैन पाठ्य-क्रमको अपनी परीक्षामें सम्मिलित किया। इस प्रकार 'हस्तिना ताड्यमानोऽपि न गच्छेज्जैन मन्दिरम्' द्वारा व्यक्त भय तथा द्वेषके युगका अन्त लानेवाला काशीका यह विद्यालय है।

शिक्षाकी स्वतन्त्रता—जिस प्रकार विविध धर्मावलम्बी अध्यापक दूसरे धर्मोंके साहित्यका अध्यापन करते थे उसी प्रकारसे विविध विचारधाराओंके अधिकारी एक मनसे इस संस्थाके संचालन और संवर्द्धनमें लीन रहे हैं। विशेषता यही रही है कि किसीने भी अपने विचारोंको संस्थाके कार्यकर्त्ताओं या छात्रोंपर लादनेका कभी प्रयत्न नहीं किया है। इतना ही नहीं, कभी भी उनकी चर्चा भी विद्यालयकी सभाओंमें नहीं की है। इसका ही यह सुपरिणाम हुआ है कि स्थितिपालक और सुधारक, शासनसेवक और विद्रोही, पूंजीपति और अपरिग्रही आदि प्रकारके परस्पर विरोधी लोग इस विद्यालयके कर्णधार तथा स्नातक रहे हैं, किन्तु इसके कारण विद्यालय की प्रगति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। अब तकका इतिहास यही बताता है कि इस संस्थासे सम्बद्ध अधिकारी, कार्यकर्त्ता और विद्यार्थी अधिकारोंकी अपेक्षा कर्त्तव्योंके प्रति अधिक जागरूक रहे हैं। गृहपतिको इस बातकी ही चिन्ता करनी पड़ी है कि एकाधिक परीक्षाओंकी तैयारीमें लीन छात्र रात्रिमें अधिक जागकर या व्यायामादिसे विमुख होकर स्वास्थ्य खराब न कर लें। आचार्यसे छात्रोंकी एक ही शिकायत रही है "प्रधानाध्यापकजीने अमुक परीक्षा न देनेके लिए कहा है।" इन पंक्तियोंके लेखक ऐसे उद्धत-विद्रोही छात्रका इस विद्यालयको छोड़कर अन्यत्र निर्वाह होना असंभव ही था, क्योंकि ऐसे आचार्यों और अध्यापकोंकी संख्या उस समय नहीं के बराबर थी जो परीक्षाफल मात्रसे संतुष्ट हो जायें।

सर्वसमभाव—इस विद्यालयकी स्थापना ऐसे समय हुई थी कि रूढ़िवादिता या संकीर्णता यहाँ पैर भी न रख सकी। जिन लोगोंका स्पर्श भी पंडितों या कट्टर गृहस्थोंको इष्ट न था ऐसे विविध धर्मों और जातियोंके लोग समय-समयपर यहाँ आते रहे हैं। जहाँ विद्यालयने उन्हें सुविधाएँ दी हैं वहीं उन्होंने भी विद्यालयके विनय (डिसिप्लिन) का पूर्ण पालन किया है और जीवनभरके लिए उसे अपनाया है। इस प्रकारसे स्याद्वाद विद्यालय जैन संस्कृतिका मूक प्रचारक भी रहा है। इसके सम्पर्कमें आनेवाले बड़े-बड़े नेता अथवा साधारण जिज्ञासुको भी जैनत्वके प्रति आदर और जिज्ञासाका भाव हुआ है।

असाधारण शिक्षा-संस्था—काशी प्राच्य शिक्षाका गढ़ है। गली-गली और घर-घरमें यहाँ संस्कृतका पठन-पाठन चलता है। छात्रोंकी संख्याकी दृष्टिसे कई विद्यालय स्याद्वाद विद्यालयसे

बड़े कहे जा सकते हैं। किन्तु उक्त सर्वधर्म-समभाव, उदार दृष्टि, अध्यापक, छात्रावास आदिकी सुव्यवस्थाके अतिरिक्त इसकी शिक्षण पद्धति भी चमत्कारी रही है। प्रारम्भसे ही स्याद्वाद विद्यालयके छात्र गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज बनारस अथवा बंगाल संस्कृत एसोसियेशनकी परीक्षाओंके अतिरिक्त जैन वाङ्मयकी एक परीक्षा सदैव देते रहे हैं। अर्थात् एक साथ २ या ३ परीक्षाएँ देना यहाँके छात्रोंकी परम्परा रही है।

पाश्चात्य शिक्षित लोगोंके सम्पर्कमें आनेपर अधिकारियों और छात्रों, दोनोंने ही यह अनुभव किया कि उन्हें प्राच्य विद्याके साथ-साथ पाश्चात्य विद्याका भी प्रौढ अध्ययन करना चाहिये। यत भारतीयता मुख्य थी अत यह व्यवस्था की गयी कि शास्त्री होते ही छात्रोंको मैट्रिककी सुविधा दी जाय और योग्य विद्यार्थियोंको अंग्रेजी कालेजोंमें पढने दिया जाय। फलत स्याद्वाद विद्यालयने सन् १९३४ में प्रथम न्यायतीर्थ, एम० ए० और १९३९ में सर्वप्रथम शास्त्री, न्यायतीर्थ, आचार्य और एम० ए० को उत्पन्न किया। इसके पहिले ब्राह्मण-समाजमें भी प० गंगानाथ झा, प० रामावतार शर्मा आदि उँगलियों पर गिने जाने योग्य बहुत थोड़े ऐसे विद्वान् थे। जो थे, उन्होंने भी एकके बाद दूसरी शिक्षा पूर्ण की थी। इसी दशकमें काशी विश्वविद्यालयसे कुछ ऐसे विद्वान् निकले पर वे सब भी प्राच्यकी समाप्ति पर पाश्चात्य शिक्षा पानेवाले थे। यह श्रेय तो स्याद्वाद विद्यालयको ही है कि इसके स्नातकोंने एक साथ दोनों विद्याओंको सफलतापूर्वक पढ़ा।

राजनीतिक चैतन्य—स्याद्वाद विद्यालयकी स्थापनाके १६ वर्ष बाद जब राष्ट्रपिता गाधीजीने अंग्रेजी कालेजोंके बहिष्कारका आन्दोलन चलाया तो इस विद्यालयके पड़ोसमें पूज्य गाधीजी, त्यागमूर्ति प० मोतीलाल नेहरू और डा० भगवानदासजीने, स्व० बाबू शिवप्रसाद गुप्तके आदर्श और धनसे प्रेरणा पाकर, काशी विद्यापीठकी स्थापना की थी। अहिंसा और सत्याग्रहके आदर्शोंकी उभय सम्मतताने दोनों संस्थाओंको इतना अधिक निकट ला दिया कि सन् '२१ के प्रथम असहयोग आन्दोलनके समय ही लगभग समस्त छात्रोंने सरकारी परीक्षाओंका बहिष्कार करके आन्दोलनमें हाथ बँटाया। इस संस्थाका कैसा अद्भुत जीवन रहा है! क्योंकि असहयोगी छात्रोंके अड्डे इस संस्थाका मंत्री उस समय भी पुलिसका अधिकारी था। ब्रिटिश नौकरशाहीके आतंकका उस समय मध्याह्न था तथापि दोनों अपने कर्तव्य निर्भय होकर करते रहे। सन् '३० के सत्याग्रहके समय भी इस विद्यालयके बहुभाग छात्रोंने आन्दोलनमें भाग लिया और कितनोंने तो गर्मीमें घर जाना छोड़कर धुआँधार पिकेटिंग की। सन् '३२ की विलिंग्डनशाहीमें जब काशीमें गोलियोंकी बौछारें हुईं उस समय भी कई छात्रोंकी आचार्य और गृहपतिने रातभर खोज की और उन्हें मृत नहीं तो घायल समझकर दुखी हुए। शायद इन लोगोंके इस स्नेहका ही यह फल था कि जुलूसमें आगे होनेके कारण वे छात्र गिरफ्तार कर लिये गये और वे मातृभूमिके लिए बलि होने अथवा आहत होनेके सौभाग्यसे वंचित रह गये। सन् '४० के व्यक्तिगत सत्याग्रहके समय इस विद्यालयके स्नातकोंने संयुक्तप्रान्त भरमें काम किया और एक स्नातकने प्रान्तीय कांग्रेसके मंत्री ऐसे कण्टकाकीर्ण गौरवके पदको सम्हाला। सन् '४२ में तो यह विद्यालय विद्रोहियोंका शस्त्रागार बन गया और इसने इतनी साधना की कि काशीकी शिक्षा संस्थाओंमें अनुपातकी दृष्टिसे इससे बढ़कर राष्ट्रीय शिक्षा-

सस्था काशी विद्यापीठ ही रही। "दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा" कहनेवाले अपने पूर्वजो (सस्कृत पडितो) के पापका प्रायश्चित्त करना भी इस विद्यालयके भाग्यमे ही था।

छात्र संस्थापक तथा आचार्य—*यह सब कैसे सभव हुआ ? क्या सर्वज्ञ सुपार्श्वनाथके जन्म क्षेत्रका ही यह चमत्कार होगा या द्रव्य, काल, भावादिने भी कुछ किया ?* स्याद्वाद पाठशालाका प्रारम्भ भी असाधारण था। शायद ही विश्वमे कोई ऐसी दूसरी शिक्षा-सस्था हो जिसका सस्थापक स्वय उसका विद्यार्थी रहा हो। किन्तु यहाँ यह असभव भी भूतार्थ है। आध्यात्मिक सन्त क्षु० गणेशप्रसाद वर्णी नही, विद्यार्थी गणेशप्रसाद इस सस्थाके सस्थापक थे। स्व० भागीरथजी प्रथम अधिष्ठाता भी इनके साथ पढते थे। स्व० कुमार देवेन्द्र स्वय विद्यार्थी होकर भी मत्री थे। अधिकारी बनकर आये स्व० ब्र० ज्ञानानन्दजी शीतलप्रसादजी आदि अनेक महानुभावोने यहाँ सहर्ष शिष्यत्व स्वीकार किया है। यह भी इस सस्थाका दुर्लभ सौभाग्य है जो इसके एक भूतपूर्व छात्रने गत ३० वर्षोमे इसके आचार्यत्वको श्रोत्रिय *ब्राह्मण-वृत्ति अपनाकर भी सम्हाल रखा है। समाज-पूजित और प्रार्थित होकर भी वे अपनी मातृसस्थाकी* सेवाको सविशेष पुण्यका फल मानते है। इसीलिए पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसाद वर्णीजी "प० कैलाशचन्द्रजी तो विद्यालयके प्राण है" कहकर अपना सतोष व्यक्त करते है।

लोकोत्तर भविष्य—समाजने जिस कल्पनाको लेकर शिक्षा-सस्थाएँ खोलना आरभ किया था उसे पूर्ण करनेका श्रेय स्याद्वाद विद्यालयने सहज ही प्राप्त किया है। किन्तु इन ५० वर्षोमे युग बदल गया है। वाचक अथवा व्याख्याकारो अथवा वादिगजकेशरियोकी ही आवश्यकता नही है, अपितु आवश्यकता है स्रष्टाओ की। अर्थात् जो प्रौढ अध्ययनके बाद वर्तमान विश्वकी समस्याओका अनुगम करे और उनके लिए जैनदृष्टिसम्मत समाधान अपनी कृतियो (Thes s) द्वारा दे सके। शायद ही किसी समय *एकान्तो (पूंजीवाद, श्रमवाद, एकतत्र, जनतत्र) ने ऐसा उग्र रूप धारण किया हो जैसा ईसाकी बीसवी शती*-के इस उत्तरार्द्धमे इन्होने पाया है। स्याद्वादकी शोध ही विश्वको सहारसे बचा सकती है। क्योकि बौद्धिक अहिसा, विचार सहिष्णुता, विरोधी दृष्टियोका समन्वय ही स्याद्वाद है और उसे न जाननेके कारण ही अमेरिका-रूस अणुबमो और उदजन बमो द्वारा अशोककी कलिंग-विजयकी पुनरावृत्ति करना चाहते है।

स्याद्वाद महाविद्यालयके प्रति

इस वर्तमानसे भी उन्नत देखें तुमको ये दिशापाल !

तुम ज्ञान देवता के मन्दिर !
तुम सरस्वती के पुण्य गेह।
तुम पचम युग के समवशरण !
तुम भारत के अभिनव विदेह ॥

तुम 'श्रीगणेश' के ज्ञानालय—
सस्थापन के शुभ श्रीगणेश ।
तुमसे न बनारस ही रसमय
है सरस सकल उत्तरप्रदेश ।

तुम विद्यामृत के रत्नपात्र !
तुम ज्ञानभोग के स्वर्णथाल ।
तुम घोर अविद्या के बाणो—
की वृष्टि निवारण हेतु ढाल ॥
तुम अमर सुहागिन जिनवाणी—
के माथे के सुन्दर सिंदूर ।
तुम मिथ्यादर्शन रूप सुभट
का मद हरने को महा शूर ॥

जन-जीवन मे जो धर्म-दृश्य,
तुमही हो उनके सूत्रधार ।
जन-जीवन में जो ज्ञानचित्र,
तुम ही हो उनके चित्रकार ॥
चिन्तामणि से भी मूल्यमयी
है तव चरणो की पुण्य रेणु !
अवलोक तुम्हारी देनो को
हारी बेचारी कामधेनु ॥
तुम धन्य और तुममे शिक्षा—
पानेवाले विद्वान् धन्य ।
अतएव तुम्हारी औ' उनकी,
जय गा कवि का यह गान धन्य ॥

तुम रहे अछूते वादो से,
रख सदा समन्वयमयी नीति ।
श्री 'राष्ट्रपिता' 'राधाकृष्णन्'
तक को तुमसे है रही प्रीति ॥

है हमे तुम्हारी यह पावन
शुभ स्वर्ण-जयन्ती महापर्व।
अपने उपकारक के गौरव
पर किसको होता नही गर्व ॥

तुम स्वाभिमान से जियो युगो–
तक यो ही ऊपर उठा भाल।
इस वर्तमान से भी उन्नत
देखे तुमको ये दिशापाल ॥

नागौद] सुधेश जैन

धन्यवादाञ्जलिः

पण्डित मलचन्द्र शास्त्री

गगोत्तुङ्गतरङ्गसङ्गिपुलिनप्रान्तस्थितो विश्रुत
विद्वद्भि परित स्तुत स्वमहिमागीत सुविद्याप्रद ।
कृत्याकृत्यविचारचारुचतुरैश्छात्रैस्सदा सभृत
श्रीस्याद्वादपदाङ्कित सुमनसा सेव्योऽस्ति विद्यालय ॥१॥

पुराऽऽश्रयोऽत्रापि मयापि यत्र विद्याजिघृक्षान्वितमानसेन ।
गता ह्यनेका क्षणवत्समास्ते गुर्वङ्घ्रिसेवारतचित्तवृत्ते ॥२॥

सरस्वतीसुन्दरमन्दिरेऽस्मिन्ननन्तमश्रान्तपरिश्रमेण ।
विद्यालवोऽलाभि गुरोर्मयाऽम्बादासाह्वियाऽध कृतजीववृद्धं ॥३॥

स्वकीर्तिकन्यापरिरम्भणाय समुत्सुकान् सेन्द्रचयान निषेद्धुम् ।
दिवगतो भाति तथापि शुभ्रसमज्ञयाऽनश्वरयाऽत्र लोके ॥४॥

विद्वन्मण्डलमण्डनोरुयशसा भ्राजिष्णव सद्गुणै
विद्यामन्दिरभूषणा कविकुलै सम्मानिताज्ञा जनै ।
वन्द्यानिन्द्यपदारविन्दयुगला छात्रैर्मुकुन्दाभिधा
सेव्या नो गुरवो लसन्त्यनितरा विद्यार्थिभि सादरै ॥५॥

अन्येऽप्यध्यापका सर्वे स्वे स्वे कर्मणि तत्परा ।
गुणिगण्यगुणाधारा लसन्त्यत्र सदाशया ॥६॥

छात्राणा परिचर्यया विशदया प्रीत्या च सभाषणे
सच्चारित्रगुणैरनेकविषयेष्वाप्तोत्तरैरुन्नतै ।
भावै स्वोन्नतिलालसाधिकभृतै व्यायामरम्याङ्गकै
कान्त्या शान्तियुजा निसर्गविनयै मोमुद्यते मे मन ॥७॥

विद्यालयस्यास्य निरीक्ष्य रम्या सर्वव्यवस्था मुदितान्तरङ्ग ।
प्रबन्धकेभ्यश्च विदावरेभ्य सुधन्यवादाञ्जलिमर्पयामि ॥८॥

स्याद्वाद विद्यालयके प्राण वर्तमान आचार्य

प० फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री, बनारस

जिनकी पुनीत सेवाओसे श्री स्याद्वाद महाविद्यालय निरन्तर अनुप्राणित होता रहता है वे है इसी विद्यालयके आचार्य श्री प० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री। पण्डितजीने इस विद्यालयमे सन् १९१५ मे प्रविष्ट होकर सन् १९२१ तक अध्ययन किया और इसके बाद मोरेना इसलिए चले गये कि गुरु गोपालदासजी तभी दिवगत हुए थे और उनकी पुनीत सेवाओके फलस्वरूप मोरेना विद्यालयने जो ख्याति सम्पादित की थी वह तब तक छात्रोके लिए आकर्षणका विषय बनी हुई थी। उस समय वहाँ जो विद्वानोका समागम था वह भी इस ख्यातिको द्विगुणित करता था। फलत जिज्ञासु पण्डितजीका अपने लोभका सवरण न कर सकना स्वाभाविक था। पण्डितजीने लगभग दो वर्षतक मोरेना विद्यालयमे रहकर उच्च कोटिके धर्मग्रन्थो का अनुगम किया है।

इस प्रकारसे बालक कैलाशचन्द्र प्रौढ, कर्मठ विद्वान् होकर समाजके सामने आये। विद्वत्ताके अतिरिक्त पण्डितजीमे और भी असाधारण गुण थे। इसलिए मनीषियो और समाजका ध्यान उनकी ओर विशेष रूपसे आकर्षित हुआ। आजीविका-निमित्त उन्हे इधर-उधर भटकना नही पडा, किन्तु अध्ययनकालके समाप्त होते ही अपनी सर्वप्रथम ज्ञानदात्री शिक्षा-सस्थामे आदरके साथ वे अध्यापनके लिए आमन्त्रित किये गये और इसे अपना सुयोग मानकर इन्होने इस विद्यालयके शिक्षाके भारको अपने समर्थ कन्धो पर वहन करनेका निर्णय किया। सम्भवत सन् १९२३ मे इन्होने श्री स्याद्वाद महाविद्यालयके धर्म अध्यापकके पदका भार सम्हाला था और मध्यके लगभग ३-४ वर्षके कालको छोडकर वे बराबर इस तथा प्रधानाध्यापकके प्रतिष्ठित पदपर रहते हुए शिक्षा-प्रचार और समाज-सेवामे लगे हुए है।

काशीका वातावरण व्यक्तित्व और योग्यताके विकासके लिए सर्वाधिक उपयोगी है। जो व्यक्ति यहाँ रहते हुए विकास-पथकी ओर बढना चाहता है वह इससे लाभान्वित हुए बिना नही रहता। पण्डितजीने भी इस परिस्थितिसे लाभ उठाया है। वर्तमानमे उनकी कुशल सस्था-सचालक और अध्यापकके रूपमे तो ख्याति है ही, साथ ही वे सुयोग्य सम्पादक, सुयोग्य लेखक और प्रौढ वक्ताके रूपमे भी

प्रसिद्ध है। इन सब गुणोंके कारण उन्होंने समाजमें और समाजके बाहर जो सम्मान प्राप्त किया है वह सबको मिलना दुर्लभ है। उनकी इन सेवाओंका अध्याय बहुत लम्बा है, तब भी संक्षेपमें उनकी कुछ सेवाओंके उल्लेख करनेका लोभ मैं संवरण नहीं कर सकता हूँ।

जैन समाजमें शिक्षा और साहित्यकी दृष्टिसे पिछली दो-तीन शताब्दियोंमें बहुत ही कम कार्य हुआ है। साधु-संस्था एक तरहसे छिन्न-भिन्न हो चुकी थी। थोड़े-बहुत जो साधु हुए भी वे ज्ञानोपासनाके स्थानमें क्रियाकाण्डपर अधिक भार देने लगे और भट्टारक अपने चमत्कारी जीवनके प्रदर्शनमें ही मोक्ष-मार्गकी सिद्धि मानने लगे। इस कालमें पं० बनारसीदासजी, पं० भगवतीदासजी, पं० भूधरदासजी, और पं० दौलतरामजी आदि कुछ विद्वान् अवश्य हुए हैं जिन्होंने सम्यग्ज्ञानकी ज्योतिको न केवल बुझनेसे बचाया है अपितु अपनी अनुपम रचनाओंके द्वारा उसकी श्रीवृद्धि भी की है। फिर भी इस कालको विशृंखलित काल ही कह सकते हैं, क्योंकि ज्ञानदान और साहित्य-सेवाकी आनुपूर्वी न रहनेसे समाज अपने सांस्कृतिक गौरवको भूलने लगी थी और जहाँ जो रूढ़ि प्रचलित हो गयी थी उसे ही मोक्षमार्ग मानने लगी थी। २०वीं शतीके उन नेताओंको हम धन्य मानेंगे जिन्होंने इस कमी का अनुभव किया और वर्तमान संस्थाओंका निर्माण कर उसकी पूर्ति की है।

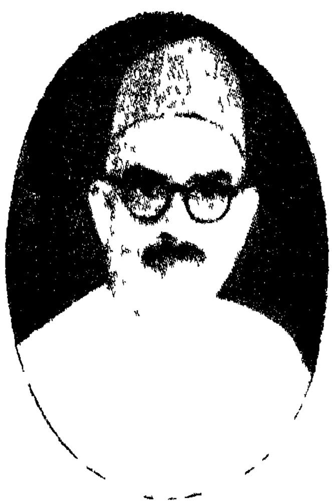
इस स्थितिसे पण्डितजी सुपरिचित थे। उन्होंने देखा कि केवल अध्यापनसे इस कमीकी पूर्ति न होगी। समाज संगठन प्रचार तथा साहित्यके क्षेत्रमें भी कुछ करना ही होगा। जिस समय पंडितजीके मनमें यह मन्थन चल ही रहा था उसी समय आपके मित्र पं० राजेन्द्रकुमारजीका तार मिला। यह तार एक शास्त्रार्थमें सम्मिलित होनेके लिए था। इस तरह अनायास ही पंडितजीका समाज-संगठन तथा प्रचार का जीवन प्रारम्भ हो गया। और देखते-देखते वह यशस्वी संस्था खड़ी हो गयी जो आज भारतीय दिगम्बर जैन संघके नामसे ख्यात है। दिगम्बर जैन समाजकी यह एकमात्र संस्था है जिसके लिए अनेक कमठ कार्यकर्ताओंने जीवन उत्सर्ग कर रक्खे हैं। समाजने शायद ही कभी यह सोचा होगा कि आर्यसमाजियों आदिके आक्रमणोंका काफूर करनेवाली यह संस्था स्याद्वाद विद्यालयके स्नातकों (पं० राजेन्द्रकुमार न्यायतीर्थ पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री, स्व० पं० तुलसीरामजी वाणीभूषण आदि) ने स्थापित की थी। तथा आज भी इसके कर्णधार इसी विद्यालयके स्नातक (पं० जगमोहनलाल शास्त्री, पं० कैलाशचन्द्रजी शास्त्री, प्रो० खुशालचन्द्र गोरावाला आदि) हैं। भा० दि० जैनसंघ रूपी मालाके पंडितजी सूत्र हैं। और आपको लेखक भी इस संस्थाके संचालनके लिए होना पड़ा। प्रारम्भमें आपने प्रचारार्थ अनेक ट्रैक्ट लिखे, बादमें इसके मुख्य पत्र 'जैनदर्शन' और 'जैनसंदेश' का सम्पादन करके जैन पत्रोंके सामने पत्रकारिता का उत्तम आदर्श स्थापित किया। समाजको आज पंडितजीके सम्पादकीय वगैरह प्राप्त नहीं होते इसमें समाजके उन लोगोंका ही दोष है जो व्यक्तिकी अनेक हैसियतों तथा प्रामाणिकताको नहीं समझते हैं। समाजके विचारक नेता होनेके नाते पंडितजीने जैन संदेश द्वारा कतिपय साधुओंको उनके निर्मल आदर्शका ध्यान दिलाना प्रारम्भ किया तो अन्धभक्तोंने उसे गुरुनिन्दा समझकर स्याद्वाद विद्यालयका उसके लिए लाञ्छित करना चाहा। चूंकि पंडितजीकी दृष्टिमें, प्रचारकी अपेक्षा शिक्षाप्रसार अधिक महत्त्वपूर्ण है, फलतः आपने ख्यातिके लोभके साथ संदेशके सम्पादकत्वको भी त्याग दिया और अपनी सत्यता, दृढ़ता तथा विवेकके कारण विरोधियोंको भी अनुगामी बना लिया है।



सरसेठ सरुपचन्द्र हुकुमचन्द्रजी इन्दौर



सेठ मिश्रीलालजी काला, कलकत्ता



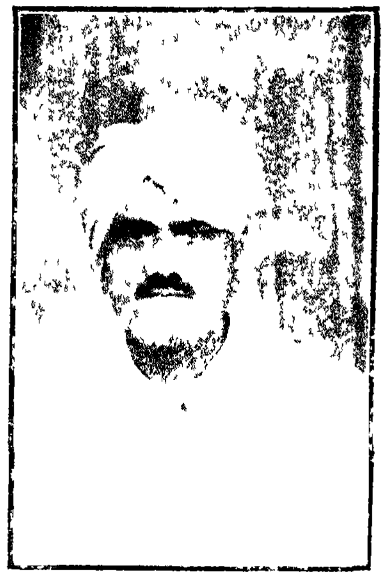
सेठ सोहनलालजी, कलकत्ता



ब्रा० कपूरचन्द्रजी जैन रईश, कानपुर



पं० माणिकचन्द्रजी, न्यायाचार्य



स्व० पं० देवकीनन्दनजी,
व्याख्यान वाचस्पति



पं० वंशीधरजी न्यायालंकार



पं० कैलाशचन्द्रजी शास्त्री

इसके बाद भी सघका साहित्य-विभाग तथा पडितजी पर्यायवाची रहे है। जिस समय सघ अपने साहित्य-विभागको अधिक सक्रिय बनानेमें लगा था उसी समय बम्बईसे श्रद्धेय प० नाथूरामजी प्रेमीने पडितजीसे और इनके तत्कालीन सहयोगी प० महेन्द्रकुमारजी न्यायाचार्यसे अनुरोध किया कि अध्यापन-कार्यके सिवा आप लोगोको प्राचीन साहित्यके उद्धारकी ओर भी ध्यान देना चाहिए। प्रेमीजी केवल प्रस्ताव करके ही नही रहे किन्तु माणिकचन्द्र ग्रन्थमालाकी ओरसे साधन भी प्रस्तुत कर दिये। इस तरह इनका साहित्य शोधके क्षेत्रमे पदार्पण हुआ। पडितजीने श्री प० महेन्द्रकुमारजी न्यायाचार्यके साथ सर्वप्रथम न्यायकुमुदचन्द्रका सम्पादन ही नही किया है बल्कि उसपर विस्तृत और परिष्कृत भूमिका भी लिखकर इतिहासकी बिखरी हुई कडियोको जोडा है।

जैन समाज और उसके बाहर एक ऐसे मौलिक ग्रन्थकी आवश्यकता अनुभव की जाती थी, जिसका अध्ययन करनेसे जैनधर्म और सस्कृतिकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमिका प्रामाणिक ज्ञान प्राप्त हो जाय। पडितजीका ध्यान इस ओर पहिलेसे था तथापि जिस निमित्तने भी उन्हे इसकी पूर्तिके लिए प्रेरित किया वह था—प्रसिद्ध उद्योगपति सेठ लालचन्द्रजी उज्जैनका वह आह्वान जो उन्होने एक हजार रुपया पुरस्कारकी घोषणा करके दिया था। इस प्रकार समयकी पुकारपर एक ऐसा अनुपम ग्रन्थ लिखकर पडितजीने समाजको प्रदान किया है जिसे जैनधर्म-विषयक श्रेष्ठ पुस्तक माना गया है तथा विश्वविद्या-लयोके पाठ्यक्रमोमे रक्खा गया है।

न्यायकुमुदचन्द्रके सम्पादनके बाद पडितजी जयधवलाके सम्पादनमे भी पूरा सहयोग दे रहे है। और उन्होने उसके प्रथम भागकी भूमिका लिखकर सिद्धान्तग्रन्थोकी महत्ताको जगत्के सामने रक्खा है। एक प्रकारसे शोध तथा साहित्य निर्माण हीमे विद्यालयसे बचा पडितजीका सारा समय जाता है। विद्यालयमे बचा इसलिए कि पडितजी प्रारम्भकालसे ही विद्यालयके परम सेवक है। यह सेवा केवल अध्यापनकार्य तक ही सीमित नही है। विद्यालयकी आर्थिक पूर्ति करना भी इन्हीके बसकी बात है। इन्होने जो व्यक्तित्व और प्रतिष्ठा प्राप्त की है उसका पूरा लाभ विद्यालयको मिला है। स्याद्वाद विद्या-लय और पडितजीका वही सबध है जो शरीर और आत्माका होता है। अपने शरीरकी सम्हालसे कही बहुत अधिक चिन्ता पडितजीको स्याद्वाद विद्यालयरूपी शरीरकी करनी पडती है।

पडितजीके गुरुत्व, लेखकत्व और नेतृत्वसे भी बढकर उनका वक्तृत्व है। वह अपनी विशेषता रखता है। जैन समाजके ऐसे बहुत ही कम जलसे होते है जहाँ वे आमन्त्रित न किये जाते हो। अपने वक्तृत्व गुणके कारण वे समाजपर छा जाते है। इसी एक विशेषताके कारण वे समाज द्वारा 'सिद्धान्तरत्न'-जैसी अनेक सम्मानित उपाधियोसे विभूषित किये गये है। पडितजीके प्रत्येक भाषणमे उनके अगाध सैद्धान्तिक और व्यावहारिक ज्ञानकी पुट रहती है, विशेषता यही है कि वह समस्त श्रोताओके मनमें पैठ जाता है।

जहाँ पंडितजीने सार्वजनिक जीवनमें इतनी ख्याति और प्रतिष्ठा प्राप्त की है वहाँ उनके वैयक्तिक जीवनकी भी अपनी कुछ विशेषताएँ है। यदि हम उन विशेषताओको सफलताकी कुजी कहें तो भी कोई अत्युक्ति नही होगी। ससारमे ऐसे बहुत ही कम व्यक्ति होगे जो गुणीकी परख कर उसका सम्मान

करना जानते हो। बहुत-से व्यक्ति तो ऐसे ही होते है जो मुखपर प्रशंसासूचक वाक्योकी भरमार करते है परन्तु सामनेसे हटते ही उपहास करने-करानेमे ही आनन्द मानते है। किन्तु पंडितजी इस दोषसे सर्वथा मुक्त है। उनका जिसके बाबत जो ख्याल होता है उसे उसके सामने या पीठपर एक रूपमे व्यक्त करते है। जो सम्पर्क बनाते है उसका जीवन भर निर्वाह भी करते है। इसी एक गुणके कारण आज उनके अगणित मित्र और अनुयायी दृष्टिगोचर होते है। उनकी अपनी यह प्रामाणिकताकी विशेषता स्वीकृत कार्यके निर्वाहके प्रति भी पायी जाती है। साधारणत वे किसी कार्यको स्वीकार करते समय बहुत कुछ सोच-विचार करते है किन्तु एक बार किसी कार्यका निर्णय कर लेने के बाद अनेक प्रतिकूल परिस्थितियोके उत्पन्न होनेपर भी वे उसका अन्ततक निर्वाह करते है। साधारणत पंडितजी व्यवहारमे उदासीन दिखलायी देते है, पर यह उनका बाह्य रूप ही है। भीतरसे उन-जैसा सहृदय प्रकृतिवाला व्यक्ति होना भी दुर्लभ है। ये कुछ विशेषताएँ है जो पंडितजीके जीवनमे दृष्टिगोचर होती है।

ये ऐसी विशेषताएँ है जो पंडितजीको उठाए हुए है और उनके लिए सेवाका क्षेत्र तैयार करनेमे सहायता पहुँचा रही है। ऐसा प्रभावशाली व्यक्तित्वका योग श्री स्याद्वाद महाविद्यालयको मिला है। इसे समाजका सौभाग्य ही मानना चाहिए। ऐसे प्रसगपर, जब कि पंडितजीकी ही सेवा और अध्यवसायके परिणाम-स्वरूप श्री स्याद्वाद महाविद्यालय अपने पचास वर्ष पूर्ण करके इक्यावनवे वर्षमे सफलतापूर्वक पदार्पण कर रहा है, हम पंडितजीका उनकी इन सेवाओके प्रति मन पूर्वक अभिनन्दन करते है और यह कामना करते है कि वे शतायु हो और अपने जीवनके अन्तिम क्षणतक इसी प्रकार विद्यालयकी सेवा द्वारा जैन संस्कृति और समाजको अनुप्राणित करते रहे।

ज्ञानका कल्पवृक्ष

पं० सुमेरचन्द्र जैन, न्यायतीर्थ, शास्त्री, साहित्यरत्न

विश्वोद्धारक भगवान् महावीर स्वामीने जिस मङ्गलमय शासनका व्याख्यान दिया था, स्वामी समन्तभद्र जैसे प्रतिभासम्पन्न दिग्गज आचार्योने जिस वीर शासनकी सर्वतोमुखी उन्नति की थी, विदेशी शासनके प्रभाव और दिगम्बर जैनाचार्योंके अभावके कारण जिस शासनकी दिव्य ज्योति दिनोदिन क्षीण होती जा रही थी ऐसे समयमे आशा और प्रकाशकी ज्योतिर्मयी आभा पूर्वमे प्रस्फुटित हुई। शिक्षा और सभ्यताके केन्द्र, विद्याके घर बनारसमे एक ऐसी संस्थाकी नीव डाली गयी, जिसने अपने उदयकालसे लेकर आजतक एक ऐसे अभावकी पूर्ति की जिसका होना असभव था।

जैन समाजमे आज जो विद्वान् दिखाई दे रहे है, जिनके द्वारा देश, समाज और जातिकी बडी भारी सेवा की जा रही है, जैनधर्मकी चर्चा जो देश के कोने-कोनेमें सुनाई दे रही है इसका श्रेय श्री स्याद्वाद महाविद्यालयको ही है। जिन महानुभावोने अपने मुक्त हस्तसे इस कल्पवृक्षको सींचा है उन्होने विद्याके इस महायज्ञमे अपनी सर्वश्रेष्ठ आहुति दी है।

सस्कृत विद्याके केन्द्र बनारसमे जैनधर्मकी शिक्षण-सस्थाका न होना बडी भारी खटकने योग्य बात थी और उस समय जब कि ब्राह्मणोने अपना एकाधिपत्य सस्कृत-शिक्षणपर समझ रक्खा था । जैन छात्र जैनधर्मकी शिक्षा पानेके लिए लालायित थे, उनके ज्ञानकी पिपासा शान्त करनेका कोई उत्तम साधन न था , ऐसे समय दो तेजस्वी मूर्तिमान, शक्ति-सम्पन्न विशिष्ट व्यक्ति आगे आये और उन्होंने अपनी एकनिष्ठा, दृढ़ आकांक्षा और बलवती इच्छाशक्तिसे एक ऐसा ज्ञानका अकुरारोपण भागीरथीके पवित्र तटपर किया जो आज वटवृक्षके रूपमे हरा भरा और पल्लवित हो रहा है, जिसकी सघन शीतल छायामें देशके विभिन्न प्रान्तो, नगरो और ग्रामोमे आ-आकर हजारो विद्यार्थी लाभ ले चुके और ले रहे है।

ऐसी जैनधर्मके गौरवको अक्षुण्ण रखनेवाली अत्यन्त उपयोगी सस्था अपने पचास वर्ष व्यतीत करके इक्यावनवे वर्षमे पदार्पण कर रही है और अपना स्वर्ण जयन्ती-महोत्सव उन महापुरुषकी छत्रच्छायामें मना रही है जिनके शक्तिसम्पन्न हाथो द्वारा उसकी नीव रक्खी गयी थी । सस्थाके बढते हुए वभव और फलते-फूलते परिवारका देख उनकी आत्मामे अपार हर्ष होगा । हम सब उस सस्थाके भूतपूर्व छात्र हृदयमे आकाक्षा करते है कि सस्थाकी दिनोदिन उन्नति हो । और देशके गौरव जैनधर्मके महान् प्रचारक और विद्वानोके रक्षक पूज्य वर्णीजी महाराजकी सस्था वीर शासनके प्रचारमे सर्वतोमुखी हो ।

इसलिए इस स्वर्ण-जयन्ती-महोत्सवके पुनीत अवसरपर यह निश्चय अवश्य होना चाहिए कि सस्थाका अन्यत्र भवन बनना आवश्यक है, जहाँ २५०-३०० विद्यार्थी सस्थामे शिक्षण प्राप्त करनेके साथ साथ अन्य विषयोका शिक्षण दूसरे स्थानोमे प्राप्त कर सके ।

सस्थामे इस समय इस प्रकारके विभागकी आवश्यकता है जहाँ जैनधर्मके उच्च कोटि के उपदेशक तैयार हो, जहाँ विद्वान रिसर्च कर सके, विदेशी विद्वान् जो जैनधर्मका अध्ययन करना चाहे उनके पठन-पाठनकी सुविधा हो । हो सके तो प्रेस का कार्य भी चालू किया जाय जहाँ पब्लिकके कामके साथ-साथ 'कल्याण'-जैसा चरित्र-निर्माणका मासिक पत्र चालू किया जाय । और यह विभाग स्वावलम्बी बन सके, तो इसीके द्वारा प्रचारका महत्वपूर्ण कार्य किया जाय । यदि इस प्रकारका कार्य शुरू हो जाय तो सस्थाके कि विकासका और अवसर बढ जायगा ।

आशा है, सस्थाके अधिकारी इस पुनीत अवसरपर अवश्य इस प्रकारका निश्चय करेंगे ।

हम सबकी हृदयमे आकांक्षा है कि सस्थाका स्वर्ण-जयन्ती-महोत्सव सफल हो । प्रात स्मरणीय वर्णीजी महाराज शतायु हो । उन्होने जैन समाजका महान् उपकार किया है और वीर शासनकी सहस्रगुणी वृद्धि की है ।

हमे पूर्ण विश्वास है कि समाज वर्णीजीके लगाये गये इस ज्ञानके कल्पवृक्षको सदैव हरा भरा और पुष्पित बनाये रखनेके लिए अपने मधुर हार्दिक सहयोग रूपी जलसे सिंचित करता रहेगा ।

समाजकी एकमात्र शिक्षा-संस्था

पं० लालबहादुर शास्त्री, इन्दौर

स्याद्वाद विद्यालयमे मुझे विद्यार्थी बनकर रहनेका सु-अवसर नही मिला पर अपने अध्ययनकालमे मै सदा उधर जानेके लिए लालायित रहा। उसका कारण था स्याद्वाद विद्यालयका उन्मुक्त वातावरण, मानसिक बन्धनका अभाव और इच्छानुसार अध्ययन करने तथा परीक्षा देनेकी उपलब्ध सहज सुविधाएँ, जो किसी भी विद्यार्थीके लिए आकर्षणका केन्द्र हो सकती थी।

मै देखता हूँ कि यह आकर्षण स्याद्वाद विद्यालयका अब भी बना हुआ है। वहाँके विद्यार्थी किसी खास साँचेमे ढाले नही जाते बल्कि उन्हे देखकर दूसरी सस्थाए अपने साँचे तैयार करनेका प्रयत्न करती है।

शिक्षण-सस्थाओ द्वारा कोमलहृदय बालकोपर जो बन्धन जकडे जाते है वे केवल आचरण तक ही सीमित रहने चाहिये हृदय और मस्तिष्क उससे बरी रहना चाहिये। स्याद्वाद विद्यालय इसके लिए आदर्श स्थान है। जब कि दूसरे विद्यालयोमे विद्यार्थियोपर आतक तो रक्खा जाता है पर उनके हृदय तक पहुँचनकी चेष्टा नही की जाती। मानो वे विद्यालय अधिकारियोके और अध्यापकोके लिए है विद्यार्थियोका उनमे कोई सबंध नही है।

समाजमे अनेक शिक्षा-सस्थाएँ है जो अनेक वर्षोसे काम कर रही है। उनमेसे कई मर गई, कई पिछड गई, कई अतिम साँस ले रही है। केवल एक स्याद्वाद विद्यालय है जो अपने उसी गौरव और आदर्श को लेकर समाजकी ठीक दिशा मे सेवा कर रहा है।

स्याद्वाद विद्यालयकी एक विशेषता यह रही कि जहाँ अन्य विद्यालयोने केवल शास्त्री विद्वान तैयार करके दिये वहाँ इसने शास्त्री, आचार्य, डाक्टर, वैद्य, इन्जीनियर, बी ए और एम ए आदि सभी तरहके विद्वान् तैयार करके दिये। इस तरह यह छोटा-सा विद्यालय जैन समाजमे विश्वविद्यालयकी पूर्ति कर रहा है।

सन् '४२ तथा अन्य तात्कालिक राष्ट्रीय आन्दोलनोमे इस विद्यालयके विद्यार्थियोने जो राष्ट्रकी सेवाकी है वह कभी भुलाई नही जा सकती। बाबू छेदीलालजीके मदिरके नीचे उन्होने शस्त्रास्त्रोका सग्रह किया था, और एक क्रान्तिकारीकी तरह देशके उद्धारमे जुट गये थे। यह श्रेय सभवत अन्य विद्यालयोको नही है।

देवीके आगे बलिदानोको रोकनेके लिए यहाँके विद्यार्थियोने जी-तोड परिश्रम किया है और कुछ ने तो इसके लिए अपना जीवन ही दे दिया है। इस तरह सामाजिक और राष्ट्रीय क्षेत्रमे स्याद्वाद विद्यार्थी कभी पीछे नही रहे। अपने अध्ययनको साथ रखते हुए सेवाके क्षेत्रमे उनकी प्रवृत्तियाँ सदा बहुमुखी रही है और यही कारण है कि वहाँके विद्यार्थी अच्छे निष्ठावान् और सक्रिय विद्वान् होते है और उन्हे बिना किसी सकोचके दायित्वपूर्ण कार्य सौपा जा सकता है।

यहाँके विद्यार्थियोमे अध्ययनकी तीव्र रुचि रहती है। मैने जिन विद्यालयोमे पढा वहाँ सुपरिन्टेन्डेन्ट होते थे। वे हम विद्यार्थियोको जगाते, सुलाते। यदि पढते समय कोई सोता तो बेत फटकारते, जुर्माना

करते, फिर भी विद्यार्थी सोते थे। पर स्याद्वाद विद्यालयमे मैने देखा कि सुपरिन्टेन्डेन्ट यहाँ भी है, लेकिन पढ़नेके पीछे किसी विद्यार्थीपर उन्हे बेत नही फटकारने पडते न जुर्माना ही करना पडता है। विद्यार्थी स्वय ही चिन्ताके साथ पढते है। दो-दो तीन-तीन परीक्षाएँ देते है और अच्छे नम्बरोमें पास होते है।

बात यह है कि वहाँके कार्यकर्ता अधिकारोके नामपर विद्यार्थियोका सारा बोझ अपने ऊपर लाद लेनेमें अपने कर्तव्यकी इतिश्री नही समझते। विद्यार्थियोके प्रत्येक कार्यमे दस्तन्दाजी करना उन्हे अपने दायित्वके ज्ञानसे वञ्चित करना है। ऐसा करनेमे उनमे निर्माणकी भावनाएँ पैदा नही होती और वे सदाके लिए दब्बू, कायर तथा विचारशक्तिसे हीन हो जाते है।

समाजमे इन दिनो जिनकी गति-विधियोमे मैं परिचित हू ऐसे तीन विद्यालय काम कर रहे है, काशी इन्दौर और मोरेना। इन्दौर और मोरेनाने इधर १०-१५ वर्षोमे कोई उल्लेखनीय प्रगतिकी हो ऐसा मुझे ध्यानमे नही आता। जब कि काशीमे बराबर प्रतिवर्ष आचार्य, एम० ए०, एम० कॉम०, ए० एम० एम० आदि तैयार होते रहते है और जो विभिन्न क्षेत्रोमे ऊँचे पदोपर काम कर रहे है। इन तीन विद्यालयोके विद्यार्थियोका अपना-अपना ढग, अपना-अपना व्यक्तित्व है। मोरेनाका विद्यार्थी एक चहारदीवारीमे रहता है—उस चहारदीवारीमे जिसमे एक लम्बा रास्ता है पर दूर क्षितिजके दर्शन नही होते। इन्दौरके विद्यार्थी की कोई चहारदीवारी नही है। खुला मैदान है, ऊबड-खाबड जमीन होनेमे मार्ग या पगडण्डीका कोई चिह्न नही है, चारो दिशाओके क्षितिज उन्मुक्त है, चाहे जिधर दौड पडता है। काशीके विद्यार्थीकी अपनी चहारदीवारी है जिसकी दीवारे पारदर्शी है, जिनमे सूर्यका प्रकाश आता है और दूर क्षितिजके दर्शन होते है। मार्ग निश्चित है, उनमेसे एकको चुनकर वह उसे अपनाता है। इस प्रकार विभिन्न विद्यालयोमे स्याद्वाद विद्यालयकी स्थितिको भली भाँति आँका जा सकता है।

स्याद्वाद विद्यालयने अन्य विद्यालयोकी तरह अपने प्रचारक कभी नही घुमाये। उसका कार्य और उसकी उपयोगिता ही उसके लिये सबसे बडे प्रचारक रहे। अत धनिक सस्था न होनेपर भी धनके अभावमे उसका कोई काम न रुका जब कि ब्यावर और सहारनपुर विद्यालय धनके अभावमे बन्द कर देने पडे तथा इन्दौर विद्यालयमे विद्यार्थियोकी सख्या बहुत कम कर देनी पडी।

स्याद्वाद विद्यालयकी एक उल्लेखनीय बात यह भी है कि वहाँके वे अधिकारी जो रात दिन विद्यालयका काम देखते है अर्थात् अधिष्ठाता और मत्री शिक्षित और विद्वान् है। युगकी माँग और विद्यार्थियोके हृदयोको शिक्षित व्यक्ति जितना अच्छी तरह समझ सकता है उतना दूसरा नही। हर्ष है कि स्याद्वाद विद्यालय इस आदर्शको अपनाए हुए है। मोरेना विद्यालयमे यही नियम था, नियम तो अब भी है पर विद्यालयके दुर्भाग्यसे आज उसका पालन नही होता। यो किसीपर पडिताई थोपकर उस नियमका निर्वाह करना बात अलग है।

सच तो यह है कि स्याद्वाद विद्यालय ही आज समाज का एकमात्र विद्यालय है। विभिन्न प्रान्तोके सबसे अधिक विद्यार्थी इसी विद्यालयमे पढते है। विभिन्न विषयोकी शिक्षा लेना इसी विद्यालयमे सभव है। सबसे अधिक स्नातकोकी सख्या यहीसे निकलती है। आडम्बर और दिखावेके लिए विद्यार्थियोपर निरर्थक अकुश नही लगाये जाते। व्यक्तिगत विचार उनपर नही लादे जाते। उन्हे सोचने-

समझनेके लिए खुला वातावरण दिया जाता है। यहाँ के कार्यकर्ता विद्यालयके लिए जीते मरते हैं। श्री १०५ पूज्य क्षुल्लक गणेशप्रसादजी वर्णीका इसपर वरद हस्त है। गंगाका सुरम्य तट और काशीके उपयुक्त क्षेत्रने तो इसपर चार चाँद लगा दिये है। ऐसी उपयोगी और आदर्श संस्थाके प्रति समाजका कर्तव्य है कि एकमात्र इसे अपनी संस्था समझकर इसे धनकी कमी न महसूस होने दे।

इसका सबसे अच्छा उपाय है कि प्रत्येक नगरके मंदिरोंमें विद्यालयकी दान पेटियाँ हों और प्रतिवर्ष उसमें एकत्रित धन संस्थाको भेज दिया जाय।

अथवा विद्यालयमें एक फंड उच्च शिक्षाके लिए भी कायम किया जा सकता है। विद्यालयकी पढ़ाई समाप्त कर तीव्र मेधावी छात्र भारतमें या विदेशमें उच्च शिक्षा लेना चाहे तो संस्था उन्हें छात्र-वृत्ति दे। इस फंडका नाम 'गणेश वर्णी फंड' रक्खा जाय। यह फंड स्वर्ण-जयन्तीपर ही कायम किया जाना चाहिये। पूज्य वर्णीजी और विद्यालयकी स्वर्ण-जयन्ती मनानेका इससे अच्छा तरीका और कोई नहीं हो सकता।

विभिन्न शास्त्रज्ञोंका जनक गुरुकुल

पं० नेमिचन्द्र शास्त्री, ज्योतिषाचार्य

भगवती भागीरथीके तीरपर भगवान् सुपार्श्वनाथकी पावन जन्मभूमिमें स्थित, नाना शास्त्रज्ञोंके जनक गुरुकुल श्री स्याद्वाद विद्यालय काशीका जैन समाजमें वही स्थान है, जो आर्य समाजमें गुरुकुल काँगड़ीका। गंगा हास्य-फेन उगलती हुई हर-हर, कल-कल करती हुई नित्य-प्रति इसका पाद प्रक्षालन करती है। इसके गौरव-गानको गाती हुई मन्दाकिनीकी लहरोंके आँचल हिलते हैं, बुलबुले उठते हैं और तब उनके इस गौरव-गानसे दिग्दिगन्त गुंजित हो उठता है।

दिन आते और जाते हैं पर अपनी मधुर स्मृतियाँ का मानस-पटलपर सदाके लिए अंकित कर जाते हैं। मानव स्वभावकी यह निजी विशेषता है कि जो घटना उसके मर्म को छू जाती है वह सर्वदाके लिए टंकोत्कीर्ण हो जाती है। और फिर ऐसा दिन, जिस दिन उसने मानवताकी मंजिलपर पहला कदम रखा हो, कैसे विस्मृत किया जा सकता है? मेरे जीवनमें गुरुकुल-पदार्पणके प्रथम दिवसकी स्मृति आज भी ज्यों-की-त्यों वर्तमान है। इस गुरुकुलकी महती कृपासे ही ज्ञानकण प्राप्त हुए है, तथा अपनेको जानने और समझनेकी क्षमता आई है।

सन् १९३३ की ४ जुलाईकी सन्ध्याको मैं कल्पनाके कमनीय पंखों पर उड़ता हुआ, अन्तस्में अनेक भावनाओंको समेटे, भयसे विलोड़ित हृदयको किसी तरह थामे हुए आगरा से ट्रेन पर आरूढ़ हुआ। सहसा नेत्रोंके समक्ष गुरुकुलके शिक्षकों एवं विद्यार्थियोंका काल्पनिक चित्र प्रस्तुत हुआ। नन्हें-से मस्तिष्कने सुनी-सुनाई बातोंके आधारपर इस विद्या-गुरुकुलके संस्थापक एवं आद्य स्नातक श्री पूज्यचरण महामना

गणेशप्रसाद वर्णीका चित्र खींचा, उनकी सौम्य मूर्तिके दर्शन हुए। मनने कहा—तुम देहाती हो, अवस्था भी १४-१५ वर्ष की है, जहाँ जा रहे हो वहाँकी भाषा भी समझ सकोगे ? अब भी समय है, घर लौट चलो। दूसरे ही क्षण पुन वही सौम्य मूर्ति सामने प्रस्तुत हो धैर्य देने लगी—बढो, आगे बढो, तुम्हारा मगल होगा। जिस गुरुकुलने सहस्रोका अज्ञान-तम हटाया है, जिसके पावन रजकणोका स्पर्श कर अनेक चन्द्र, लाल, कुमार, नन्दन शास्त्री और आचार्य बन गये है, क्या वह तुम्हे अपने क्रोडमें प्रश्रय न देगा ? मै इस प्रकार अनन्त कल्पनाओके साथ आँखमिचौनी खेलता हुआ प्रात बनारस आ पहुँचा।

५ जुलाई १९३३ के प्रभातमें उल्लासकी वीणा पर भव्य भावनाओकी कोमल अँगुलियोको फेरते हुए स्याद्वाद विद्यालय में प्रवेश किया। प्रवेश-द्वार पर ही श्री ज्ञानचन्द्रजी गोटेगाँवसे भेंट हुई। उन्होने मुझे सामान उतारनेमे सहायता दी तथा मुझे नीचे विद्यालय-भवनमे पहुँचा दिया। यह समय विद्यालयके अध्यापनका था। सभी छात्र अपनी-अपनी कक्षाओमे शान्तिपूर्वक अध्ययन कर रहे थे। मेरे सामने अब तक स्कूल का ही चित्र था, जहाँ एक साथ सैकडो छात्र बैठते है और वे स्कूल-समयके बीचमे स्कूल से बाहर नही जा सकते, किन्तु इस गुरुकुलमे जिन छात्रोके अध्ययन का जो घण्टा रहता है, वे उस घण्टेमे अध्ययन करते है और अवशिष्ट छात्र स्वतन्त्र रूपसे अध्ययन करते है या अपनी अन्य दिनचर्यामे रत रहते हैं। इस पद्धतिसे समयकी बचत होती है तथा अभ्यास करनेके लिए पूरा समय मिल जाता है। और यही कारण है कि यहाँके स्नातक एक साथ चार-चार परीक्षाओकी तैयारी कर लेते हैं तथा परीक्षाओमें पूर्ण सफलता पाते हैं।

उन दिनो विद्यालयके गृह-प्रबन्धक श्रीमान् बाबू पन्नालालजी चौधरी थे। वे विद्यालय भवनके एक किनारे कुर्सीपर बैठे हुए थे। उनके सामने घडी टिक्-टिक् कर रही थी। मै सहमते, सकुचाते और भय खाते हुए उनके समक्ष प्रस्तुत हुआ। उन्होने पूछा—"आपके पास हमारे यहाँसे भेजा गया स्वीकृतिपत्र है ?" मैने उत्तर दिया—'नही।' वे बोले—"तब आप यहाँ किस प्रकार प्रवेश पा सकेगे ?" मैने नम्र शब्दोमे उत्तर दिया—"शीघ्रता रहनेके कारण मै स्वीकृति नही मँगा सका हूँ। अब प्रवेश-पत्र भरकर दिये देता हूँ।" उन्होने कहा—'अभी आप अपना सामान रखिये और भोजनके उपरान्त आप इस गुरुकुलके प्रधानाचार्य श्री प० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्रीसे मिलकर ठीक कर लीजियेगा।" मैने उनके आदेशानुसार अपना सामान रख दिया। मुझे चौकी, बेंच आदि आवश्यक सामान एव रहनेके लिए निवासस्थान मिल गया।

भोजनोपरान्त मैने श्रद्धेयचरण अपने भावी गुरुवर्यके समक्ष प्रवेश किया। उन दिनो वे भी ऊपरी छात्रावासके एक कमरेमे निवास करते थे। मैने पाया कि गुरुदेवका हृदय नारियलके समान है, ऊपरसे कठोर पर अन्तस्मे छात्रोके प्रति ममताका अजस्र स्रोत। वे छात्रोके उतने ही हितैषी है, जितना पिता अपनी सन्तान का। उन्होने मुझ भोले देहाती किशोरको सब प्रकारसे सावधान किया तथा मुझे अपने इस वर्षके अध्ययनके लिए क्या-क्या लेना चाहिये, यह भी निश्चित कर दिया। मुझे एक पत्र श्री बाबू हर्षचन्द्रजीके नाम दिया, जो विद्यालयके अधिष्ठाता थे तथा आज भी है। इसी दिन सन्ध्या के समय विद्यालयके तत्कालीन भृत्य श्री शिवमगलप्रसादके साथ मै अधिष्ठाताजीके यहाँ पहुँचा। अधिष्ठाताजी वकील है, अत उन्होने दो-चार वैधानिक प्रश्न पूछे और पूज्य गुरुदेवके पत्रके आधारपर मुझे स्वीकृति

द दी। मैं हर्ष-विभोर होता हुआ काशीकी गलियोसे निकलता हुआ श्री शिवमगलजीके साथ नौ बजे रात्रिमे विद्यालय वापस लौटा। अगले दिन विधिवत् स्वीकृति मुझे मिल गयी और कक्षाओमे अध्ययन करने जाने लगा।

मैंने पाया कि कुछ विद्वान् छात्र न्यायशास्त्रके अध्ययनमे तल्लीन है, कुछ व्याकरणके अध्ययनमे प्रवृत्त है और कुछ साहित्य-रसोदधिमे गोते लगा रहे है। इन विभिन्न विषयोके अध्येता विद्वान् छात्र बन्धुओको देखकर मेरे मनमे एक भावना आई कि मैं एक ऐसे नवीन विषयका अध्ययन करूँगा, जो इन सबसे भिन्न होगा। शैशवसे ही मेरी रुचि ज्योतिषशास्त्रके अध्ययनकी ओर थी, मैं अपनी इस जन्मजात जिज्ञासाकी तृप्ति करना चाहता था। अत मैंने मन-ही-मन सकल्प किया कि प्रथमा परीक्षा उत्तीर्ण करनेके उपरान्त ज्योतिषशास्त्रका अध्ययन करूँगा और इन्ही विद्वान् छात्र बन्धुओके समान अपने विषयका ज्ञान प्राप्त करूँगा। भावनाने सकल्पका रूप तो ले लिया पर इसे क्रियात्मक रूप सन् १९३५ में व्याकरण मध्यमा प्रथम खण्ड उत्तीर्ण करनेके उपरान्त मिला। इसका श्रेय विद्यालयके सुयोग्य मन्त्री श्री बाबू सुमतिलालजी और प्रधानाचार्य पूज्य गुरुदेव श्रीमान् प० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्रीको है। उस समयके न्यायाध्यापक श्रीमान प० महेन्द्रकुमारजी न्यायाचार्यने भी मुझे पर्याप्त प्रेरणा दी। प्रधानाचार्यकी कृपासे तो मुझे सभी प्रकारकी सुविधाएँ प्राप्त हुई। ये सुविधाएँ केवल मुझे ही नही मिली, बल्कि सभी अध्ययनशील छात्रोको दी जाती थी। इस ज्ञानगगासे स्वेच्छया अपनी शक्ति और योग्यतानुसार सभी अपनी-अपनी ज्ञानपिपासाको शान्त कर रहे थे।

पन्द्रह वर्षकी समाज-सेवाके आधारपर यह निष्पक्ष रूपसे कहा जा सकता है कि अध्ययनशील छात्रोको जितनी सुविधाएँ यहाँ प्रदान की जाती है उतनी सभवत अन्यत्र नही। इसके कार्यकर्त्ताओंके प्रत्येक कार्यके मूलमे एक भावना दृष्टिगत होती है। वे अपने स्नातकोका सर्वागीण बौद्धिक विकास चाहते है। भविष्णु छात्रोको विद्यालयमे सभी प्रकारकी सभव सहायता दी जाती है। और इसीका यह सुपरिणाम है कि इस नयी पीढीमे आज व्याकरण, साहित्य, न्याय, जैनदर्शन, आयुर्वेद, ज्योतिष, बौद्ध-दर्शन सर्वदर्शन प्रभृति विषयोके आचार्य दि० जैन समाजमे विद्यमान है। मेरे ही साथियोंमे श्री दरबारीलालजी न्यायाचार्य, श्री राजकुमारजी साहित्याचार्य, श्री अमृतलालजी जैन-दर्शनाचार्य, श्री राजधरलालजी व्याकरणाचार्य, श्री उदयचन्द्रजी बौद्ध दर्शनाचार्य एव स्व० श्री गुलाबचन्दजी आयुर्वेदाचार्यकी सेवाओंसे आज जैन समाज सुपरिचित है। जैनधर्मके उच्च कोटिके ग्रन्थोका अध्ययन तो यहाँ सभी छात्र करते है।

सस्कृत साहित्यके विभिन्न शास्त्रोके अध्ययनके साथ-साथ अग्रेजी भाषा, अर्थशास्त्र, वाणिज्य, दर्शन, हिन्दी, सस्कृत, राजनीति, पुरातत्त्व प्रभृति विभिन्न विषयोमे एम० ए० परीक्षा भी यहाँके स्नातकोने उत्तीर्णकी है। वर्तमानमे पौर्वात्य और पाश्चात्य उभय विषयोके विज्ञ आचार्य इसी गुरुकुलकी कृपाके फलस्वरूप समाज सेवामे प्रवृत्त है। श्री प्रो० खुशालचन्द्रजी गोरावाला एम० ए०, साहित्याचार्य, श्री प्रो० विमलदासजी एम० ए०, एल-एल० बी०, न्यायतीर्थ, श्री सुमेरचन्दजी बी० ए०, एल्-एल० बी०, न्यायतीर्थ, शास्त्री, श्री दुलीचन्दजी एम० एड० शास्त्री, श्री शीतलप्रसादजी एम० ए०, शास्त्री, श्री प्रेमचन्दजी एम० कॉम०, साहित्यशास्त्री, श्री प्रो० देवेन्द्रकुमारजी एम० ए०, साहित्याचार्य, विद्यार्थी

श्री नरेन्द्र बी० ए०, साहित्याचार्य, डॉ० गुलाबचन्दजी व्याकरणाचार्य, एम० ए०, पी-एच० डी०, श्री प्रेमसागरजी एम० ए०, साहित्याचार्य, डा०भागचन्दजी, डा० पूर्णचन्दजी प्रभृति विद्वान उल्लेख योग्य हैं।

यह गुरुकुल स्नातकोंके ज्ञानका एकांगी विकास नहीं करता, प्रत्युत सर्वांगीण विकास करता है। विद्यालय-भवनके प्रदाता स्वनामधन्य स्व० श्री बाबू देवकुमारजी और इसके संस्थापक पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसादजी वर्णी एवं इसके संवर्द्धनकर्त्ता श्री ब्र० शीतलप्रसादजीका पुण्य इसे प्राप्त है। अतएव यह कल्पवृक्ष सर्वथा समाजको अमृत-फल देता रहेगा।

स्मृतिकी अमिट रेखाएँ

प्रो० राजाराम जैन एम० ए०, साहित्यरत्न

काशी विश्वविद्यालयके जीवन-कालमें मुझे पूज्य वर्णीजीके निकटतम दर्शनोंका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। सबसे बड़ी भारी प्रसन्नता तो इस बात की थी कि हमारे होस्टल (जैन निकेतन) में ही वे ठहरे थे। इस सन्तको अपने बीचमें पाकर हम लोग उसी प्रकार प्रसन्न थे जिस प्रकार वैशालीकी प्रजा भगवान् महावीरको पाकर प्रसन्न हुई थी। वैभवपूर्ण वैशालीकी वैभव-सम्पन्न प्रजाने रत्नोंके दीप जलाकर उस मांगलिक अवसरपर दीपावली मनाई थी, हम लोगोंने भी अपने मानसके मणिमय दीप जलाकर उस श्रद्धेय सन्तके स्वागतार्थ अपने पलक-पांवड़े बिछा दिये थे। विश्वविद्यालयमें जितना भी प्रचार हो सकता था, किया, छात्र संघके मंत्रीकी हैसियतसे तथा व्यक्तिगत तौर से भी। समारोहके दिन काफी संख्यामें श्रोतागण उपस्थित हुए। इसी मौकेपर मैं अपने एक ऐसे विद्वान् पत्रकार मित्रको भी साग्रह ले आया जो कि अभीतक जैन साधुओंको पाखण्डी एवं जैनधर्मको नगण्य और वैदिक-धर्मकी एक तुच्छ मुर्झायी हुई शाखा-मात्र समझते रहे थे।

नवीन-भवनका उद्‌घाटन करनेके बाद वर्णीजीका प्रवचन प्रारम्भ हुआ। अधिकांशकी धारणा थी कि वही पुरानी घिसी-पिसी सिद्धान्तकी बातें सुनावेंगे लेकिन इसके विपरीत जब राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक और सामाजिक समस्याओंकी विषमताके साथ ही नीति तथा आचारको लेकर उन्होंने जो सुन्दर नैतिक समाधान दिये उसने उक्त पत्रकार महोदयकी सारी दूषित मनोवृत्तियां समाप्त कर दी, तुरन्त ही मुझसे बोले—"निस्सन्देह वर्णीजी महाराजकी प्रतिभा अलौकिक एवं सार्वभौम है। उनके उपदेशोंमें कुछ ऐसी अपील है जो किसी भी देश, किसी भी जाति और किसी भी धर्मके लोगों को प्रभावित कर सकती है। उदाहरणोंके तो वे अद्‌भुत जादूगर हैं। दृष्टान्तों द्वारा काल्पनिक चित्र भी उपस्थित करके उनमें नैतिकताके जो सामयिक एवं तदनुरूप रंग भर देते हैं, उनकी विशदता तथा मूक वाणी श्रोताओंके मनमें एक विशेष आह्लादकारी भाव उत्पन्न कर देती है । फिर तो वे पत्रकार थे, जो लम्बी स्पीच उन्होंने दी, आज मुझे वह समग्र याद नहीं है। उसके बाद फिर वे जैन साधु एवं जैनधर्म के प्रति श्रद्धा की भावना रखने लगे। वर्णीजी महाराजके विषयमें तो वे अक्सर मुझसे पूछते रहते हैं।

"मेरी जीवन-गाथा" भी वे कई बार पढ़ चुके हैं। –तो ऐसा है हमारे वर्णीजी महाराजका चमत्कार। निस्सन्देह आज के युगके ये सन्त अजातशत्रु हैं।

सन्त लोग साँचेमे ढालकर बनाये नही जाते, वे उत्पन्न ही होते हैं ऐसे महान् संस्कार लेकर। उनके इन संस्कारोको कोई भी मेट नही सकता। परिस्थितियोके वे दास नही होते, बल्कि परिस्थितियाँ स्वय ही उनका अनुसरण करती है। अजैनमे जैन उन्हे बनना था, इसलिए परिस्थितियोने उनके सामने जैन मन्दिर खडा कर दिया, उसमे प्रभावशाली प्रवचन भी होने लगे, साथ ही कडोरे भायजी, चिरौंजाबाई और बनपुरया भी बीचमे कूद पडे और इस प्रकार वे जैन ही नही पक्के "जैन" बन गये। ज्ञानके विकासके लिए जगलोमे खाक छानी, पत्तलो और पत्थरोपर खाना खाया बनाया, सैकडो मीलोकी पैदल यात्रा की, विपत्तियोकी घनघोर घटाएँ सिरपर छा गई, किन्तु वे विचलित होनेके बजाय और पक्के जैन बनते गये।

महात्माओके जीवन प्रारम्भमे कुछ दुरूह और जटिल देखे जाते है। सन्यास लेनेके पूर्व वे कुछ ऐसी विचित्र स्थिति मे रहते है कि स्वय भी नही समझ सकते। महावीर और बुद्धके प्रारम्भिक जीवनमे भी इसी प्रकारकी स्थिति आई थी। उनका मन और शरीर विचित्र कल्पनाओके जगलमे घूमा करता था। बादमे ही उन्होने सन्यास लिया था। वर्णीजीकी स्थिति भी वैसी ही हुई। वे भी घुमक्कड बन गये थे। उन्होने बम्बई तक की पैदल यात्रा कर डाली, तीर्थक्षेत्रोकी वन्दना की, बडे-बडे विद्वानोसे भेट की और अपने जीवनमे शान्ति-प्राप्तिके साधनोकी खोज की। इतने भ्रमणके बाद उन्होने सोचा कि बिना पढे जीवनका विकास सम्भव नही, लेकिन पढनेके लिए पैसे चाहिये, अत मजदूरी की, अखबार बेचे और इस प्रकार इस बुन्देलखडी सन्तकी शिक्षा भारतके पश्चिमी छोर बम्बई मे संस्कृतसे प्रारम्भ हुई। लेकिन सन्तोके पैरमे चक्र होता है, जो घूमनेका या विहार करनेका ज्यादा प्रेरित करता है। ये बम्बईसे शीघ्र ही आगरा मथुरा आये और फिर बनारसका चक्कर मारा। लेकिन साम्प्रदायिक बोल-बाला था। जब ये "जैन" करार दिये गये तो गुरुगृहसे निष्कासित भी कर दिये गये। बस, यही तिरस्कार आगे चलकर जैन समाजके लिये वरदान बना और आज उस वरदानका नाम 'श्रीस्याद्वाद जैन महाविद्यालय' है। इसकी नीवमे ऐसी अटल नैतिकता, सात्विक तेज और ओज भरा है जो कभी मिट नही सकता और इस संस्थासे सम्बन्धित व्यक्ति सदा ही त्याग और सेवाका व्रत लेकर उत्साहके साथ आगे बढता रहता है।

उक्त गौरवशालिनी महासंस्थाका जन्म एक रुपयेके दानसे प्रारम्भ होता है और आज उसकी चल और अचल लाखो रुपयोकी सम्पत्तिका सग्रह स्पष्टरूपेण यह घोषित करता है कि उसने समाज की सेवा करके उसकी कितनी श्रद्धा-भक्ति अपनी ओर आकर्षित की है। पूत-पावनी गगाके सुरम्य तटपर स्थित इस महाविद्यालयमे दीक्षित स्नातक आज तमाम देशमे फैले है। निश्चय ही इसकी कीर्तिका कलश पूज्य वर्णीजीके शीर्ष पर रखा जायगा, क्योकि महाविद्यालय उनके तेज और ओजका ही एक प्रभावाश है।

* * *

सन् १९४३ का जमाना था, तब मुझे स्याद्वाद महाविद्यालयका स्नातक बननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। १९४२ की क्रान्ति तो उस समय शान्त हो चुकी थी, किन्तु उसका असर बना ही हुआ था। एक

गुरुकुलके शान्त वातावरणसे उठकर मै बनारस-जैसी महानगरीमे पहुँचा था, अत उस समय प्राय हरएक चीज मुझे कुछ विस्मयसे भरी हुई एव बडी-बडी-सी लगती, लेकिन आगे जाकर मुझे अनुभव हुआ कि यह 'बडा' लगना सच ही था।

विद्यालयका वातावरण मुझे अपने काल्पनिक विश्वविद्यालयसे कम न लगा। मस्तिष्क, शरीर एव हृदय (Head, Hand and Heart) के सर्वतोमुखी विकासका यहाँ पूर्ण ध्यान रखा जाता था। त्याग, सेवा, विनय एव सहानुभूतिकी शिक्षा सुन्दर एव भव्य देवालयमे अपने आप ही मिलती थी। न जाने किन परमाणुओको उस विशाल मन्दिरकी दीवारोमे सँजोया गया है कि उसके अन्दर प्रवेश पाते ही एक विचित्र हृदय-सौन्दर्य-सा जाग उठता। शारीरिक विकासके लिए सुन्दर साधनोसे पूर्ण अखाडा एव प्ले-ग्राउण्ड थे। छात्रोका एक "वीर-सैनिक सघ" भी चलता था, जिसमे अनुशासन आदि का भी शिक्षण रहता था। कल्पनाओके विकासके लिए गगाका सुरम्य तट और हरा-भरा विस्तृत क्षितिज मानो प्रकृति ने स्वय ही वरदानमे दिये थे। साहित्यिक गोष्ठियाँ, वाद-विवाद-प्रतियोगिताएँ निबन्ध-प्रतियोगिताएँ आदि भी बडी धूमधामसे होती और इस प्रकार मै उस जमानेमे बनारस पहुँचा था जब "स्याद्वाद विद्यालय" के विद्यार्थियोसे अन्य स्थानीय विद्यालयोके विद्यार्थी शारीरिक, मानसिक या बौद्धिक प्रतियोगितामे जीतनेकी बहुत ही कम उम्मेद रखते थे। बम्बई परीक्षालयके प्राय सभी इनाम यहाँके लिए ही सुरक्षित रहते थे। इस प्रकारके गौरवपूर्ण एव विजयके वीर-वातावरणमे जाकर मैने अपनेको धन्य माना।

एक जो सबसे नई चीज थी वह यह थी कि सभी काम अपने हाथो करना। विद्यालयके सभी कार्य कुछ समितियोमे बाँध दिये गये थे और सदस्यके नाते विद्यार्थी अपना दायित्व समझकर उन्हे पूर्ण करते। इस प्रकार लडके कुछ उद्योग करना भी सीखते एव विद्यालयमे सु-व्यवस्था तथा अनुशासन भी रहता। इसे अपना स्वायत्त शासन कहना अनुचित न होगा।

लेकिन इस प्रकारकी सु-व्यवस्था एव अनुशासनमे विद्यालयके दो महास्तम्भ छायाकी तरह छाये हुए थे—आदरणीय प० कैलाशचन्द्रजी प्रधानाचार्य तथा बाबू पन्नालालजी मैनेजर। दुखन्नी (मदिरकी बुढिया मालिन) को भी नही भुलाया जा सकता।

पण्डितजीकी विशेषता उनके प्रभावशाली व्यक्तित्वमे थी। सैकडो व्याख्यानो मे भी वह शक्ति नही, जो उनकी सकेत भरी एक दृष्टि या अँगुलीमे होती। चश्मेके भीतरसे उनकी आँखे लडकोके हृदयको पूर्णतया पढ लेती थी। यद्यपि वे हमारे बीचमे रहते न थे, किन्तु उनका प्रभाव सदैव ही हम लोगोको अनैतिक कार्यो तथा विचारोसे दूर रखता था। कई लोग तो कहा करते थे कि चाचाजी की (उनका उपनाम, जो छात्रोने स्वय ही गढ लिया था) तीन आँखे है, उनमेसे एक आँख सदैव ही विद्यार्थियोके सिरके ऊपर यत्र-तत्र-सर्वत्र रहती है। बात भी सच थी, हम लोग कोई छिपेसे छिपा कार्य करते, लेकिन उन्हे पता लग ही जाता था। उनका यह मनोविज्ञान हम लोगोके लिए ऋजुमति या विपुलमति मन पर्ययज्ञान या निसर्गज और अधिगमज अवधिज्ञानसे कम न था। इन ज्ञानोकी व्याख्या तो पण्डितजीके इस मनोविज्ञानसे ही हम लोगोकी समझमे आ सकी थी।

जिस समय क्रान्तिकारियोकी गिरफ्तारियोका बोलबाला था उस समय विद्यालयके विद्यार्थी भी ७-८ सगीन मामलो (आयुध और विस्फोटक पदार्थ नियम-भग तथा अन्य आपत्तिजनक मामलो)

में फँसे थे। उस समय इन विद्यार्थियोको बचानेके लिए वे कितने चिन्तित और व्याकुल रहते थे, वे क्षण मुझे अब भी याद है। उनके बगीचेमें पत्ता भी खडकता और वे भ्रमसे चिंतित हो जाते कि उनके छात्रोकी 'इन्क्वायरी'के लिये कोई C I D आया है। लाख कोशिश करनेपर भी जब वे छात्रोको न बचा सके तो जेलमे उन्हे अपना खाना भेज सकने की स्वीकृति लेना, पढनेके लिए पुस्तके भेजना, उनसे समय-समयपर मिलने जाना निश्चय ही एक साहसी, हितैषी और पिता-तुल्य गुरु ही कर सकता है। कई ऐसी बात पण्डितजीके बारे मे है, जो आदर्शके रूपमे हमारे मानस-मन्दिरमे प्रतिष्ठित है और रहेगी। जिस समय वे हम लोगोकी सभामे अपना उपदेश देने खडे होते, उस समय टस्केजी (अमेरिका) के बुकर टेलीफेरो वाशिंगटनकी याद आ जाती थी। एक हाथ पीछे तथा दूसरा हाथ आगे उठा हुआ कुछ ऐक्टिंग-सी करता हुआ और नाक, आँख एव ललाटकी रेखायें उनके भावोको अपने-आप ही व्यक्त कर देती थी। उनकी सूत्र-शैलीके उपदश आज भी मेरे कानोमे तथा मेरे आसपास छाये-से प्रतीत होते है।

बाबूजी (मैनेजर सा०) तो मानो हमारे विद्यालयके मालवीयजी थे। सुस्ती, आलस्य और दुर्बलतासे तो उन्हे दिली नफरत थी। किसी भी छात्रके निबल चेहरेको देखकर उसका कन्धा झकझोरकर स्वास्थ्य पर छोटी-सी स्पीच दे देना मानो उनका स्वभाव था। विद्यालयका अखाडा बाबूजीकी स्कीमका ही प्रतिफल था। कोरसकार जाडेके दिनोमे भी सूर्योदयके पूर्व ही अपने शरीरको चारो ओरसे ढककर कार्टूनके डनलपी पुतलेकी नाई बाबूजी अखाडेमे उपस्थित हो जाते और 'पैरललबार' के बाद सबसे छोटा मुग्दर खब साध-साधकर घुमाया-फिराया करते। नाराज होना तो उन्हे आता ही नही था और जब भी नाराज हाते तो उनकी उस समयकी आकृति हम लोगोके मनोरजनका ही कारण बनती। किसी भी बातको वे बडे गौरसे सुनते और उस क्षणकी उनकी नाक, आँखा और ललाटकी रेखाओकी उठक-बैठक स्वय ही वक्ताको अपना विषय भुला डालनेकी कोशिश करती। बाबजीसे रुपये उधार लेनेके लिए भी कुछ फार्मले हम लोगाने बना रखे थे और बिना फामला पूरा किये बाबूजीसे रुपये उधार ले लेना 'लक्ष्मण-रेखा'को पार करनेकी तरह ही होता।

काशीके कोतवाल कालभैरवके समान मानकी विद्यालयके जन्मकालसे ही प्रतिष्ठित द्वारपालिका थी। उसकी भानजी दुखन्ती एक अहोरिन मालिन है जा सच्चे अथमे दुखाका अन्त कर देती थी। किसी भी प्रकारकी पीडा या चाट लगनेपर दुखन्तीकी याद आती और वह कडुवा तेलका जादूगरी चिराग लिये उपस्थित रहती और उसे देखते ही निश्चय ही पीडा और चाटका दर्द नष्ट हो जाता। पहरेदारी ता वह इतनी जबर्दस्त करती थी कि उसकी आज्ञाके बिना हवा भी प्रवेश करनेमे हिचक सकती थी। बिना व्याजकी वह साहूकार भी थी तथा कई विद्यार्थियोकी वह "इम्पीरियल बैंक" भी थी। उसका काम प्राय होता— सुबहसे पूजाका नम्बर सुनाना। बस इसी क्षण वह ऐसी लगती जैसे दुखका एक छोर यहाँपर बाँधने आई हो। उसे जब-कभी यमराज भी कह डालते थे, क्योकि उसके सन्देशपर रजाई छोडकर सुबहसे ही स्नान करके पूजा करनी पडती थी। किन्तु वह इतना भी ध्यान रखती थी कि यदि नम्बरवाला कोई विद्यार्थी अपने कार्यमें व्यस्त एव एकाग्र है तो वह उसके नम्बरको चेंज भी कर दिया करती। चपरासी राजनाथ भी ध्यानसे नही उतरता। बाबूजीका तो वह दायाँ हाथ ही था और जिस समय बाबूजीके पहिले-पहल

पुत्ररत्न हुआ था वह मारे प्रसन्नताके नाचने लगा था और उसीके कहनेसे बाबूजीने शायद १।। माहके वेतन-का मेवा छात्रों एव मुहल्लेवालोको बाँटा था।

विद्यालयकी अनेक मधुर स्मृतियाँ मेरे हृदयमे समाई हुई है। इन स्मृतियोको बनानेवाले उपर्युक्त आदरणीय महानुभाव ही है जिनके नाना स्वभावोके मिश्रणसे एक विशेष प्रकारका वातावरण छायाका रूप लेकर उस सस्थापर छाया था, जिसके नीचे हम लोग रहते थे। निस्सन्देह ही एक कठोर था तो दूसरा सुकुमार एव उदार तथा मध्यम, फिर भी अपने-अपने स्थानो पर सभीकी आवश्यकता थी, उसी प्रकार जिस प्रकार एक कुटुम्बमे भी कठोरता (अनुशासन), मृदुता, आदिके द्वारा उत्पन्न एक विशेष सन्तुलनकी आवश्यकता रहती है।

ऐसे सुन्दर एव सास्कृतिक वातावरण बनानेवालोके लिए मेरा शतश प्रणाम तथा समाज और राष्ट्रको गौरवपूर्ण तेजपुञ्जको देनेवाले "स्याद्वाद महाविद्यालय"के लिए मेरे कोटिश वन्दन।

स्याद्वाद महाविद्यालय और आधुनिक विद्वान्

प्रो० विमलदास कोंदिया एम० ए०, एल्-एल० बी०, न्यायतीर्थ

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। एकाकी व्यक्ति या तो परमात्मस्वरूप होगा या दानव। मनुष्यमें परस्परोपग्रह अत्यधिक परिमाणमे पाया जाता है। इस भावनासे प्रेरित होकर वह सामाजिक सस्थाओका निर्माण करता है। तीर्थंकर परमदेव इसी उद्देश्यको लेकर सघकी स्थापना करते है। चतुर्विध सघ रूप सस्थाका निर्माण तीर्थंकरोकी अपूर्व देन होती है। यद्यपि जैनधर्म व्यक्ति विकासकी ओर अधिक जोर देता है तथापि इसका अर्थ यह नही है कि सामाजिक विकासके लिये इसमे कोई स्थान नही। व्यष्टि और समष्टिका परस्पराश्रय है। अनेकान्त त व किसी एक पक्षका साधक नही। उसमे दोनो पक्षोके लिये समान स्थान है। अपेक्षा-भेदसे हम गुण-मुख्य कल्पना कर सकते है। व्यवहार-क्षेत्रमे व्यक्ति-विकासके लिये सामाजिक क्षेत्र उतना ही आवश्यक है जितना कि आत्मविकासके लिये शरीर। सामाजिक चेतना व्यक्ति-चेतनासे भिन्न होती है। मनुष्यका व्यवहार भी सामाजिक चेतनाके अन्दर सर्वथा भिन्न प्रकारका होता है। सामाजिकता बहिर्मुखी प्रवृत्ति है। यदि अन्तर-प्रवृत्ति सम्यक् दर्शन है तो बहि प्रवृत्ति प्रवचन-वत्सलत्व है। पूर्ण व्यक्तित्वके विकासके लिये दोनोकी ही आवश्यकता है। समग्र व्यक्तित्वके निर्माणके लिये सामाजिक सस्थाओ का निर्माण अत्यन्त वाछनीय होता है। ये सस्थाएँ कई प्रकारकी होती है जिनमे दो प्रकारकी सस्थाएँ मुख्य हैं---(१) राजकीय सस्थाएँ और (२) शिक्षा-सस्थाएँ। जैन इतिवृत्तमे राजकीय सस्थाओके निर्माणका श्रेय ऋषभको है और शिक्षा-सस्थाओके निर्माणका श्रेय आदिचक्रवर्ती भरतको है। भरतने त्रिवर्णके साथ चतुर्थ वर्ण, ब्राह्मणकी स्थापना की जिसका कार्य था अध्ययन, अध्यापन और धर्माचारका नियमन तथा परिपालन। जैन धर्मावलम्बी अपनी राजकीय सस्थाओको अपनी ही कमजोरियोंके कारण खो बैठे। उनका राजत्व समाप्त हो गया। मध्ययुगमे वे सेठ-साहूकार बने और

किसी प्रकार अपने मंदिर और गुरुओंकी निष्ठाके कारण जैनधर्मको जीवित रख सके। यद्यपि उनकी संख्या धीरे-धीरे कम होती चली गई, व्यापारिक मनोवृत्तिके कारण ज्ञान-विज्ञानका भी ह्रास हुआ, तथापि साधु, भट्टारक और पंडित ही जिस किसी प्रकार धर्म, साहित्य और परंपराके साधक और परिपोषक रहे। यदि ये भी सामाजिकताके भावका छोड़ देते तो सम्भव है जैन धर्म और समाजका नाम शेष भी न रहता। जैन धर्म और समाजपर हिन्दू और मुस्लिम शासकोंकी भी अनुदार दृष्टि ही रही। इसका परिणाम यह हुआ कि जैन धर्म और समाज एक बड़े अन्धकारके युगमें प्रविष्ट हो गये। जब अँगरेजोंका शासन आरम्भ हुआ उस समय कुछ दलित और पिछड़े वर्गोंको आगे आनेके लिये मौका मिला। जैनधर्म और जैनधर्मानुयायियोंने अपने व्यापार तथा सदाचरणसे अँगरेजोंको प्रभावित किया। अंगरेजोंकी धर्म-निरपेक्ष नीति ने सभी धर्मोंके बढ़ने और उठनेके लिये प्रोत्साहन दिया। देशमें उनके संरक्षणके कारण धार्मिक तथा शैक्षिक जाग्रति हुई। हिन्दू और मुस्लिम दोनों समाज जाति और शिक्षाके निर्माणमें लग गये। उनको राज्यकी ओरसे भरपूर सहायता भी मिली। राजकीय विद्यालयोंका निर्माण हुआ। जैनधर्मावलम्बियोंको भी जैनधर्मकी रक्षाके लिये यह अनुभव होने लगा कि उन्हें भी अपनी संस्कृति और सभ्यता की रक्षाके लिये संस्थाओंका निर्माण करना है। फलतः काशी में जब जैनियोंके लिये पढ़ने-पढ़ानेकी सुविधा नहीं थी और ब्राह्मणोंका व्यवहार अनुकूल नहीं था तब गणेशप्रसादजी भागीरथजी, पन्नालालजी बाकलीवाल आदि महानुभावोंने सेठ माणिकचंदजी, देवकुमार आदि श्रेष्ठियोंका पत्र द्वारा बनारसमें एक शिक्षा संस्था खोलनेकी आवश्यकताका अनुभव कराया और स्याद्वाद महाविद्यालयकी स्थापना की।

स्याद्वाद महाविद्यालयकी स्थापना उस समय की गई जब जैनधर्म, जैनसाहित्य और जैनसमाज अत्यन्त क्षीण हो गये थे। स्याद्वाद महाविद्यालय की स्थापनाके अनन्तर जैनधर्म, न्याय, साहित्य, व्याकरण आदि की पढ़ाईका प्रबन्ध हुआ। विद्यार्थी आने लगे और ज्ञानाराधनका कार्य शुरू हुआ। उस समय लक्ष्य इतना ही था कि कुछ पंडित तैयार हो जायँ जो स्वाध्याय, प्रचार, प्रतिष्ठा आदि कार्योंमें सहायक हो सकें। विद्यार्थियोंका उद्देश्य भी संस्कृत, जो ब्राह्मणोंकी भाषा मानी जाती थी, का पढ़नेका रहा। विद्यार्थी लोग न्यायतीर्थ, आचार्य आदि परीक्षाओंमें बैठने रहे और इन परीक्षाओंको पास कर सामाजिक कार्योंमें लग गये। एक परीक्षालय भी खोला गया जिसे माणिकचंद्र दि० जैन परीक्षालय कहा जाता है। इसमें धार्मिक विषयोंकी परीक्षाएँ ली जाने लगी। इस विद्यालयमें प्राकृतके अध्ययनके लिए भी व्यवस्था की गई। पहले प्राकृत ग्रन्थोंको विद्यार्थी संस्कृत छायाकी सहायतासे ही पढ़ते रहे।

हम पं० अम्बादास शास्त्रीजीको नहीं भूल सकते जिन्होंने हिम्मत करके जैन विद्यार्थियोंको जैन न्याय पढ़ानेका कार्य सम्हाला। पश्चात् अन्य ब्राह्मण विद्वान् भी विविध विषयों को पढ़ाने लगे और अब तक पढ़ाते हैं। स्याद्वाद विद्यालयके निर्माणमें बहुत-से श्रीमान्, त्यागी, विद्वानोंका योगदान रहा है जिनमें ब्र० शीतलप्रसादजीका नाम उल्लेखनीय है। स्व० ब्र० शीतलप्रसादजी समाजके सच्चे सेवक थे। स्याद्वाद विद्यालय का वर्तमान रूप उन्हींका बनाया हुआ है। स्व० ब्रह्मचारीजीने यह अनुभव किया कि केवल संस्कृत का अध्ययन ही समाज-सेवाके लिये पर्याप्त नहीं है। वे ज्ञान-विज्ञानका चमत्कार देख रहे थे। वे चाहते थे जैनधर्म और दर्शनका प्रचार केवल भारतवर्षमें ही न हो बल्कि विदेशोंमें भी हो। इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिये उन्होंने विशेष वृत्तियोंका प्रबन्ध कराकर दो-चार विद्यार्थियोंको कालिजमें पढ़नेकी

भी अनुमति दी। उक्त उद्देश्यके अनुसार दो-चार विद्वान् आचार्य, एम० ए०, न्यायतीर्थ आदि डिग्रियाँ लेकर निकले। यह प्रवृत्ति विद्यालयमे अब भी चल रही है। बा० सुमतिलालजी, जो एक प्रकारसे विद्यालयके जीवन-सगी है, अपनी निरपेक्ष सेवाओसे आज-तक विद्यालयको अनुप्राणित करते रहते है। स्याद्वाद महाविद्यालय आज अपनी स्वर्ण-जयन्ती मनाने जा रहा है। विद्यालयकी जो कुछ अब तक उन्नति हुई है और जितने विद्वान् इसने पैदा किये है वे सब यत्र-तत्र समाज-सेवामे लगे हुए है। इन विद्वानोने स्नातक-कोषमे द्रव्य देकर जो अपनी विद्यामाताके प्रति श्रद्धा व्यक्त की है यह स्याद्वाद विद्यालयके इतिहासमे उल्लेखनीय घटना है।

इस प्रकार स्याद्वाद विद्यालयकी क्रमिक विकास प्रवृत्तिका उल्लेख करते हुए मै यह आवश्यक समझता हूँ कि कुछ आधुनिक युगकी आवश्यकताओका भी उल्लेख कर दूँ। वर्तमान भारतका युग स्वतन्त्रताका युग है। यद्यपि भारतका शासन धर्म निरपेक्ष है फिर भी हमे यह नही भूलना चाहिये कि इस राज्यमे हम जैन अल्पसख्यक है। प्रजातत्र राज्य की यह बडी कमजोरी है कि इसमे अधिकसख्यक जातिका ही बोलबाला रहता है अधिकतम लाभ उन्हीको मिलते है। प्रश्न यह है कि जैन समाज और जैनधर्मको किस प्रकार जीवित और वर्धनशील रक्खा जाय ? मेरे विचारमे यह कार्य शिक्षा-सस्थाओ द्वारा ही हो सकता है। इसके लिए हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस तथा मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ ज्वलन्त उदाहरण ह। अत मै यह आवश्यक समझता हूँ कि स्याद्वाद महाविद्यालयको सब प्रकारसे बलवान् बनाया जाय। स्याद्वाद महाविद्यालयकी आर्थिक स्थिति निर्बल है जिसको सबल बनाना प्रत्येक जैन-धर्मावलम्बीका कर्तव्य है। इसके साथ-साथ विद्यालयकी शिक्षा-सम्बन्धी नीति भी बदलनी चाहिये। सस्कृत तथा धार्मिक शिक्षाके साथ-साथ विश्वविद्यालयोके कोर्सोके पढनेके लिए समुचित प्रबन्ध होना चाहिये। चूकि हमारा लक्ष्य सास्कृतिक है अत विद्यार्थियोके लिए भिन्न-भिन्न कला-विषयक कोर्सोको पढनेकी अनुमति मिलनी चाहिये। वर्तमान भारतकी भाषा हिन्दी राष्ट्रभाषा बन चुकी है। विद्यार्थियोको हिन्दी-विषयक योग्यताकी वृद्धिकी अत्यन्त आवश्यकता है। हम चाहते है कि हमारे विद्यालयके विद्यार्थी अच्छे कवि, साहित्यकार, कलाकार, वक्ता, लेखक आदि बने। अब समय बदल गया है। सस्कृतकी दो-चार पुस्तकोका पढने-लिखनेवाला व्यक्ति अब विद्वान् नही कहलाता। इस युगमे विशाल अध्ययन होना चाहिये तभी वह समाज-मे विद्वान्की हैसियतसे प्रतिष्ठा पा सकता है और साथ-साथ उच्च पदोको भी प्राप्त कर सकता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि स्याद्वाद महाविद्यालयका अकलक सरस्वतीभवन सर्वांग-परिपूर्ण बनाया जाय। कम-से-कम जैनधर्म, दर्शन, साहित्य सम्बन्धी एक भी ऐसी पुस्तक न हो जो यहाँ न मिल सके। इस दृष्टिसे यह पुस्तकालय अत्यन्त क्षीण है। अब केवल न्यायतीर्थ, आचार्य आदि परीक्षाओको पास करना ही पर्याप्त नही है। इसके अनन्तर शोध (रिसर्च) के लिए विद्यालयमे पूर्ण सहूलियत होनी चाहिये। इसके लिए मै समाजसे प्रार्थना करूँगा कि वह उन्नत शोध-छात्र-वृत्तियोका आयोजन करे जिससे विद्वान् सतत खोज कार्यमे लगे रहे। आज अन्य समाजोने अपनी खोजोके द्वारा जैनधर्म, दर्शन और साहित्यको पिछाड दिया है। कितनी ही ऐतिहासिक गलत धारणाएँ बन गई है। उन सबको दूर करनेके लिए एक खोज विभागका होना अत्यन्त आवश्यक है जो निष्पक्ष गवेषणाओ द्वारा जैन मान्यताओको प्रस्थापित करे।

किसी समय दक्षिणसे विद्यार्थी आते थे। आज विद्यालयमे दक्षिणसे कोई विद्यार्थी नही आता। इसके लिए यदि विशेष छात्र-वृत्तियोका आयोजन करना पडे तो हानि नही। अखिल भारतवर्षीय सस्था होनेके नाते स्याद्वाद महाविद्यालय सार्वभौम होना चाहिये।

बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी स्याद्वाद महाविद्यालयके बादकी सस्था है। आज वह एशियामे सर्वोत्तम सस्था बनने जा रही है। उसमे आज ५०० प्राध्यापक तथा १०,००० के लगभग विद्यार्थी ससारके प्राय समस्त विषयो का अध्ययन करते है। तब स्याद्वाद महाविद्यालयमे विशाल जैनधर्मके सर्वागीण अध्ययन-का प्रबन्ध होना अनिवार्य है। स्याद्वाद महाविद्यालयको सस्कृत, प्राकृत, हिन्दी आदि भाषाओका केन्द्र रखते हुए जैनधर्म, दर्शन और साहित्यकी शोधका भी केन्द्र बनाया जाना चाहिए। यह सस्था छोटी होकर भी बहुत बडा काय कर सकी है। प्रसन्नताका विषय है कि साहू शान्तिप्रसाद-सदृश विद्या-प्रेमी श्रीमानोका इस सस्थाकी ओर ध्यान गया है। वे इसकी स्वर्ण-जयन्तीके उपलक्षमे सम्मेदाचलपर होनेवाले महोत्सवके सभापति निर्वाचित हुए है। आशा है, भगवान् पार्श्वनाथके चरणोमे बैठकर समाजके अग्रगण्य श्रीमान् और धीमान् विद्यालयके सर्वागीण उपयोगी भविष्यके विषयमे विचार करेगे जिससे आधुनिक आवश्यकतानुसार आधुनिक विद्वान् तैयार हो सके। मेरी यही भावना है कि इस विद्यालयकी सब प्रकारसे उन्नति हो।

— —

विद्यामन्दिर स्याद्वाद हे ! शत-शत अभिनन्दन है।
तेरी स्वर्ण-जयन्ती लखकर पुलकित धरा गगन है ॥१॥
श्री सुपार्श्व के पाद-पद्म मे तेरा जन्म हुआ है।
तीर्थङ्कर की दिव्य गिरा सम तू भी अचल हुआ है ॥२॥
श्री 'गणेश' ने वरद हस्त से तेरा रूप सँवारा।
काशी के अभिराम अक में तूने पगतल धारा ॥३॥
शैलराज-हिमवान-सुता भी तुझको गोद लिए है।
स्वस्थ शान्त अनवद्य हृद्य नित तुझको रूप दिए है ॥४॥
तू विशाल रत्नाकर-सा है तेरे रत्न अपरिमित।
दीप्तिमान हो दिगदिगन्त मे करते पथ आलोकित ॥५॥
तूने ही 'माणिक्य' 'हेम' 'पन्ना' 'मोती' 'लाल' दिए है।
मक्खन औ 'कैलास' 'विमल' 'वशीधर' 'राजेन्द्र' किए है ॥६॥
तेरे मन्थन ही से 'सुन्दर' 'लक्ष्मी' 'अमृतचन्द्र' मिले है।
श्री 'खुशाल' 'दरबारि' 'दिवाकर' श्री 'नरेन्द्र' से पद्म खिले है ॥७॥



भारत के प्रमुख उद्योगपति, दानवीर साहु शान्तिप्रसादजी जैन
संरक्षक तथा स्वर्ण-जयन्ती के सभापति



श्री साहु शीतलप्रसादजी कलकत्ता (नजीबाबाद)

तू महान् उद्देश्य लिए निज पथ पथ पर बढ़ता है।
अर्हत तत्व प्रचारक को तू अनुदिन गढ़ता है ॥८॥
पारिजात मन्दार तुम्ही हो तेरे सुमन नवल है।
प्रान्त प्रान्त को सुरभित करते देते ज्ञान विमल है ॥९॥
सस्कृति का है दिव्य स्रोत वर्धमान जन-जन मे।
जीवन का तू सिहनाद करता है भवन-भवन मे ॥१०॥
"वादार्थी विचराम्यह" के शब्दो को तू तोल रहा।
तू प्रतीक बन उनका ही तो रूपान्तर मे बोल रहा ॥११॥
तू अतीत को एक बार फिर भारत मे ला दे।
सप्त भग की शुचि तरग से जन-जन को नहला दे ॥१२॥
'सिद्धसेन' 'जिनसेन' 'सोम' 'उमास्वामि' प्रगटा दे।
'वादिराज अकलक' 'प्रभा' से दिग्गज प्राज्ञ बना दे ॥१३॥
सप्तसप्ति सम स्याद्वाद हे ? दिव्य प्रभा चमका दे।
ज्ञान कर्म अध्यात्मवाद की लोल लहर लहरा दे ॥१४॥

—बहराइच —सुमेरचन्द्र 'मेरु'

यशस्वी स्याद्वाद-सुत

* फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

श्री स्याद्वाद महाविद्यालयने पचास वर्ष पूर्ण करके इक्यावनवे वर्षमे पदार्पण किया है। अपने स्थापना कालसे लेकर आजतक समाजमे और देशमे इसका स्थान अक्षुण्ण बना हुआ है और उत्तरोत्तर

* प० फूलचन्द्रजी शास्त्री भी विद्यालय विटप पर खिले है। अर्द्धमागधी और प्राकृत जैन साहित्यके आप सुयोग्य विद्वान् है, यह इनको देखकर समझना अति कठिन है। कर्मशास्त्रमे आपकी दृष्टि तलस्पर्शिनी है। यही कारण है कि श्री धवल, जयधवल और महाधवल ऐसे मौलिक सिद्धान्त ग्रन्थोके अनुवाद और सम्पादनमे आपका महायोग रहा है। पचाध्यायी, सर्वार्थसिद्धि, तत्त्वार्थ-सूत्रादिका भी आपने—सुसम्पादन किया है। आपका यौवन जिन शिक्षा सस्थाओकी धर्माध्यापकी और प्रधानाध्यापकीमे बीता है उनकी तालिका देना यहाँ सभव नही। आपका कार्यक्षेत्र पूरा भारत रहा है मराठी आदि अनेक प्रादेशिक भाषाओमे पडितजी निष्णात् है। समाज सेवा और सगठनका आपको व्यसन है। समाजोत्थानकी

इसकी उपयोगिता बढती जा रही है। यद्यपि जैन समाजमें इसके समकक्ष अन्य अनेक संस्थाएँ कही जाती है किन्तु जैनधर्मके दार्शनिक पहलूको ध्यानमें रखते हुए इसकी शान अपना विशिष्ट स्थान रखती है। जो विचारोंकी कट्टरता और कार्यकर्ताओंकी हठवादिता अन्यत्र दृष्टिगोचर होती है उसका यहाँ अपेक्षाकृत अभाव ही दिखाई देता है। फलस्वरूप यहाँसे निकले हुए अधिकतर स्नातकोंकी चित्त-वृत्तिमें उदारता, सहिष्णुता और विचारोंकी व्यापकता आदि अनेक सद्गुण दृष्टिगोचर होते हैं। राष्ट्रीय जागरण और उच्चकोटिकी संस्कृत शिक्षाके प्रचारमें भी यह अग्रणी है। इस विद्यालयने अबतक जो सेवा की है इसके मूर्तरूप वे प्रौढ विद्वान् हैं जो इस समय जैन जागरणके अग्रणी बने हुए हैं और यथासम्भव प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति कर रहे हैं।

साधारणतः इस विद्यालयमें प्रविष्ट हुए स्नातकोंकी संख्या लगभग हजारसे कम नहीं होनी चाहिये। फिर भी जिन्होंने विशारद या इससे आगेकी शिक्षा प्राप्तकर अपने जीवनको सुसंस्कृत और सम्पन्न बनाया है ऐसे स्नातक भी लगभग तीन सौ होंगे। यदि यहाँ हम उन सबकी सांस्कृतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय सेवाओंका विवरण देने लगे तो यह लेख पुस्तक बन जायगा। अतएव यहाँ हम कतिपय ऐसे विद्वानोंकी सेवाओंका ही संक्षेपमें उल्लेख करेंगे जिनका पिछले दशकोंमें विद्वत्ता सेवा और त्याग की दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है।

इस विवरणको उपस्थित करते समय सर्वप्रथम पूज्य श्री १०५ क्षु० गणेशप्रसादजी वर्णीका स्मरण कर लेना हमारा प्रधान कर्तव्य है। स्मरणमात्र इसलिए कि उनकी सेवाओंका लेखा-जोखा करना बहुत ही कठिन है। स्थापना कालसे लेकर अबतक उन्होंने इस विद्यालयकी जो सेवा और सम्हाल की है उसका वर्णन अशक्य है। इस समय समाजमें शिक्षाकी दृष्टिसे जो जागरण दिखलाई देता है वह सब उन्हींकी पुनीत सेवाओंका फल है। वस्तुतः वे वर्तमान जैन समाजके निर्माता हैं। वे इस विद्यालयके न केवल संस्थापक हैं अपितु प्रथम स्नातक भी हैं। आदरणीय पं० अम्बादासजी शास्त्री जैसे उद्भट विचारक विद्वान्को प्राप्त कर सर्वप्रथम पुस्तक खोलनेका श्रेय उन्हींको प्राप्त है। ऐसे महान गुरुके द्वारा प्रारम्भ किया गया यह विद्यालय क्यों न अनन्तकाल तक फले फलेगा?

सर्वप्रथम जिस स्नातकने इस विद्यालयमें प्रविष्ट होकर अध्ययन प्रारम्भ किया वे हैं श्रद्धेय पं० वंशीधरजी न्यायालंकार। श्रद्धेय पण्डितजी इस समय सर सेठ स्वरूपचन्द हुकुमचन्द जैन विद्यालय इन्दौरमें प्रधान अध्यापकके पदपर हैं और इसके पूर्व शिक्षामन्दिर जबलपुर व श्रीगोपाल दि० जैन विद्यालय मोरेनामें अध्यापनका कार्य कर चुके हैं। उत्तरकालीन अधिकतर विद्वान इनके शिष्य हैं।

सभी प्रवृत्तियोंमें आप आगे रहे हैं तथा उसके लिए विविध कष्ट भी झेले हैं। देशभक्तिके कारण कांग्रेसके आन्दोलनोंमें भाग लिया है और कारावास भी किया है। वास्तवमें कितनी ही सामाजिक और साहित्यिक संस्थाओंके जन्ममें पंडितजीका हाथ है। इनमेंसे सन्मार्ग प्रचारिणी समिति, वर्णी ग्रन्थमाला आदिको अब भी आपका पूर्ण अभिभावकत्व प्राप्त है। वर्तमानमें पंडितजीने साहित्य सृजनको ही अपना चरम साध्य बना लिया है। श्री सन्मति जैन निकेतनके आप संयुक्तमंत्री इसीलिए हैं कि समाजसेवी युवकोंको तैयार कर सकें। (सम्पादक)

जैन सिद्धान्तके ज्ञाताओमे स्वर्गीय पूज्य श्रीगुरु गोपालदासजीके बाद इन्हीका नाम आता है। इस समय इस विद्याका जो प्रचार दिखलाई देता है वह सब इनकी सत्कृपा और शुभाशीर्वादका फल है।

श्रद्धेय पण्डित माणिकचन्द्रजी न्यायाचार्य भी इसी विद्यालयके प्रधान स्नातक है। श्रद्धेय प० अम्बादासजी शास्त्रीके पादमूलमे बैठकर इन्होने दर्शनशास्त्रका गहन अध्ययन कर इस विद्याका जैन समाजमे सर्वप्रथम सर्वाधिक प्रचार किया है। उत्तरकालीन अधिकतर विद्वान् इनके शिष्य है। इस समय आप फिरोजाबाद जैन हाईस्कूलमे अध्यापनका कार्य करते है और इसके पूर्व श्री गोपाल दि० जैन विद्यालय मोरेना व जम्बू जैन विद्यालय सहारनपुरमे कार्य कर चुके है। साहित्यिक क्षेत्रमे भी आपकी प्रतिभा दृष्टिगोचर होती है। तत्त्वार्थश्लोकवार्तिकका हिन्दी अनुवाद कर आपने उसे सर्वसुलभ बना दिया है। आप अपने अनुभवोको समाचार-पत्रोमे निरन्तर लिखते रहते है जिससे इनकी तर्कणा शक्ति सूझबूझ और विशाल अध्ययनका सहज ही पता लगता है।

यद्यपि श्रद्धेय प० देवकीनन्दनजी शास्त्री आज हमारे बीचमे नही है फिर भी उनकी सेवाओको भुलाया नही जा सकता। ये उन विद्वानोमेसे है जिनकी छाप समाजपर चिरकालतक अमिट बनी रहेगी। ये न केवल जैन सिद्धान्तके मर्मज्ञ थे अपितु उत्कृष्ट कोटिके वक्ता, लेखक और सक्रिय समाज-शास्त्री भी थे। दक्षिण भारतमे कारजा आश्रमका जो विकास दिखलाई देता है वह सब इन्हीकी पुनीत सेवाओका फल है। इसके पहले ये बहुत कालतक श्री गो० दि० जैन विद्यालय मोरेनाकी सेवा करते रहे और इनका अन्तिम समय श्रीमन्त सर सेठ हुकमचन्द्रजी इन्दौरके सानिध्यमे व्यतीत हुआ है। शिक्षा-प्रसारके साथ इनकी सामाजिक सेवाएँ भी अविस्मरणीय है। सामाजिक समस्यायोके सुलझानेमे ये सिद्धहस्त थे। इसी कारण बुन्देलखण्ड और मध्यप्रदेशके ये नेता थे। ऐसे योग्यतम व्यक्तित्वके निर्माण-का श्रेय भी स्याद्वाद महाविद्यालयको है। इन्होने अपने जीवन-कालमे पञ्चाध्यायी और सागारधर्मामृत-का हिन्दी अनुवादकर साहित्य सेवाका भी श्रेय सम्पादित किया है।

श्रद्धेय पण्डित खूबचन्द्रजी, स्याद्वादवारिधि समाजके उन सुप्रसिद्ध विद्वानोमेसे एक है जिन्होने अपने स्वाभिमानको सम्हालते हुए समाजकी पुनीत सेवा की है। स्पष्टवादिताके साथ वाणीमे मिठास और बुद्धिकी प्रखरता इनकी अपनी विशेषता है। मन्त्री-पदपर रहते हुए इन्होने मोरेना विद्यालयकी बहुत कालतक सेवा की है। सिद्धान्त ग्रन्थोके ताम्रपत्रका अङ्कन कार्य भी इनके सम्पादकत्वमे हुआ है। तथा इन्होने तत्त्वार्थाधिगम भाष्यकी हिन्दी टीका भी लिखी है। इनकी निस्पृह वृत्तिको दूसरे विद्वान् अनुकरणीय मानते है। ऐसे प्रसिद्ध विद्वान्की शिक्षा दीक्षा भी इसी विद्यालयके वातावरणमे हुई है।

ऐसे अवसरपर श्री प० पन्नालालजी सोनीको भूल जाना महान् अपराध होगा। विद्वत्ता और सादगीमें ये अपनी खास विशेषता रखते है। इनके सामाजिक जीवनका प्रारम्भ इन्दौर विद्यालयसे होता है। बहुत कालतक वहाँ ये प्रधान अध्यापकके पदपर प्रतिष्ठित रहे। इसके बाद इसी पदपर मोरेना विद्यालयमें कार्य करते रहे। ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन बम्बईकी भी इन्होने बहुत कालतक सेवा की है और वर्तमानमें ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन झालरापाटनमे कार्य कर रहे है। कुशल अध्यापक होनेके साथ ये उच्च कोटिके विचारक और साहित्यिक भी है। सिद्धान्तग्रन्थोके ताम्रपत्रका अङ्कन-कार्य

भी इनके सम्पादकत्वमे हुआ है। तथा इन्होने 'क्रियाकलाप'का पुन संस्कार कर उसे अधिक उपयोगी बनानेका प्रयत्न किया है। ये भी श्री स्याद्वाद विद्यालयके स्नातक हैं।

श्री ब्र० ज्ञानानन्दजी वर्णी भी यहांके स्नातक थे। इनका पूर्व नाम उमरावसिंह था। धर्माध्यापक, सुपरिटेंडेंट तथा उप-अधिष्ठाता पदपर रहते हुए इन्होने विद्यालयकी बहुत कालतक सेवा की थी। जैन संस्कृतिके प्रचारकी इन्हे बडी लगन थी। फल-स्वरूप इन्होने अहिंसा नामक पत्रका प्रकाशन भी प्रारम्भ किया था। किन्तु अकालमे ही देहावसान हो जानेके कारण इनकी योजनाएँ अधूरी रह गयी।

उत्तर भारतके समान दक्षिण भारतका भी इस विद्यालयकी ओर झुकाव रहा है। फल-स्वरूप दक्षिण भारतके अनेक स्नातकोने यहाँसे लाभ उठाया है। श्री नेमिसागरजी वर्णी उनमेसे एक हैं। इनकी प्रतिभा बहुमुखी है। भट्टारक पदका सम्मान पालन करते हुए ये समाजकी सेवा करते रहे हैं। बहुत कालतक इन्होने श्रवणबेल्गोला मठकी सेवा की है। वर्तमानमे आप सब प्रपञ्चोसे विरक्त हो जीवन-संशोधनके मार्गमे लगे हुए हैं।

श्री प० मक्खनलालजी न्यायालंकार भी इसी विद्यालयकी देन है। इनके प्रभाव, व्यक्तित्व और विद्वत्तासे समाज भली भाँति परिचित है। पहले आपने जैन गुरुकुल हस्तिनापुरकी सम्हाल की है और वर्तमानमे मोरेना विद्यालयके सञ्चालक हैं। विचारोमे कट्टर होकर भी व्यवहारमे ये मधुर और नम्र हैं। अध्यापन-कार्यके सिवा साहित्यिक सेवाकी ओर भी इनकी रुचि है। पञ्चाध्यायी और 'तत्त्वार्थवार्तिक'की टीकाएँ लिखकर आपने साहित्यसेवाके कार्यको आगे बढाया है। जैन-सिद्धान्त-प्रकाशिनी संस्था कलकत्ताके आप बहुत दिनतक कार्यकर्ता रहे हैं और स्याद्वाद विद्यालयके अन्यतम स्नातक स्वर्गीय श्री प० गजाधरलालजीके साथ मिलकर वहासे प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थोका सम्पादन करते रहे हैं। आजकल जैन-सिद्धान्त-प्रकाशिनी संस्थाकी देख-रेख श्री प० श्रीलालजी शास्त्री कर रहे हैं। ये भी यहाँके स्नातक है और अब ब्रह्मचर्य प्रतिमाके व्रत पालते हुए आत्मकल्याणमे लगे हुए हैं।

श्री प० दरबारीलालजी सत्यभक्त, जो वर्तमानमे सत्याश्रम वर्धाके सञ्चालक हैं, इसी विद्यालयके स्नातक हैं। इनकी विचार-सरणि सर्वथा स्वतन्त्र है और इस कारण उन्होने अपने जीवनमे बहुत अधिक कायापलट की है। समाजमे रहते हुए इन्होने इसी विद्यालयमे और यहाँसे मुक्त होनेपर इन्दौर विद्यालयमे अध्यापनका कार्य किया है। इसके बाद ये बम्बई महिला विद्यालयमे अध्यापक होकर चले गये थे और मुख्यतया वहीसे इनके जीवनमे परिवर्तन होने लगा था। इनके विचार स्वतन्त्र हैं और उन्हे माध्यम बनाकर इन्होने वर्धामे सत्यसमाजकी स्थापना की है। ये लेखक और वक्ता भी उत्कृष्ट कोटिके हैं। अनेक धर्मोका अध्ययन कर इन्होने अपनी प्रतिभाको खूब बढाया है। इन्होने जो स्वतन्त्र साहित्यका निर्माण किया है वह इसका प्रतीक है।

जैन न्यायके अध्यापनके लिए जो प्रसिद्ध थे और जिनके कारण अधिकतर छात्र इन्दौर विद्यालयमे स्थान प्राप्त करनेके लिए लालायित रहते थे वे प० जीवन्धरजी न्यायतीर्थ भी इसी विद्यालयके स्नातक हैं। इन्होने इन्दौर विद्यालयमे बहुत कालतक प्रधान अध्यापकके पदपर रहते हुए शिक्षा-प्रचारका कार्य किया है। अपने प्रधान अध्यापकके पदका स्वेच्छापूर्वक त्यागकर श्रद्धेय प० वंशीधरजी न्यायालंकारको

इन्दौर विद्यालयमें प्रतिष्ठित कराना इन्हीके त्यागका फल है। इनकी तर्कणा-शक्ति बडी प्रबल है। श्रद्धेय प० माणिकचन्द्रजी न्यायाचार्यके बाद न्यायशास्त्रके अधिकारी विद्वानो में ये मुख्य माने जाते है।

यहाँ हम दयाचन्दजी गोयलीयको स्मरण करना नही भूल सकते। ये इगलिश की योग्यता के साथ धर्मशास्त्र की भी अच्छी योग्यता रखते थे। 'बालबोध' चार भाग लिखकर इन्होने जैन समाजका बडा उपकार किया है। ये भी यहाँके ही स्नातक थे।

श्री प० चैनसुखदासजी न्यायतीर्थ उन विचारक विद्वानोमेसे है जिनकी विवेकशीलता, स्वाभिमान और प्रतिभाके औचित्यको सभी स्वीकार करते है। श्री स्याद्वाद महाविद्यालयमे अध्ययन करनेके बाद इन्होने जैन महापाठशाला जयपुरका भार सम्हालकर शिक्षाके क्षेत्रमे उस प्रान्तकी अनुपम सेवा की है। जयपुरमे प्रकाशित होनेवाले 'वीरवाणी' पत्रके ये सम्पादक है। थोडेमे यदि इनके कार्योंकी विवेचना की जाय तो यही कहा जा सकता है कि ढोल पीटनेकी अपेक्षा ठोस कार्य करनेमे इनकी प्रगाढ श्रद्धा है।

एक समय जैन समाजको आन्दोलित करनेवाले श्री प० राजेन्द्रकुमारजीकी शिक्षा-दीक्षा इसी विद्यालयमे हुई है। अध्ययन समाप्तकर ये कुछ कालतक मोरेना विद्यालयमे और उसके बाद अम्बालामे अध्यापन का कार्य करते रहे। परन्तु इनकी भीतरी मनसा उस खाईको भरने की थी जिस कारण जैन समाजको पद-पदपर दिक्कतो का सामना करना पडता था। फलस्वरूप इन्होंने अपने अनन्य सहयोगी श्रीमान प० कैलाशचन्द्रजी सि० शा० प्रभृति विद्वानोके सहयोगसे दि० जैन शास्त्रार्थ सघकी स्थापना की और उसके द्वारा बादमे ऐसे लोगोका परास्त किया जो जैनधर्म और उसके सिद्धान्तोकी निन्दामे ही अपने सम्प्रदायकी सर्वोपरि सेवा मानते थे। वर्तमानमे 'जैन सघ'के नामसे एक अखिल भारत-वर्षीय सस्थाके दर्शन होते है यह इसी सस्थाका परिवर्तित रूप है। प्रधानमत्रीके पदपर प्रतिष्ठित रहते हुए पण्डितजीने इस सस्थाकी भी बहुत कालतक सेवा की है। साहसी वृत्ति, सूझ-बूझ और वक्तृत्वमे निपुणता ये इनकी विशेषताए है इन्होंने लोकोपयोगी साहित्यका भी सृजन किया है। वर्तमानमे यद्यपि ये सामाजिक और सास्कृतिक क्षेत्रसे हटे हुए दिखलाई देते है, पर हमारा विश्वास है कि आत्माकी सच्ची तृप्तिके लिए इनका चित्त पुन इस ओर मुडेगा।

जो गर्भमे ही सस्कारी जीवन लेकर आये है और मध्यकालीन सामाजिक परम्पराके समर्थक होकर भी माध्यस्थ्य वृत्ति जिनकी अपनी विशेषता है, वे इसी सस्थाके सुफल श्री प० जगन्मोहनलालजी सि० शा० है। अध्ययन-काल समाप्त होनेपर प्रारम्भसे ही ये कटनी जैन सस्थाओकी सम्हाल कर रहे है और सस्कृत विद्यालयके प्रधानाध्यापक है। इनका सामाजिक और सास्कृतिक प्रवृत्तियोकी ओर भी विशेष ध्यान है। वर्तमान मे ये श्री दि० जैनसघ मथुरा और परवारसभाके प्रधानमत्री तथा खुरई गुरुकुलके अधिष्ठाता भी है। ये अच्छे वक्ता तो है ही, लेखनकलामे भी ये दक्ष है। वर्णी ग्रन्थमालासे 'श्रावक धर्म प्रदीप' ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है। इसकी सस्कृत और हिन्दी टीका इन्होने ही लिखी है। इनमे वे सब गुण पाये जाते है जो योग्य नेतृत्वके लिये आवश्यक होते है।

अपनी प्रतिभा, विद्वत्ता और कार्यकुशलताके कारण सबके आदरपात्र श्रीमान् प० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री इस विद्यालयके ऐसे स्नातक है जिनका जीवन ही इसकी सेवामे गया है। वे स्थायी

रूपसे सन् १९२८ से इस विद्यालयके प्रधान अध्यापक पदपर प्रतिष्ठित रहते हुए मन, वचन और कायसे इसकी सेवा कर रहे हैं। वे अन्य कार्योंको चाहे कितने ही आवश्यक क्यो न हो, दुर्लक्ष्य कर सकते हैं पर विद्यालयकी सेवासे मुख मोडना जानते ही नही। अभी कुछ ही दिन पहले वे अपनी लडकीको लेने बाराबकी जाने ही वाले थे। बिस्तर बँध चुका था। केवल रिक्साके आने भर की देर थी कि इतनेमे विद्यालयका चपरासी आता है और इनके हाथमे एक पत्र थमा देता है। पत्र और किसीका नही, प्रसिद्ध समाजसेवी बाबू छोटेलालजी का था। पण्डितजी रिक्साको भी पूछते जाते थे और पत्रका लिफाफा भी फाडते जाते थे। पत्रके खुलते ही उनके विचार बदलते हैं और उनका बँधा बिस्तर बाराबकी न खुलकर कलकत्ता जाकर खुलता है। पण्डितजीकी विद्यालयकी सेवाके प्रति जो निष्ठा है उसकी तुलना अन्य किसीसे नही की जा सकती। उनका इस बार बाराबकी जाना अपना विशेष महत्त्व रखता था। उनकी लडकी जिसे तीन माह पहले प्रथम बार पुत्रीरत्नकी प्राप्ति हुई थी कितनी उत्सुकतापूर्वक उनके आनेकी बाट देख रही थी। किन्तु पण्डितजी थे कि जिन्हे उधरसे मुँह फेरनेमे जरा भी देर न लगी। यह है पण्डितजीकी इस विद्यालयके प्रति निष्ठा। ऐसे ही निष्ठावान् व्यक्तियोंको लक्ष्यकर नीतिकारोंने कहा है— एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति न च तारागणशतैरपि।

इस विद्यालयके योग्यतम स्नातकोंमे श्री प० महेन्द्रकुमारजी न्यायाचार्य भी हैं। पण्डितजी यहाँ न्यायके अध्यापक होकर आये थे। परन्तु यहाँ आते ही इन्होंने अनुभव किया कि इन्दौरमे जो अन्त था वह यहाँ आदि भी नही है। उन्होंने यहाँ अध्ययन प्रारम्भ किया और जैन समाजको प्रथम क्रमबद्ध न्यायाचार्य इसी विद्यालयसे प्राप्त हुआ। इनकी साहित्यिक सेवाका श्रीगणेश भी यहीसे होता है। इस समय पण्डितजी हिन्दूविश्वविद्यालयके संस्कृत कालेजमे बौद्धदर्शनके प्राध्यापक पदपर प्रतिष्ठित हैं। साहित्यिक क्षेत्रमे पण्डितजी अबतक 'न्यायकुमुदचन्द्र', जयधवला प्रथम पुस्तक 'तत्त्वार्थराजवार्तिक' 'प्रमेयकमल मार्तण्ड' आदि अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थोंका सम्पादन कर चुके हैं। आपने 'जैनदर्शन' पर एक स्वतन्त्र और महत्त्वपूर्ण पुस्तक लिखी है। जैनदर्शनके तो ये अधिकारी विद्वान् है ही साथ ही बौद्ध-दर्शन और अन्य दर्शनोंपर भी इनका पर्याप्त अधिकार है। अपनी प्रतिभा और विद्वत्ताके कारण ही इन्हे ख्याति मिली है। सामाजिक क्षेत्रमे भी ये उदार परम्पराका प्रतिनिधित्व करते हैं। समाजको इनसे बडी आशाएँ हैं।

श्री स्याद्वाद महाविद्यालयने सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रके समान राष्ट्रीय क्षेत्रमे भी पूरी ख्याति प्राप्त की है। इसका मुख्य श्रेय यदि किसीको दिया जा सकता है तो वे हैं यहाँके स्नातक प्रा० खुशालचन्द्रजी ऐसे ही स्नातकोंमेसे अन्यतम प्रमुख स्नातक हैं। प्रा० सा० की पूरी शिक्षा-दीक्षा इसी विद्यालयमे रहते हुए हुई है। जैन समाजके ५० वर्षके शिक्षाके इतिहासमे ये प्रथम स्नातक है, जिन्होंने विद्यालयमें रहते हुए संस्कृतमे साहित्याचार्य और इगलिशमे एम० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की थी। विद्यार्थी कालमे ही ये राष्ट्रीय जनसेवाके नम्र सेवक रहे हैं। कांग्रेसके अनेक आन्दोलनोमें इन्होने कारावासकी यातनाएँ सही हैं और सत्याग्रहके कालमे उत्तरप्रदेश कांग्रेसके मंत्री पदपर प्रतिष्ठित रहते हुए सत्याग्रहका

१ पण्डितजीकी सेवाओंका विवरण जाननेके लिए पृ० ४३ देखिये।

सफल सचालन किया है। इसके लिए ही दो बार आगरा कालेजके इतिहासके प्रमुख ऐसे पदोको ठुकरा दिया है और काशी विद्यापीठकी नि शुल्क तथा स्वल्प-शुल्क प्रोफेसरी तथा पुस्तकाध्यक्ष पदको अपनाया है। ये निष्ठावान् त्यागीवृत्तिके व्यक्ति है। इनके ये गुण प्रत्येक क्षेत्रमें दृष्टिगोचर होते है। काशी विद्यापीठ, भदैनीसे लगभग तीन मील दूर है फिर भी अपने सास्कृतिक जीवनको जीवित रखनेके लिए ये प्रतिदिन नियमत जिन मन्दिर आते है । इस प्रकारकी इनके जीवनमे और भी कई विशेषताएँ दिखलाई देती है जो नई पीढीके लिए अनुकरणीय है। साहित्यिक क्षेत्रमे इनके द्वारा सम्पादित 'विद्यापीठ रजतजयन्ती ग्रन्थ' तथा 'वर्णी अभिनन्दन ग्रन्थ' इनकी योग्यताके स्पष्ट प्रतीक है। ये छात्रावस्थामे ही लेखक रूपसे आये थे। जेल जीवनमें इन्होने 'वरागचरित'का भी हिन्दी अनुवाद किया था। और इस समय इनके द्वारा अनुवादित तथा सम्पादित 'द्विसन्धान काव्य' भारतीय ज्ञानपीठसे मुद्रित हो रहा है। इनका जो उत्साह अन्य क्षेत्रोमे दिखलाई देता है, सामाजिक क्षेत्रमे भी वह कम नही है। श्री दि० 'जैन सघ'के उपप्रधान मत्री पदपर रहते हुए बहुत कालसे ये इस सस्थाकी निष्ठापूर्वक सेवा करते आ रहे है। वर्तमानमे श्री स्याद्वाद विद्यालयकी बागडोर भी इन्होने सम्हाल ली है तथा ये 'सन्मति जैन निकेतन'के अधिष्ठाता है।

यहाँ हमे श्री गणेश जैन विद्यालय सागरके आधारस्तम्भ उन दो विद्वानोका स्मरण कर लेना भी आवश्यक प्रतीत होता है। ये दोनो विद्वान है श्री प० दयाचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री और श्री प० पन्नालालजी साहित्याचार्य। इन दोनो विद्वानोको भी श्री स्याद्वाद महाविद्यालयमे शिक्षा ग्रहण करनेका सुयोग मिला है। प० दयाचन्द्रजी सि० शा० सागर विद्यालयके प्रधान अध्यापकके पदपर प्रतिष्ठित है और साहित्याचार्यजी वहाँकी साहित्य-गद्दीको सुशोभित कर रहे है। दोनो ही त्यागीवृत्तिके व्यवसायी विद्वान् है। इनमसे प० पन्नालालजीकी प्रतिभा तो कई क्षेत्रोमे दृष्टिगोचर होती है। इस समय वे विद्वत्परिषद्के मन्त्री तो है ही, साथ ही स्थानीय अनेक सामाजिक और सास्कृतिक सस्थाएँ इनके बल-पर चल रही है। साहित्यिक क्षेत्रमे भी उन्होने 'महापुराण' और 'धर्मशर्माभ्युदय'का हिन्दी अनुवाद कर और विद्वत्तापूर्ण भूमिका लिखकर आशातीत सफलता प्राप्त की है। 'चन्द्रप्रभचरित', 'धर्मशर्माभ्युदय' और 'जीवन्धरचम्पू'की सस्कृत और हिन्दी टीकाएँ भी उनकी योग्यताकी परिचायक है। उनकी अपनी विशेषता है बोलना कम, करना अधिक।

प्राचीन विद्वानोमे सर्वश्री प० घनश्यामदासजी, प० गोविन्दरायजी और प० पन्नालालजी धर्मालकार भी इसी विद्यालयके स्नातक है। श्रद्धेय प० घनश्यामदासजी आज हमारे बीचमे नही है। किन्तु अल्पकालमे उन्होने समाज और धर्मकी जो सेवाएँ की है वे ही स्मरणीय है। वे पहिले इन्दौर विद्यालयमे प्रधान अध्यापक और उसके बाद इसी पद पर रहते हुए उन्होने साढूमल जैन पाठशालाका सफल सञ्चालन किया था। उनके पढाये हुए अनेक स्नातक आज भी उनकी कीर्तिको बढा रहे है। साहित्यिक क्षेत्रमे इनके उल्लेखनीय कार्य 'नाममाला', 'परीक्षामुख' और 'पाण्डवपुराण' आदि अनेक ग्रन्थोकी सरल टीकाएँ है।

श्री प० गोविन्दरायजी पहिले मडावरा जैन पाठशाला और शिक्षामन्दिर जबलपुरमे अध्यापक रहे है। इसके बाद ये धार चले गये थे और वहाँ अनेक वर्षतक सरकारी स्कूलोके इस्पेक्टर भी रहे है।

दुर्भाग्यवश इनकी आँखे चली गयी है पर इस अवस्थामे भी ये क्रियाशील है। इन्होने 'कुरल' काव्यका हिन्दी और सस्कृत पद्योमे अनुवाद किया है। तथा 'नीतिवाक्यामृत'की हिन्दी टीका लिखी है। इनकी लिखी और भी पुस्तके है जो अप्रकाशित है। ये व्युत्पन्न, मेधावी और राजा-पण्डित है।

श्री प० पन्नालालजी धर्मालङ्कार पहले माढ़मल जैन पाठशालामे और अन्तमे हिन्दू विश्व-विद्यालयमे जैनधर्मके अध्यापक रहे है। मधुवन तेरहपन्थी कोठीका निर्माण इन्हीकी कुशल सूझ बूझ और परिश्रमका फल है। इस समय ये वैशालीमे कार्यरत है।

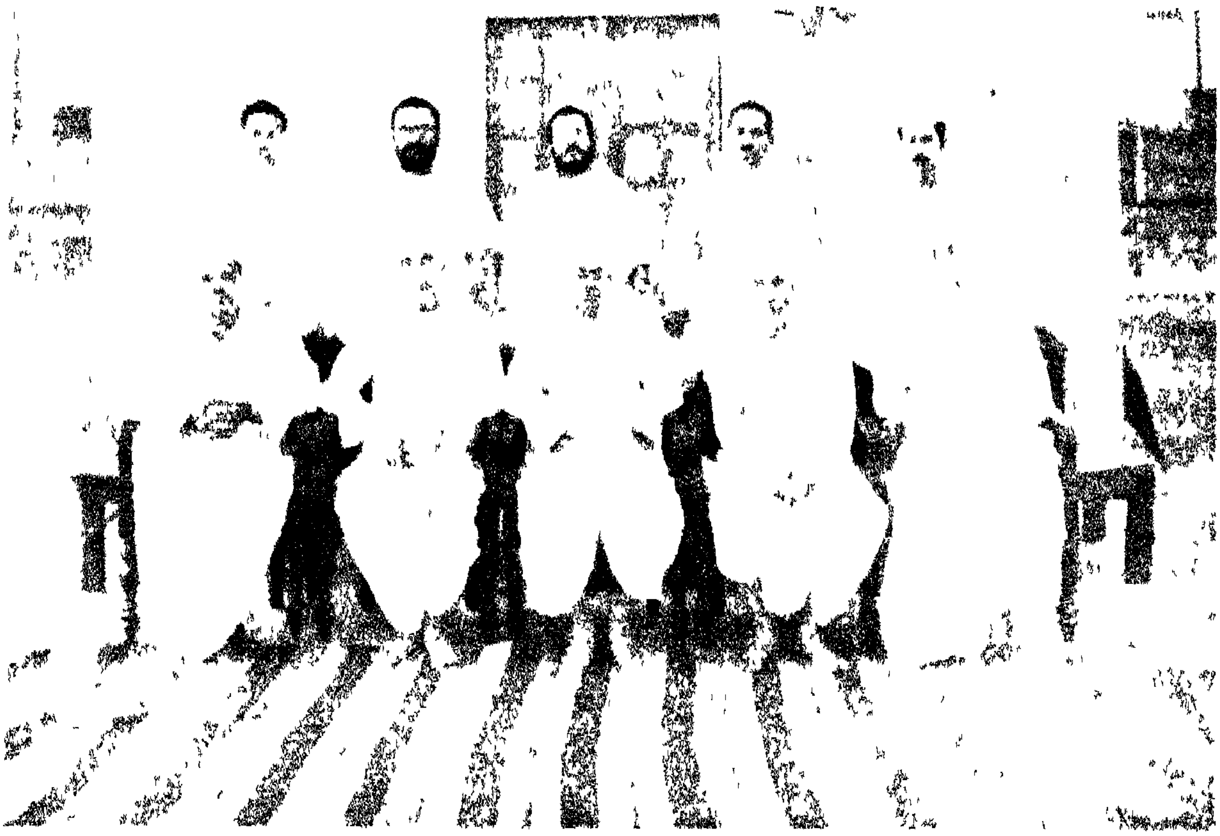
श्री प० सुमेरचन्द्र दिवाकरने यहाँ रहते हुए बी० ए० तक अध्ययन किया है। ये ओजस्वी वक्ता और कुशल लेखक है। इन्होने 'महाबन्ध' प्रथम भाग और महाबन्ध ताम्रपत्र प्रति का सम्पादन किया है। जैनदर्शन नामक स्वतन्त्र पुस्तक लिखी है। इनके लिखे हुए और भी अनेक ग्रन्थ प्रसिद्ध है। ये सस्कृत और अगरेजी दोनो भाषाओके अधिकारी विद्वान् है। इनके जीवनका मुख्य व्रत समाज सेवा है।

श्री प० वशीधरजी व्याकरणाचार्य भी यहाँके स्नातक है। अपने व्यवसायका निर्वाह करते हुए ये समाज सेवामे लगे रहते है। इस समय ये बीना जैनसस्था और श्री गणेश वर्णी जैन ग्रन्थमालाके मन्त्री है। इनकी सूझ विलक्षण है। राष्ट्रीय क्षेत्रमे भी इनकी बडी ख्याति है और स्वराज्यकी लडाईमे अनेक बार जेलयात्रा की है। दस्साओको धार्मिक क्षेत्रमे समान अधिकार दिलानेमे भी इनका बडा हाथ है। ये तटस्थ और सेवाभावी विद्वान् है। श्री सन्मार्ग-प्रचारिणी-समितिके मत्रीपदसे इन्होने समाजकी जो सेवा की है वह अविस्मरणीय है। सिद्धान्तशास्त्री प० हीरालाल और प० बालचन्द्र शास्त्री भी यहीके स्नातक है, जिन्होने सिद्धान्तग्रन्थो और कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थोका अनुवाद व सम्पादन कर अपनी साहित्यिक प्रतिभाका परिचय दिया है।

डा० जगदीशचन्द्रजी एम० ए० इसी विद्यालयकी देन है। बम्बईके रुइया कालेजमे ये प्राकृत पाली और अपभ्रश भाषाके प्रोफेसर है। जीवनमे कई सीमाएँ लाघकर इन्होने अपने जीवनका निर्माण किया है। प्रारम्भमे इन्होने 'स्याद्वादमजरी'का सम्पादन किया था। इसके बाद इनके द्वारा सम्पादित और लिखित 'दो हजार वर्ष पुरानी कहानियाँ', 'श्रमण भगवान महावीर' और 'हम बापूको न बचा सके' आदि उपयोगी पुस्तके प्रकाशित हुई है। इनके व्यक्तित्वकी सीमा केवल जैन समाजतक ही सीमित नही है। अपने व्यक्तित्व और योग्यताके कारण इन्हे लगभग एक वर्षतक चीनमे हिन्दीके अध्यापन कार्यके निमित्त भारत सरकार द्वारा भेजा गया था। ये अपनी लेखनीका किसी प्रकारकी सीमामे बाँधकर रखनेके लिए तैयार नही है। जो ये सोचते है और देखते है उसे ही मुख्य रूपसे अपनी लेखनीका विषय बनाते है। समाजवादी विचारधाराका यह विद्वान् जैन समाजको अपना उचित स्थान ग्रहण करानेमे सहायक हो सकता है, ऐसा हमारा विश्वास है।

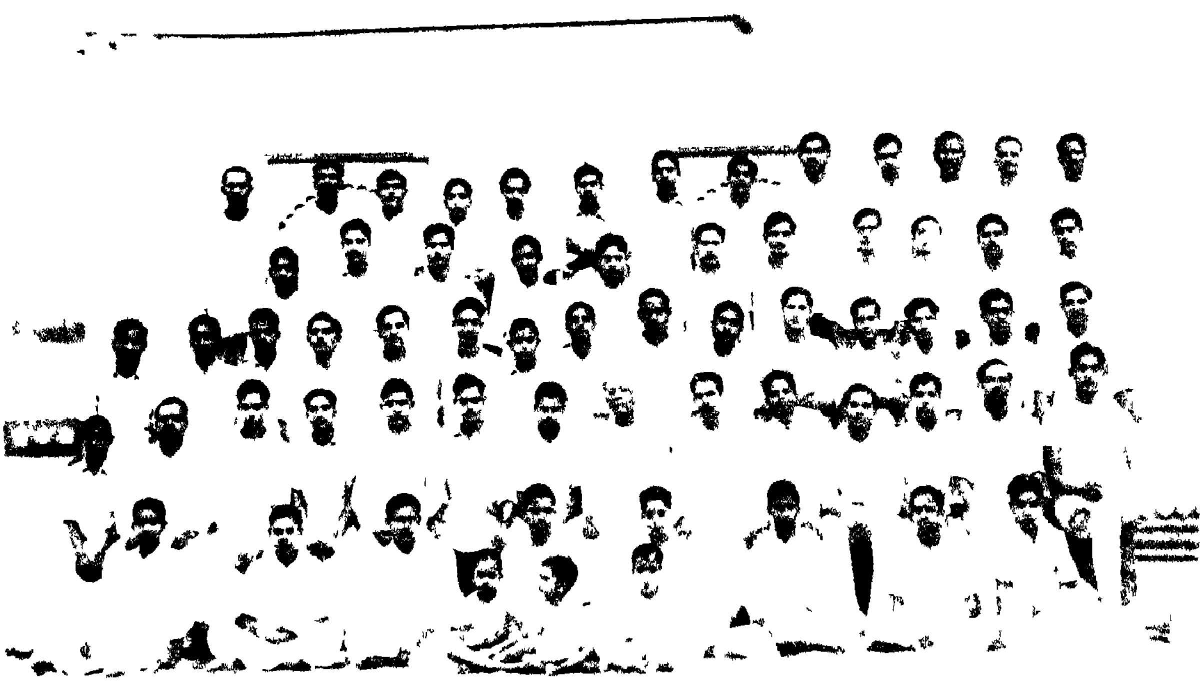
बादकी पीढीमे प० दरबारीलालजी न्यायाचार्य, प० नेमिचन्द्रजी ज्योतिषाचार्य और प० राज-कुमारजी एम० ए०, साहित्याचार्य प्रमुख है। इन तीनो विद्वानोने साहित्यिक और सास्कृतिक क्षेत्रमे पूरी ख्याति प्राप्त की है। श्री स्याद्वाद विद्यालयके साहित्य-अध्यापक प० अमृतलालजी दर्शन-साहित्या-चार्यकी इन्ही विद्वानोकी कोटिमे गणना होती है।

अध्यापक गण



बैठे—सर्वश्री पं० महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य, पं० फूलचन्द्र शास्त्री, पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री,
पं० मुकुन्दशास्त्री खिस्ते, पं० अनन्त शास्त्री फड़के,

खड़े—सर्वश्री पं० अमृतलाल शास्त्री, पं० गंगाधर पराञ्जुली, पं० दिवाकर जोशी,
पं० भोलानाथ पाण्डे, पं० पद्मचन्द्र जैन



वर्तमान छात्र-मण्डल मंत्रीजी और गृहपतिके साथ

नयी पीढीमे यहाँसे ऐसे भी विद्वान् निकले है जो अपने ज्ञान और अनुभवका उपयोग व्यावसायिक क्षेत्रमे कर रहे हैं। वे है डा० भागचन्द्रजी एम० एस् सी०, डी० एस् सी० और ज्ञानचन्द्रजी 'आलोक', न्यायाचार्य एम० एस्-सी०। डा० भागचन्द्रजी तो डालमियानगरमे केमिकल फैक्टरीके मैनेजर हैं और 'आलोक'जी वही सम्मानित पदपर प्रतिष्ठित रहते हुए उन्नति कर रहे है। इन्ही विद्वानोके साथ हम श्री प्रो० देवेन्द्रकुमारजी एम० ए०, साहित्याचार्य, डा० गुलाबचन्द्रजी चौधरी व्याकरणाचार्य, पी-एच० डी०, श्री नरेन्द्रकुमारजी विद्यार्थी, बी० ए०, साहित्याचार्य, सदस्य विधान सभा विन्ध्यप्रदेश, प्रा० रतनकुमारजी, एम० ए०, एल्-एल०बी०, प्रो० प्रेमसागरजी, एम० ए०, एल० टी०, प्रो० उदयचन्द्र-जी, एम० ए०, बौद्ध दर्शनाचार्य, प्रो० हरीन्द्रभूषणजी एम० ए०, साहित्याचार्यका केवल नामोल्लेख कर हम सतोष करते है। इनमे भी प्रो० देवेन्द्रकुमारजी एम० ए०, साहित्याचार्य और डा० गुलाबचन्दजी एम० ए०, व्याकरणाचार्यकी तो साहित्यिक प्रतिभा भी दृष्टिगोचर होने लगी है।

ये है श्री स्याद्वाद महाविद्यालयरूपी गुलदस्तेके कुछ फूल। इसमे मै जिन अनेक सौरभमय पुष्पोका नही सँजो सका हूँ वे मरी विवशताके लिए क्षमा करेगे।

विद्यालयकी स्वर्ण-जयन्तीके समय त्यागमूर्ति पूज्य वर्णीजी और सेवामूर्ति साहु शान्तिप्रसादजीका यह अपूर्व योग समाजमे नई चेतनाको जन्म देनेमे सहायक हो यही मङ्गलकामना है।

स्याद्वाद विद्या-योजना

महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य

जैन सस्कृतिका एक ही मूल मुद्दा है कि आत्मविकासका सबको समान अवसर मिले। ज्ञान और चरित्रकी वृद्धि आत्मविकासके अनुपम रूप हैं। आजसे ५० वर्ष पहिले जैनोको सस्कृत विद्या मिलना, विशेषकर काशीमे सस्कृत विद्याका अध्ययन करना कितना दुष्कर और अपमानपूर्ण स्थितिमे हो सकता था, उसकी कल्पना हम इस सर्वोदयी युगमे नही कर सकते। पूज्य वर्णीजीके जीवनमे ऐसी ही एक घटना हुई, जिसने उनकी आत्माके तार-तार मे हाहाकार मचा दिया और वटबीजकी तरह एक रुपयेके प्रथम दानसे उन्होने स्याद्वाद विद्याके इस कल्पतरु—स्याद्वाद महाविद्यालय—का बीजारोपण किया।

काशीके आदर्श सस्कृत विद्यालयोमे इसकी परिगणना है। आज दि० जैनसमाजमे जो ज्ञान-ज्योति है वह यहीसे 'ज्योतिसे ज्योति जले' के चार सोपानोको पार कर प्रकाशमान हो रही है। पूज्य प० वशीधरजी न्यायालङ्कार जैसे इस ज्ञानज्योतिके प्रपितामह स्याद्वाद विद्यालयके आद्य स्नातक आज सतोषकी साँस ले रहे है। इस विद्याप्रतिष्ठानने गत ५० वर्षोंमे जो किया और जिन परिस्थितियो मे किया उसकी ओर दृष्टिपात करनेपर यद्यपि सन्तोष होता है पर जो करना है उसकी गुरुता और अपनी स्वल्प शक्ति और साधनोको देखकर हृदय बैठने लगता है। ऐसे समय पूज्य वर्णीजीका यह वाक्य 'पुण्य भावनाएँ व्यर्थ नही जाती' एकमात्र सहारा बनता है और इसी सहारेसे इसके कार्यकर्ता आज भी इसके विकासमे जुटे हुए हैं।

स्याद्वाद विद्यालय सच्चे अर्थमे 'स्याद्वाद विद्याका आलय' तब बन सकता है जब उसके पास निम्नलिखित प्रारम्भिक साधन हो--

१ यद्यपि पूज्य वर्णीजीकी धममाता स्व० चिरोजाबाईके विशेष दान से इसके अकलङ्क सरस्वतीभवन मे तीन-चार हजार ग्रन्थोका सग्रह हो चुका है परन्तु न तो इसके लिये उपयुक्त स्थान है और न इतना धन ही जिससे कमसे कम 'समग्र जैन वाङ्मय' का सग्रह किया जा सके। पूज्य स्व० बाबा भागीरथजी वर्णीकी स्मृतिमे बननेवाले भवनके निमित्त प्राप्त ६-७ हजार रुपया इतना अपर्याप्त है कि उससे सरस्वतीभवनका एक भाग भी नही बन सकता। अत इसकी सर्वप्रथम आवश्यकता है 'सरस्वतीभवन' की जिसमे विभिन्न भाषाओ के आजतक प्रकाशित समस्त जैनग्रन्थोका सग्रह तो किया ही जाय, साथ ही साथ भडारोमे अप्रकाशित साहित्यकी प्रतिया भी प्राप्त की जायँ या उनकी प्रतिलिपिया रक्खी जाँय।

२ आचाय और एम० ए० पास छात्रोको जैन शोधकी ओर प्रेरित करनेके लिए शोध वृत्तियाँ दी जाय और उन्हे जैन विषय लेकर पी-एच० डी० और डी० लिट्० उपाधि प्राप्त करानेके साधन जुटाये जाँय।

३ प्राचीन साहित्यके सर्वागीण सम्पादन और सास्कृतिक साहित्यके निर्माण तथा प्रकाशनके लिए 'स्याद्वाद प्रकाशन' या 'स्याद्वाद ग्रन्थमाला' स्थापित की जाय। इसमे मुख्य रूपसे निम्नलिखित प्रवृत्तियाँ चालू हो--

१--प्राचीन ग्रन्थोका आधुनिक पद्धतिसे सुसपादन।

२--प्राकृत सस्कृत और हिन्दीका विषयवार पृथक् पृथक 'जैन सुभाषित सग्रह'।

३--जैन पारिभाषिक शब्दकोषका निर्माण।

४--जैन शब्दकोषका सग्रह जो कि अन्य 'नागरी प्रचारिणी' आदि सस्थाओके कोशनिर्माण कार्यमे साधन सामग्रीके रूपमे उपयुक्त हो सके।

५--प्रमुख आचार्योका विशेष अध्ययन सबधी-ग्रन्थ प्रकाशन।

६--विभिन्न जैन महापुरुषोके जीवन और इतिवृत्तोका प्रामाणिक सकलन।

७--जैन तत्त्वज्ञानके विविध अङ्गोके क्रमविकासका एतिहासिक सरणिसे विवेचन।

८--अतिम महत्त्वपूर्ण कार्य जो कि स्याद्वाद विद्यालय, जैसी सास्कृतिक सस्था ही कर सकती है, वह है सास्कृतिक लेखकोसे सपर्क स्थापित करना और उन्हे जैन-सस्कृति-सबधी सामग्री जुटाना। उदाहरणार्थ--'सस्कृत साहित्यके इतिहास' के लेखकोको जैन साहित्यका परिचय और जैन साहित्यकारोका इतिहास स्वय लिखकर देना जिससे वे अपने ग्रन्थमे जैनभागको पूर्ण कर सके। यह ऐसी सेवा होगी जो जैन सस्कृतिके प्रचारके लिए 'नीवकी ईंट' का कार्य करेगी। इसी तरह दर्शन, कला, पुरातत्त्व आदिके मान्य लेखकोके ग्रन्थलेखनमे जैन सामग्री साधार बिना माँगे जुटाते रहना एक महान् पुण्य कार्य होगा।

यह एक सामान्य रूपरेखा है जो 'स्याद्वाद विद्या' के यथार्थ प्रचारकी दिशाका संकेत है।

इस विद्यालयमें अपने विषयके सुयोग्य अध्यापक हैं, पर विद्यार्थियोंकी संख्या पर्याप्त नहीं है, इससे शिक्षाव्यय अधिक पड़ता है। वर्तमानमें ५० छात्रोंपर जो शिक्षाव्यय हो रहा है वही २०० छात्रोंके लिए पर्याप्त होगा। जैन समाजकी इस केन्द्रीय संस्थामें विभिन्न विषयोंके अध्ययन करने वाले कमसे कम २०० छात्र रहने ही चाहिए। आशा है इस विद्यालयकी सुवर्ण जयन्तीके पवित्र अवसरपर स्याद्वाद भक्त समाज अपने कर्त्तव्यकी ओर ध्यान देकर उदारतासे स्याद्वादका सींचगी।

श्रद्धाञ्जलि

श्री १००८ जिनेन्द्रदेवकी भक्तिके प्रसादसे किशोरावस्थामे ही व्यवसायमे सफलता मिली तथा लक्ष्मीने वर्षाकी नदीके समान बढ़ना शुरू किया। प्रकृत्या राजसी जीवनपर आकृष्ट मेरे मनमे विकल्प आया कि क्या यह सब 'खाय खाया बह गया' ही रहेगा? जन्मजात जिन धर्मानुसार और साधर्मी वात्सल्यने "निज हाथ दीजे साथ लीजे" के मार्गको निश्चित करनेके लिए बाध्य किया। श्रीमान् समयके साथ कैसे प्रभावना कर सकते है इसकी मिसाल स्व० दानवीर सेठ माणिकचन्द्रजी साहबने रक्खी थी। मैंने सोचा कि मुझे इसे बढ़ाना ही है। फलत विद्या प्रसार सामाजिक संगठन, तीर्थभक्ति आदिके समान काशीके श्री स्याद्वाद विद्यालयके सभापतित्वको भी मैंने अपने ऊपर लिया था।

जहाँतक बन सका है मेरी यही कोशिश रही है कि इस जीवनमे औरोंकी सेवा कर सकूं। इसे चरितार्थ करनेके लिए मैंने खूब सामाजिक दायित्व अपने ऊपर लिये और उन्हे कहाँतक निभा सका हूँ इसका निर्णय दूसरे करे। यहाँ तो एक ही बात कहनी है कि जहा अन्य विविध दायित्वोंको पूर्ण करनेके लिए मुझे पर्याप्त प्रयत्न करने पड़े है वही स्याद्वाद विद्यालयके दायित्वका पता भी नही पड़ा है। और चमत्कार यह है कि इन वर्षोंमे विद्यालयने जो उन्नति की है वह अभूतपूर्व है। संस्कृत और अंग्रेजीके धुरन्धर विद्वान् उत्पन्न करना इसी विद्यालयका काम है। इसे श्री १००८ सुपार्श्वनाथ पार्श्वनाथ भगवान्की जन्मभूमि, प्रसाद तथा पूज्य श्री १०५ वर्णीजी महाराजका प्रसाद ही मानना चाहिए।

सन्मति जैन निकेतनके शिलान्यासके बाद मैं विद्यालयकी सभामे गया था मेरे साथ पं० देवकीनन्दनजी, श्री पं० वंशीधरजी, पं० जीवन्धरजी आदि अनेक विद्वान् थे। सभामे ये सब बोले, और जब एकके बाद एकने स्याद्वाद विद्यालयको अपनी विद्या-जननी बताया तो मेरा हृदय आनन्दसे भर आया। मैंने ऐसी पवित्र संस्थाकी सेवाको अपना वास्तविक सौभाग्य माना।

अपने जीवनके जगमगाते ५० वर्ष समाप्त करके यह विद्यालय ५१ वे वर्षमें प्रवेश कर चुका है। इसकी स्वर्ण जयन्तीके अवसरपर यही भावना है कि विद्यालय पहिलेकी भाँति अभूतपूर्व कार्य करता हुआ खूब विकसित हो। और इसे उत्तमसे उत्तम अधिकारी प्राप्त होते रहे, जो पूज्य श्री १०५ क्षु० गणेश-प्रसादजी वर्णी द्वारा स्थापित उदात्त परम्पराका प्रवाह अक्षुण्ण रख सके।

अन्तमे पूज्य श्री १०५ वर्णीजीके दीर्घायुष्यकी कामना करता हुआ विद्यालयकी सर्वांग सफलता-की भावना करता हूँ ।

इन्द्रभवन, इन्दौर

सरूपचन्द्र हुकमचन्द्र नाइट

स्याद्वादविद्यालयतो महीयसी
विद्याविवृद्धिर्भवितेति निश्चय ।
तदत्र विद्यारसिकैः कृपाभरो
महोदयैः श्लिष्टतरो विधीयताम् ॥

महादेव पाण्डेय·
काशीविश्वविद्यालयस्य प्राच्यविद्याऽध्याचार्य

आजसे ५२ वर्ष पूर्व वि० स० १९६१के फाल्गुन मासमे मथुरा खुर्जा, जयपुर अध्ययन करनेके बाद मैं व्युत्पत्तिवादादि महान् ग्रथोको पढनेकी इच्छासे श्री १००८ सुपार्श्वनाथकी जन्मनगरीमे पहुँचा था । उस समय यशोविजय जैन पाठशाला समस्त सुविधासम्पन्न खुल चुकी थी किन्तु दिगम्बर पिपठिषुओके लिए दिग् और अम्बर हीका आश्रय था । मिर्जापुर-निवासी ला० वशीधरजीने मुझे अपनी दुकानके ऊपर ठहरने दिया और स्वयपाकव्रती मेरा प्रथम बार गुरु अम्बादासजीके पास अध्ययन प्रारम्भ हुआ । एक मास भी पूरा न हुआ था कि प्लेग फैल गया और मुझे काशीको प्रणाम करना पड़ा ।

कार्तिक १९६३ (वि०) मे जब पुन पहुँचा तो स्व० बाबा भागीरथजी तथा पूज्य गणेशप्रसादजी वर्णी द्वारा स्थापित स्याद्वाद पाठशालाकी गोदमे सुव्यवस्थित अध्ययन करनेका अवसर मिला । इस समय पू० अम्बादास शास्त्री, महदेव झा, रामावतार त्रिपाठी गनौर झा प्रभति विद्वान अध्यापन कराते थे ।

मुझे इस विद्यालयमे परिपूर्ण ज्ञानलाभ हुआ । मै ज्ञान जननी इस सस्थाका अधमर्ण कृतज्ञ हूँ । श्लोकवार्तिक ऐसे विशाल ग्रथका मनन टीकाकरणादि सब कुछ इसी विद्यालयकी देन है । इस सस्था-मात्रने सैकडो अन्य विद्वान् जन्मित किये है । सतत कृतज्ञ मै इसकी सर्वदा अभ्युदय कामना करता हूँ । सत्कृतज्ञ विद्वानोके परमोपकारी पू० गणेशप्रसादजी वर्णी महोदय ता इसकी उत्पत्ति, वृद्धि, रक्षामे अहर्निश दत्तावधान है । उनसे इस सस्थाका घनिष्ठ जीवन-सबध है अत उन्हे भी शतश वन्दना ।

फीरोजाबाद | (न्यायाचार्य) माणिकचन्द्र कौन्देय

आज स्याद्वाद महाविद्यालयकी स्वर्ण-जयन्तीके अवसरपर न केवल उसके प्राचीन कार्यकर्ताओको बधाई देते हैं बल्कि उन सदाचारी, कर्मनिष्ठ और सतत परिश्रम करनेवाले कार्यकर्ताओको भी बधाई देते है जिन्होने नि स्वार्थ भावसे इस विद्यालयका चिरस्मरणीय बनाया है । इस विद्यालयको स्थापित हुए ५० वर्ष हो गये और इस विद्यालयसे शिक्षित सैकडो विद्यार्थी अपने कार्यमें सलग्न हो इस विद्यालयकी प्रतिष्ठा बढा रहे हैं । मुझे इस अवसरपर अपने प्राचीन मित्र प० ज्ञानानन्द ब्रह्मचारीका भी स्मरण आता है जो रातदिन इस विद्यालयके सभी विभागोकी देख-रेख करते थे। इस विद्यालयकी स्थापनाके कुछ ही वर्षों बाद काशी विद्यापीठकी स्थापना भी कुछ नजदीककी कोठियोको लेकर महात्मा गाँधीके कर कमलोसे

हुई थी। इस कारण विद्यापीठका निकट सबध इस विद्यालयसे हो गया था और इसके कार्यकर्तागण विद्यापीठकी सहायता करना भी अपना कर्तव्य समझते थे। इस कारण विद्यापीठको यह जानने का सुअवसर मिला कि इस विद्यालयके कार्यकर्तागण और छात्रगण किस प्रकार राष्ट्रीय भावनाओसे ओतप्रोत और सदाचारी है। उन दिनो गया, पार्श्वनाथ आदि जानेका अवसर मिला इससे हम यह कह सकते है कि जैन सम्प्रदाय कितना श्रद्धालु है। पडोसमे रहनेके कारण मुझे यह देखनेका सुअवसर मिला कि इस विद्यालयके छात्र बडे ही सदाचारी है। महात्मा गाँधीके आन्दोलनमे मुख्य स्थान अहिसा होनेके कारण इस विद्यालयने अहिसा प्रचारिणी सभा और एक साप्ताहिक पत्रिका निकालना आरम्भ किया, जिसने अहिसा प्रचारमे काफी सहायता दी। १९४२ के आन्दोलनमे जिस प्रकार इस विद्यालयके छात्र और अध्यापकगणने देशकी सेवा की है वह तो किसीसे भुलाई नही जा सकती। इस स्वर्ण जयन्तीके अवसरपर परमात्मासे यही प्रार्थना है कि इस विद्यालयकी दिनोदिन उन्नति हो और इसके छात्र ऊँचेसे ऊचा स्थान ग्रहण कर देशकी उन्नतिमे सहायक हो।

भदैनी, काशी] यज्ञनारायण उपाध्याय

मेरा विद्यालयके साथ ऐसा सम्बन्ध है जिससे कि न केवल मै अपनेको विद्यालयका छात्र ही मानता हूँ बल्कि अपनेको विद्यालयका ऋणी भी समझता हू। यह वह ऋण है जो सहज ही नही चुकाया जा सकता। मेरा तो विद्यालयके साथ गौरव-वश और आध्यात्मिक ऋणका सम्बन्ध है।

मेरी विद्यालयके साथ पूर्ण सहानुभूति है। मै उसकी हर तरहसे उन्नति चाहता हूँ। मेरी हार्दिक भावना है कि उसका जयन्ती उत्सव सब प्रकारसे और सम्पूर्ण सफलताओसे सम्पन्न हो।

इस विद्यालयके संस्थापनमे जिन-जिनने भी योग दिया वे सभी स्मरणीय है। सौभाग्यकी बात है कि उनमेसे श्री वर्णीजी स्वय इस जयन्तीको देख रहे है, जो कि न केवल विद्यालयके मुख्य सस्थापक ही है बल्कि उसके महान् और सर्वप्रथम फल भी है।

इस विद्यालयकी स्थापना उस समयमे हुई थी जब कि वहाँके अजैन विद्वानोकी जैन छात्रोको पढानेकी सकुचित एव विरुद्ध मनोवृत्ति कुछ कम अवश्य हो गई थी फिर भी उदारतापूर्ण नही थी। ऐसे समयमे बनारस जैसे सस्कृतके केन्द्रमे विद्यालयके स्थापन करनेवाले और उसका सचालन करनेवालोके धैर्य, उत्साह, कठिन परिश्रम और जैन समाजमे सस्कृतके प्रकाण्ड पण्डित पैदा करनेकी प्रबल सद्भावना-का पता लग जाता है। जो कि सभी समाजके लिये और खासकर उसके छात्रोके लिए न केवल कृतज्ञता पूर्वक स्मरणीय ही है, अनुकरणीय भी है।

मेरी हार्दिक भावना है कि सम्पूर्ण दि० जैनागमके न केवल अध्येता ही किन्तु आचार्योके वास्तविक हृदयपर और उनके प्रदर्शित मार्गपर सम्पूर्ण समीचीन श्रद्धा रखनेवाले एव उसका समर्थन करनेवाले मनस्वी विद्वान् यहाँसे सदा उत्पन्न होते रहे और विद्यालयको वास्तवमे सफल तथा समाजको उपकृत करते रहें।

तुकोगज, इन्दौर] खूबचन्द्र जैन

स्याद्वाद महाविद्यालय बनारस जैसे संस्कृत केन्द्रमें संस्कृत पठन-पाठनका उच्च स्थान रखता है। पूज्य क्षुल्लक श्री प० गणेशप्रसादजी वर्णी इसके संस्थापक हैं। अधिवेशनकी सफलताके साथ मैं संस्थाकी आगमानुसार उन्नतिका पूर्ण इच्छुक हूँ। द्रव्य कोषकी अपेक्षा भावकोष मेरे पास है उसे ही अपनी सद्भावनाके साथ आपको समर्पण करता हूं।

गो० सि० विद्यालय, मोरेना | **मक्खनलाल शास्त्री**

माता-पिताका रजवीर्य शरीरके भीतर काम करते हैं तो गुरुके सिद्धान्त आत्माके अन्दर। इस दृष्टिसे काशी स्याद्वाद महाविद्यालय हमारे लिए जनक और जननी दोनोंसे ही अधिक महान् है। बुद्धिकी प्रखरतापर मुग्ध होकर जब पूज्य वर्णीजी दश वर्षकी वयमें ही काशी हमें ले गये तब हमने इसी महाविद्यालयके आश्रयमें सब प्रकारसे विकाश पाया। हमने यहीं पढ़ा और कुछ वर्षोंतक यहीं पढ़ाया भी।

आज इसी महाविद्यालयके स्वर्ण जयन्ती उत्सवको देखकर हृदय हर्ष और स्नेहसे परिपूर्ण हो जाता है हम दिनोंदिन इसके अभ्युदय और श्री वृद्धिको चाहते हैं।

महरोनी (झाँसी) **गोविन्दराय जैनशास्त्री**

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि श्री स्याद्वाद महाविद्यालय काशीकी स्वर्ण जयन्ती मनाई जा रही है। यह विद्यालय इस श्रुत पंचमीको अपना पचासवां वर्ष पूरा कर ५१ वें वर्षमें प्रविष्ट हुआ है। जयन्तीका यह समारोह इस विद्यालयके संस्थापक पूज्य श्री गणेशप्रसादजी वर्णीके तत्त्वावधानमें उनके जन्म जयन्तीके साथ मनाया जावेगा। यह सोनेमें सुगन्ध है।

यह विद्यालय वास्तवमें जैन समाजका गौरव है। समाजमें संस्कृतके अध्ययनके लिए प्रोत्साहन देनेवाली संस्थाओंमें यह सर्वोपरि है। इस समय जो जैन समाजमें यत्र-तत्र संस्कृत भाषाके विद्वान नजर आते हैं, उसका अधिकांश श्रेय इसी विद्यालयको है। काशी जैसे संस्कृत भाषाके केन्द्रमें आजसे ५० वर्ष पहले इस संस्थाकी स्थापना कर पूज्य वर्णीजी ने समाजका जो उपकार किया है वह देशके सांस्कृतिक इतिहासमें सदा अमर रहेगा।

आज तो संस्कृतके अध्ययन अध्यापनका प्रचार बहुत बढ़ गया है और संस्कृत पढ़नेवालोंके यत्र-तत्र अनेक प्रकारकी सुविधाएँ प्राप्त हो सकती हैं पर उस समय जहाँतक मेरा खयाल है जयपुरकी महापाठशाला (इस समय जैन संस्कृत कालेज) के अतिरिक्त संस्कृत शिक्षा प्रदान करनेवाली कोई महत्त्वपूर्ण संस्था नहीं थी। आदरणीय वर्णीजीने विद्यालयकी स्थापना और उसके संचालनमें जो परिश्रम किया वह उनके संस्कृत प्रेमका ज्वलन्त उदाहरण है। समाजने भी आर्थिक सहायता देकर इसकी उन्नतिमें जो सहयोग दिया वह भी कम गौरवकी बात नहीं है। फिर भी हमें यह कहनेमें जरा भी संकोच नहीं है कि इसके उत्पादनको देखते हुए इसे जो आर्थिक सहायता प्राप्त हुई वह पर्याप्त नहीं थी। यह सचमुच दुःखकी बात है कि काशी जैसे संस्कृतके केन्द्रमें इसे आर्य समाजियोंके गुरुकुल कांगड़ी जैसा महत्त्वपूर्ण जैनोंका विद्यापीठ नहीं बनाया जा सका।

जैनोंके धन कुबेरोसे हमारा निवेदन है कि वह इस ओर ध्यान दें और विद्यालयकी सर्वांगीण उन्नतिके लिए अपनी धन शक्तिका उपयोग करे।

वर्णीजी महान् है। उनके चारो ओर पैसेकी वर्षा होती रहती है। इस स्वर्ण-जयन्ती समारोहके अवसरपर उनका प्रभाव विद्यालयकी आर्थिक समस्याको हल करनेमे अवश्य समर्थ होगा, ऐसी हमें आशा है।

चैनसुखदास न्यायतीर्थ
प्रिंसिपल दि० जैन संस्कृत कालेज, जयपुर

माननीय श्रद्धास्पद गुरु गोपालदासजीके समयमे जैन सिद्धान्त-विद्यालय मोरेनामें अध्ययन करके प्रत्येक विद्वान् अपनेको गौरवशाली समझता था। गुरुजीके दिवगत होते ही मोरेना विद्यालयका वह सौभाग्य जाता रहा।

स्याद्वाद महाविद्यालय बनारसने अपने जन्मकालमे जो प्रतिष्ठा पायी थी वह न केवल आजतक अक्षुण्ण रही, प्रत्युत उसकी उस प्रतिष्ठामे उत्तरोत्तर वृद्धि ही होती गयी। प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद गुरुदेव श्री १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसादजी वर्णी महोदयसे लेकर आजतक जितने विद्वानोने इस विद्यालयसे शिक्षा प्राप्त की, वे तो अपनेको भाग्यशाली समझते ही है पर सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रमे जो प्रभावक विद्वान आज कार्य करते हुए दृष्टिगोचर हो रहे है वे प्राय इस विद्यालयके ऋणी है। पूज्यपाद गुरुदेव वर्णी महोदयने तो जितना कार्य सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रमे किया है और वे आज भी करते जा रहे है उससे भी अधिक कार्य वे आध्यात्मिक क्षेत्रमे कर रहे है। वास्तवमे वर्णीजी तो आध्यात्मिक जगतमे सूर्यके समान है।

इस तरह सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक कामोमे सलग्न विद्वानोकी विशेषता यह है कि उन्होने स्याद्वाद महाविद्यालय बनारससे शिक्षा पायी है और स्याद्वाद महाविद्यालय बनारसकी विशेषता यह है कि उसने ही इन विद्वानोको जन्म दिया है। दि० जैन समाजका भी यह महान् सौभाग्य है कि स्याद्वाद महाविद्यालय जैसी महती उपकारिणी सस्था उसके बीच और उसके ही सरक्षणमे विद्यमान है।

गवर्नमेंट संस्कृत कालेज बनारससे भिन्न-भिन्न विषयोकी आचार्य परीक्षा पास जितने दि० जैन समाजमे विद्वान दृष्टिगोचर हो रहे है वे सभी विद्वान् स्याद्वाद महाविद्यालय बनारसकी देन है और मै अपनेको सौभाग्यशाली समझता हूँ कि गवर्नमेंट संस्कृत कालेजकी उक्त आचार्य परीक्षाको स्याद्वाद महाविद्यालयसे उत्तीर्ण करनेका पहला अवसर मुझे प्राप्त हुआ।

पूज्य श्री गुरुदेव वर्णी महोदयकी स्याद्वाद महाविद्यालय बनारससे कितनी ममता है यह बात किसीसे छिपी नही है परन्तु जिस विद्वान्ने इस विद्यालयमे किंचित् कालके लिए भी शिक्षा पायी है उसका हृदय भी इसकी ममतासे सदा ओत-प्रोत रहता है। मेरी ममता तो इस विद्यालयमे इतनी है कि मैं समय-समयपर स्वप्नमे अपनेको इस विद्यालयमे शिक्षा प्राप्त करते हुए देखनेका आदी बना हुआ हूँ।

बीना (सागर) **बंशीधर व्याकरणाचार्य**

सन् १९२० से सन् १९४० तक श्री स्याद्वाद विद्यालय बनारसमे मुझे अध्यापन कार्यका अवसर मिला था। जैन समाज व्यापारी वैश्यवर्ग है तथापि विद्यालयमे मद्रास तकके छात्र सत्कुलीन समृद्धिशाली वर्गके आते है। इनमे धर्मश्रद्धा और ज्ञान-पिपासा दोनो विद्यमान रहती है। यह समाज बिना बिचारे किसीपर श्रद्धा नही करता, और श्रद्धा करनेपर उसको यावज्जीवन निर्वाह करता है। विद्यालयमे विद्यार्थी लोगोके विचारसे ही अध्यापक रक्खे जाते है और उनके रक्खे जानेपर विद्यार्थिवर्ग श्रद्धासे अध्ययन करता है और अध्यापकको हर एक कार्यमे सहायता प्रदान करता रहता है जो वर्तमान छात्र समाजमे दुर्लभ होता जा रहा है। मै अपनेको इस परिवारका सदस्य समझता था तथा ये लोग भी मुझे अपने परिवारका ही समझते थे।

यह स्याद्वाद विद्यालय जैन समाजका अत्यन्त उपकार करनेवाला है, क्योकि यहाँ तत्तद्विषयोके प्रगाढ पडितवर्गके मिलनेसे छात्रोको प्रगाढ पाण्डित्य सम्पादन करनेकी सुविधा रहती है यह बात अन्य जैन विद्यालयोमे सम्भव नही है। इस विद्यालयके छात्र हिन्दू विश्वविद्यालयके होनेसे विषयान्तरोको भी पढ सकते है, यह भी इस विद्यालयकी विशेषता है। इस विद्यालयने आजतक अनेक प्रगाढ पडित समाजको दिये है जो तत्तत्स्थानोमे काय कर रहे है। इस विद्यालयके छात्र इतर विद्यालयोके छात्रोके साथ ज्ञान-विनिमय करते रहते है जो ज्ञानवृद्धिका साधन है। यह भी इसी विद्यालयसे हो सकता है, अत इस विद्यालयको जितना समृद्ध और उत्कृष्ट बनाया जावेगा उतना ही अधिक समाजका कल्याण होगा यह मेरा विश्वास है। इस विद्यालयके संस्थापक दिव्यमूर्ति निष्कषायी अध्यात्मप्रेमी, परोपकारी नररत्न परममाननीय प० गणेशप्रसाद जी वर्णी न्यायाचार्य है। आप उन सन्तोमे है जिनका अवतार पृथिवीमे मानव-जातिका कल्याण करनेहीके लिए हुआ करता है। द्रोणाचार्यसे अर्जुनने जिस विनय और श्रद्धासे विद्या ग्रहण कर भारत-युद्धमे विजय प्राप्त की थी उसी तरह उक्त पडितजीने स्वर्गीय प० महामहोपाध्याय अम्बादास शास्त्रीजीसे सम्पूर्ण न्यायशास्त्र विनय और श्रद्धासे प्राप्त कर अपनी इन्द्रियोपर विजय प्राप्त की है। आप किसीसे स्तुतिकी किंवा कुछ लेनेकी कभी भी परवाह नही करते, केवल आत्मचिन्तन और लोककल्याण ये दो ही बाते आपके पास जानेवाले लोगोको देखनेसे आती है। प्राचीन ग्रन्थोमे, आश्रमोमे मृगोका वर्णन मिलता है। उसका कारण यही है कि ऋषि लोगोकी शमनिष्ठता तभी परिपक्व समझी जाती थी जब वे चञ्चल मृग भी शान्त हो जाते थे। उक्त पडितजीकी शमनिष्ठता इतनी परिपक्व हो गयी है कि उनके पास जानेवाले हर एक आदमीको शान्तिका अनुभव होता है। शान्ति ही दुनियाका परम सुख है जिसके लिए प्रत्येक प्राणी दिनरात यत्नशील है—परन्तु उसके उपायोका अज्ञान होनेसे किंवा विपरीत ज्ञान होनेसे निरन्तर दुःखानुभव करता है। जैन शास्त्रोमे दयालुता और त्याग ये भी धर्मके प्रधान अंग बतलाये गये है जो उक्त पडितजीमे क्रियारूपसे परिणत हो रहे है। आपने कितनी ही बार शीतार्त पुरुषोके त्राण करनेके लिए अपने शरीरसे वस्त्रोको उतारकर उनकी पीडाको दूर कर स्वयं पीडाका अनुभव किया है। मनुष्यके अज्ञानान्धकारको दूर कर उसको ज्ञानमार्गमे लगाना ही मुख्य आपका कर्तव्य है। आपने अनेक संस्थाओको स्थापन कर मानव-जातिका परम कल्याण किया है, आपके ही प्रभावसे आज जैन समाजमे विद्यासरिताकी धारा निरन्तर बह रही है। आज जगत् विश्व-

शान्तिको चाहता है, उसके लिए उक्त आदर्श महापुरुष पडितजी सर्वथा योग्य हैं। अत ऐसे महापुरुषकी चिरायु-कामनाकी ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ।

गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज, मुकुन्द शास्त्री खिस्ते

काशी

भारतकी विशेषता इसीमे है कि यहाँ अनेक धर्म प्रकट हुए और राष्ट्रका, समाजका एव व्यक्तिका हित करते हुए परस्पर सहिष्णुतासे रहे। हर एक धर्मका राष्ट्र एव समाजके उत्थानमे एव सगठनमें विशेष स्थान है। हर एक भारतीय व्यक्तिके जानने न जाननेपर भी प्रत्येक धर्मका कुछ विशेष सस्कार उसके अन्त करणपर साक्षात् या अप्रत्यक्षत हुआ ही है। भारतीय मनुष्यके स्वभावका—जो किसी भी धर्मका क्यो न हो—विश्लेषण करनेसे अनेक धर्मोके सिद्धान्तोका पूर्ण आदरसे स्थान उसमें निहित है यह मालूम होगा। इसका प्रधान कारण यह है कि अनेक धर्मो के सिद्धान्तो एव सदाचारोका जीता-जागता चित्र समाजके अन्दर प्रदीर्घकालसे विद्यमान था। परन्तु इधर कुछ सदियोमे मुस्लिम एव विशेषकर अग्रेजी शासनकालमे प्राय सभी प्रदेशोमे धर्म, दर्शन एव सदाचारोका धीरे-धीरे लोप सा हो गया। विश्वगुणादर्श चम्पूकारने इस स्थितिका इस प्रकारसे वर्णन किया है —

वेदव्यास स इह दश या वेद वेदाक्षराणि
श्लोक त्वेक परिपठति य स स्वय जीव एव।

वेदव्यास बननेके निमित्त दस वेदाक्षर जानना पर्याप्त है और बृहस्पति बननेके लिए तो एक श्लोक मात्र पढना ही बस है। परन्तु ईश्वरकी महती कृपा है कि बीसवी शताब्दीके प्रारम्भसे ही इस धार्मिक दुर्दशासे दु खी कई एक सन्त महात्माओसे नही रहा गया। उन्होने धर्म दर्शन एव सदाचारका वास्तविक प्रचार हो इस अभिप्रायसे अनेक सस्थाओका चलानेका विचार किया और अनेक धार्मिक दानी लोगोके साहाय्यसे धार्मिक सदाचार एव दर्शनकी शिक्षाको प्राधान्य देते हुए अनेक सस्थाएँ शुरू की। उनमे जैनधर्म, सदाचार एव दर्शनका प्रचार सभी लोगोमे हो एव खासकर जैनियोमे धर्म और दर्शनके विषयमे जो नितान्त अज्ञान है उसको मिटानेके अभिप्रायसे प्रभुघाटपर श्री स्याद्वाद विद्यालयकी स्थापना ज्येष्ठ शुक्ल ५, १९६२ (१२ जून १९०५) को सन्त श्री १०५ क्षु० श्री गणेशप्रसाद वर्णीजीके प्रयत्नसे हुई, जिसकी कि काशी ऐसे अनेक विद्याओके क्षेत्रमे अत्यन्त आवश्यकता थी, क्योकि अनेक धर्मो के धार्मिक एव दार्शनिक ग्रन्थोका पाठन तत्तद्धर्मावलम्बियोसे जिस प्रकार सम्यग् होता है वैसा भिन्न धर्मावलम्बियोसे नही होता, यद्यपि पढानेवाले अत्यधिक विद्वान् भी क्यो न हो। यह सब जानते है कि अपने पाण्डित्यसे भिन्न धर्मके ग्रन्थ लगाकर पढाना एव उन ग्रन्थोसे अवगत आचारो और विचारोको परमादरसे अपने आचरणमे लाकर पढाना ये दो बाते भिन्न-भिन्न है। जिन लोगोने अलग-अलग दर्शनोको तत्तद्धर्मावलम्बी दार्शनिकोसे पढा हो वे इस बातको अच्छी तरहसे समझ सकते है। अस्तु, बीसवी सदीके प्रारम्भमें और-और धर्मियोके समान ही जैन धर्मियोकी स्थिति थी, केवल तत्त्वार्थसूत्र या भक्तामरको बाँच लेनेसे ही मनुष्य पडित समझा जाता था। परन्तु श्री स्याद्वाद विद्यालयकी स्थापनासे यह स्थिति अब नही रही है। अबतक इस विद्यालयने न्याय, साहित्य व्याकरण, ज्योतिष, जैनदर्शन, सर्वदर्शन, बौद्धदर्शन आदि-आदि विषयोमें तीर्थ एव आचार्य पदवीप्राप्त अनेक उच्च कोटिके विद्वान् अपने समाजमें निर्माण

किये है। इनमे कुछ तो तीर्थ एव आचार्य परीक्षाके साथ-साथ एम० ए०, एल्-एल० बी०, पी एच० डी० इत्यादि अग्रेजी परीक्षा की परमोच्च पदवीको प्राप्त किये हुए भी है। इस विद्यालयने शिक्षा, धर्म-प्रचार आदिके निमित्त अब तक साढे दस लाख रुपया व्यय किया है।

जैन धर्मावलम्बियोंके लिए तो ऐसे विद्यालयकी परम आवश्यकता है ही, परन्तु और अन्य धर्मावलम्बियोके लिए भी इस विद्यालय द्वारा जैनधर्म एव दर्शनका जीता-जागता वास्तविक ज्ञान प्राप्त करनेकी सुविधा हो गयी है।

इस विद्यालयके साथ कई हजार ग्रन्थोका विशाल पुस्तकालय भी है, जिसका उपयोग जैनियोंके समान अन्य धर्मावलम्बी भी कर सकते है। इस पुस्तकालयमे अन्यत्र दुष्प्राप्य हस्तलिखित एव मुद्रित प्राय सभी जैनधर्म एव दर्शन आदिके ग्रन्थ विद्यमान हैं। काशीक्षेत्र अनेक धर्मावलम्बियोका तीर्थस्थान है। इसको जैनधर्मके उपदेशक तीर्थकरोने अपने आचार विचार एव वाससे अलकृत किया है। उनके उपदेश, आचरणीय धर्म एव दर्शनका विचार एव प्रचार करनेवाले श्री स्याद्वाद विद्यालयकी आवश्यकता सदा के लिए बनी रहेगी।

विद्यालयकी स्वर्ण-जयन्तीके इस अवसरपर हम सभी हितैषी लोग परमेश्वरसे प्रार्थना करते है कि यह विद्यालय पूर्वकी भाति सदाके लिए इसी प्रकार कार्य करता रहे।

गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज, **अनन्तशास्त्री फडके व्या० आ०, मी० तीर्थ, वे० केसरी**

काशी

जुलाई सन् १९२९ मे मै अपनी अनेक महत्वाकाक्षाओको लिये हुए स्याद्वाद विद्यालयमे पहुँचा था। उसी वर्ष दिसम्बरमे हिन्दू विश्वविद्यालयका दीक्षान्त समारोह (कन्वोकेशन) प्रतिवर्षकी भाँति मनाया गया था। मै भी उसमे बडी उत्सुकता और हर्षके साथ सम्मिलित हुआ था। मेरी उत्सुकताका खास कारण यह था कि एक तो ऐसे विशिष्ट उत्सवको देखनेका पहला अवसर था और दूसरे मै विश्वविद्यालयका भी विद्यार्थी था। महत्तो व्यक्ति समारोहमे वहा उपस्थित थे। हिन्दू सस्कृतिके अनन्य उपासक तथा हिन्दू विश्वविद्यालयके जन्मदाता स्वर्गीय महामना पडित मदनमोहन मालवीय अपना दीक्षान्त भाषण देनेके लिए ज्यो ही समारोहमे पहुँचे उपस्थित जनसमूहने भारी हर्षके साथ उनका अभिवादन किया। छात्रोको सम्बोधित करते हुए उन्होने जो हिन्दू जाति और देशका गौरव बढानेवाला प्रभावक दीक्षान्त भाषण दिया था, उसके कितने ही शब्द मुझे आज भी याद है। इस अवसरपर हिन्दू विश्वविद्यालयके छात्रो द्वारा जो उद्बोधक एव स्फूर्तिप्रद मङ्गलगान गाया गया था उसकी एक सुन्दर पक्ति तो मुझे सदैव उत्साह प्रदान करती रहती है। वह पक्ति यह है —

हमारी जातिका अभिमान हिन्दू विश्वविद्यालय।'

इसे सुनकर मेरे मनपर यह असर हुआ कि उसी समय इस पक्तिके कुछ शब्दोको परिवर्तन करके उसे निम्न प्रकार गाने लगा —

'हमारी जातिका अभिमान काशी जैन विद्यालय।'

तबसे यह स्फूर्तिदायी पंक्ति मेरे हृदयमें स्थान बनाये हुए है। जब मैं हर्षोद्रेक तथा प्रसन्नतामें होता हूँ तो उस समय यह पंक्ति निसर्गतः कण्ठसे निकल पड़ती है।

वस्तुतः स्याद्वाद महाविद्यालय ऐसा विद्यालय है जिसपर हमें अभिमान होना स्वाभाविक है। हमें ही क्यों, राष्ट्रकी अत्यन्त प्राचीन एवं गौरवपूर्ण महान् भाषा संस्कृत, उसकी शिक्षा, उसके विशाल साहित्य और उसके प्रतिभाशाली विद्वानोंसे अनुराग रखनेवाले प्रत्येक मनीषीका उसपर गर्व हो सकता है।

काशी संस्कृत विद्याका केन्द्र रही है और आज भी है। वहाँ गली-गलीमें सैकड़ों पाठशालाएँ तथा विद्यालय हैं। गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज, काशी विद्यापीठ और हिन्दू विश्वविद्यालयमें संस्कृत महाविद्यालय जैसी मूर्धन्य संस्कृत शिक्षण-संस्थाएँ जहाँ हों पर जैन संस्कृतिका प्रतिनिधित्व करने तथा अपार जैन वाङ्मयका रहस्योद्घाटन करनेवाली संस्कृत-प्राकृत-शिक्षण-संस्था न हो, जब कि वहाँ भगवान् सुपार्श्वनाथ और भ० पार्श्वनाथकी पावन जन्मभूमि है तथा उसके निकट ही सिंहपुरी और चन्द्रपुरीमें दो अन्य तीर्थंकरों---भगवान् चन्द्रप्रभ और भ० श्रेयांसनाथका भी जन्म है। इसके विपरीत जैन वाङ्मयके पठन-पाठनके साथ जहाँ उपेक्षा एवं अनादर बरता जाय वहाँ जैन वाङ्मयके सांस्कृतिक अध्ययन-अध्यापनकी व्यवस्था करना कितना आवश्यक था। इस आवश्यकताको अहिंसा और अपरिग्रह प्रधान जैन संस्कृतिके उन्नायकोंने अनुभव किया और काशीके संस्कृत विद्याकेन्द्रोंके अनुरूप 'स्याद्वाद महाविद्यालय' के नामसे वहाँ एक संस्कृत-प्राकृत-शिक्षण-संस्थाकी स्थापना की। विद्यालयकी स्थापनामें पूज्य वर्णीजी तथा बा० देवकुमारजी और उनके परिवारको मुख्य श्रेय प्राप्त है।

हर्ष है कि वही स्याद्वाद महाविद्यालय अपने उज्ज्वल एवं यशस्वी जीवनके ५० वर्ष पूर्ण करके ५१वें वर्षमें प्रवेश कर रहा है और इस अवसरपर उसके संचालकगण उसकी स्वर्ण-जयन्ती मना रहे हैं। इन ५० वर्षोंमें विद्यालयने समाज, धर्म, संस्कृति और देशकी जो उल्लेखनीय एवं गौरवपूर्ण सेवाएँ की हैं उन सेवाओंसे विद्यालयका नाम और यश सदैव अमर रहेगा। देशके विभिन्न भागों तथा समाजकी विविध संस्थाओंमें जो विद्वान् आज विद्यमान हैं वह एकमात्र स्याद्वाद महाविद्यालयकी देन है। मुझे गर्व है कि मैं भी इस यशस्वी विद्यालयका स्नातक हूँ।

आज मैं उसकी महान् स्वर्णजयन्तीके अवसरपर अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हुआ उसकी समृद्धि एवं उत्कर्षमय उज्ज्वल भविष्यकी आकांक्षा करता हूँ।

श्री समन्तभद्र संस्कृत विद्यालय,
दिल्ली

दरबारीलाल जैन, कोठिया
(न्याय-जैन दर्शनाचार्य)

करीब ४५-४६ वर्ष पहले श्री स्याद्वाद दिगम्बर जैन विद्यालयका डेपूटेशन कलकत्तामें भादो माहमें आया था उसमें पंडित (पीछे ब्रह्मचारी ज्ञानानन्दजी) उमरावसिंह, श्री बाबू नन्दकिशोरजी जैन, कोषाध्यक्ष श्री मानिकचन्दजी जैन तथा कुछ छात्रगण भी आये थे। मुझे अच्छी तरह याद है कि मेरे स्वर्गीय पिता रामजीवनदासजीने उन छात्रोंसे (जिनमें स्वर्गीय पंडित गजाधरलालजी आदि थे) धार्मिक चर्चा की और बहुत ही उत्तम उत्तर पाकर बहुत ही प्रभावित हुये। उस समय जैन समाजमें उच्च-सैद्धान्तिक बातोंके जानकार पंडित १ या २ ही थे। मेरे पिताजी उन छात्रोंका निमन्त्रण करते और उनको

घोडा-गाडीमे कलकत्ता शहर देखने भेजा करते थे। प्रशंसा करते हुए कहते, यह हमारे जैनधर्मकी प्रभावना करेंगे इनसे धर्मका संरक्षण होगा। विद्यालयके वास्ते बहुतसे भाइयोको इकट्ठा करके ५ वर्षके लिए मासिक सहायता दिलाई थी। उस समय पू० ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजीका प्रवचन कलकत्तामे हुआ करता था उन्होने भी बहुत प्रेरणा की थी। जिस समय मेरे पिताजीका समाधिमरण हो रहा था पंडित गजाधरलालजी भी मौजूद थे। उनको देखते ही पिताजीने ५०००) की सहायता ८-१२-१८ को सबेरे विद्यालयको देनेके लिए कहा था, उससे अलायस मिल तथा अम्बिका मिलके शेयर प्रिफरेंस खरीदकर दिया गया, उसका ब्याज आजतक विद्यालयको मिलता है। छात्रोको देखकर पिताजीके हृदयमे बडा आनन्द होता था कारण यह था कि स्व० पंडित पन्नालालजी न्याय दिवाकर, स्व० पंडित कलाधरजी (जिनसे बचपनमे हम पढे थे) तथा स्व० पंडित गौरीलालजी ब्राह्मण बनकर काशीमे पढे थे। इनके पढनेका खर्च मेरे पिताजी तथा ५-६ और भाई देते थे। मेरे पिताजीको सुबह २ घण्टा तथा शामको २ घण्टा शास्त्र सभामे नित्य जानेका शौक था। वह पढे-लिखे कम थे पर उनकी याददास्त बहुत तेज थी सो सिद्धान्तकी बात सुननेको लालायित रहते थे। इसी वास्ते विद्यालयके छात्रोको देखकर उनका हृदय गद-गद हो जाता था। हमारे सब बडे भाइयोका भी विद्यालयके प्रति बडा प्रेम था। जिस समय भाई गुलजारीलाल जयपुरमे इलाज कराते थे ३-११-५० मे तब छोटेलालकी प्रेरणासे २५०००) विद्यालयको देनेके लिए कहा—उसी तरह भाई दीनानाथका समाधिमरण ३ वर्ष पहले हुआ उस समय उन्हाने भी ५०,०००) के दानमे विद्यालयको १५०००) दिया। हमारा सब जैन समाजसे नम्र निवेदन है कि आज जितने बडे-बडे जैन पंडित उच्चकोटिके विद्वान् जैन समाजको नजर आ रहे है वह सब इसी विद्यालयके छात्र थे। हमारे हृदयके श्रद्धेय पूज्यपाद क्षुल्लक गणेशप्रसादजी वर्णी महाराजका हाथ शुरूसे इस विद्यालयकी उन्नतिमे रहा है जो आजतक चालू है। स्व० ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी भी विद्यालयके वास्ते जगह-जगह सहायताका प्रयत्न किया करते थे। मै ३ दफे विद्यालय देखने जा चुका हूँ। मै हृदयसे इस विद्यालयकी उन्नति चाहता हू तथा पंडित कैलाशचन्द्रजीको विद्यालयकी उन्नतिका कारण समझता हू। पंडितजीको जब देखता हूँ हृदयमे उनके प्रति श्रद्धा होती है। मै सकल जैन समाजसे प्रार्थना करूंगा कि विद्यालयका पूर्ण सहायता दे। मै भी अपने पुत्रोका बराबर प्रेरणा करूंगा कि विद्यालयको सहायता पहुचाते रहे।

बेलगछिया, कलकत्ता — **नन्दलाल**

प्रत्येक वस्तु द्रव्य क्षेत्र काल भाव स्वचतुष्टय रूप है। चारोकी उत्तमतासे ही वस्तु उन्नत मानी जाती है "स्याद्वाद महाविद्यालय" मे चारो ही बाते उन्नत रूप है।

द्रव्य—हिन्दूविश्वविद्यालय आदि इतनी विपुल ज्ञान सामग्री है जिससे द्रव्यापेक्षा भी उत्तम है।

क्षेत्र—सप्तम तीर्थकर श्री सुपार्श्वनाथ तथा तेईसवे, पार्श्वनाथ स्वामीका जन्म हुआ है अत क्षेत्रापेक्षाभी उत्तम है।

काल—जिस समय भगवानका जन्म हुआ उस कालकी अपेक्षा उत्तमता है।

भाव—प्रतिदिन छात्रोको आत्माका स्वभाव केवल ज्ञान, सम्यक्त्व प्राप्तिकी शिक्षा दी जाती है, अत भावापेक्षा उत्तमता है।



श्री बाबू छोटेलालजी जैन, एम० आर० ए० एस० स्वागत-मंत्री



'जर्टाकिंग,' सेठ गजराजजी गंगवाल
कलकत्ता
जयन्ती के स्वागताध्यक्ष



श्री बाबू निर्मलकुमारजी, रईश

—आरा—



श्री बाबू चक्रेश्वरकुमारजी रईश

हिन्दुओंमें गंगाजीको पवित्र तीर्थ माना गया है इसीके किनारे आरानिवासी बाबू देवकुमारजीके पूर्वजोने दो मंजिला सुपार्श्वनाथ तीर्थंकरका विशाल मंदिर बनाया है। ऊपर मंजिलमें सुपार्श्वनाथकी प्रतिमा विराजमान है, नीचे भवनमें छात्रगण विद्याध्ययन करते हैं, उसीमें रहते हैं। भोजनादि बनानेके लिए पासमें स्थान बना है, "स्याद्वाद" शब्दका अर्थ अविरोधरूपसे वस्तु तत्त्वका प्रतिपादन करना है। जिसकी समानता केवल ज्ञानके समान है। सिर्फ प्रत्यक्ष परोक्षका भेद है। समन्तभद्र स्वामीने कहा है—स्याद्वादकेवलज्ञाने सर्वतत्त्व प्रकाशने। भेद साक्षादसाक्षाच्च ह्यवस्त्वन्यतम भवेत् ।।

संसारके जितने भी विरोध हैं उनको स्याद्वादके द्वारा ही निराकरण किया गया है—

अमृतचंद्र सूरीने कहा भी है—

एकेनाकर्षन्ती श्लथयन्ती वस्तुतत्त्वमितरेण ।
अन्तेन जयतिजैनी नीतिर्मन्थाननेत्रमिव गोपी ।।

स्याद्वादकी शिक्षा देनेवाला महाविद्यालयका महत्त्व कितना है इसका पाठक स्वयं अनुभव करें। जिसने आत्माकी शक्तिको केवल ज्ञानरूप श्रद्धान कराया। श्रद्धान करनेवाला मोक्षका पात्र हो जाता है। अर्द्ध पुद्गलपरावर्तनमें अवश्य मुक्ति होती है इससे अधिक महत्त्व क्या हो सकता है। ऐसी शिक्षाका देनेवाली संस्थाको स्थायी बनाना चाहिये।

जितने भी जैन विद्वान् दृष्टिगत हो रहे हैं उन सबोने इसी संस्था द्वारा शिक्षण प्राप्त किया है। जैन समाजका कर्त्तव्य है कि ऐसे स्वर्ण जयन्तीके अवसरपर चंचल लक्ष्मीसे मोह छोडकर संस्थाको स्थायी बना देवें जिससे कार्यकर्त्ताओको द्रव्यकी चिंता न रहे। साम्यवादका समय है—चंचल लक्ष्मी राजा महाराजाओके पास नही रही तो हम क्या इसे रख सकेंगे? यह पुण्यकी दासी है—

'इस हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खाया बह गया'। आशा है कि जैन समाज विचार करके स्थायी रूप संस्था बनाये रखनेका प्रयत्न करेगा।

दि० जैनविद्यालय, बडनगर धर्मरत्न—पं० राजकुमार शास्त्री

मुझे विद्याकल्प-तरु स्याद्वाद विद्यालयमें सन् १९३२ जुलाई-अगस्तके महीनेमें १ माह १७ दिन-का सुयोग विद्याध्ययनार्थ प्राप्त हुआ था, पर अस्वस्थताके कारण मैं अध्ययन न कर सका यह मेरा दुर्भाग्य था। गंगाके कूलपर सीना तानकर खडा हुआ यह विद्यालय अहिंसा, सत्य, अपरिग्रहवादका सन्देश देता हुआ न मालूम कितने हजार हृदयोमें ज्ञानदीप प्रज्वलित कर चुका है। मेरी मंगलकामना है कि यह कल्पतरु सतत शुक्ला द्वितीयाके चन्द्रकी तरह वृद्धिगत हो और स्याद्वाद विद्यालयकी खानिसे सर्वदा स्याद्वादी पैदा होते रहें।

सह सम्पादक 'जैन मित्र' सूरत ज्ञानचन्द्र जैन 'स्वतंत्र'

उस समय विद्यालयमे सर्वश्री पूज्य प० अम्बादासजी शास्त्री, प० गुलाब झाजी, प० सुब्रह्मण्यजी शास्त्री, प० उमरावसिहजी (बादमे ब्र० ज्ञानानन्दजी) आदि अध्यापन कार्य करते थे। सभी अध्यापक बडी योग्यता एव प्रेमसे अध्यापन करते थे। पूज्य प० अम्बादासजी शास्त्रीकी अध्यापन शैली इतनी उत्तम थी कि एक बार पढा देनेपर दूसरी बार प्रश्न करनेकी आवश्यकता ही नही पडती थी। कभी-कभी पूज्य वर्णीजी व बाबा भागीरथजी भी विद्यालयमे रहते थे तथा छात्रोपर पूरी निगरानी रखते थे।

विद्यालयका वातावरण बहुत सुन्दर व शान्त था। व्यवस्था बहुत अच्छी थी।

मैने जिस समय पहले पहल बनारसकी पवित्र भूमिपर पदार्पण किया और धोती-दुपट्टा पहने, चोटियोमे गाँठ लगाये हुए साधारण वेशमे इतस्तत जाते हुए शिक्षार्थियोको देखा तो सहसा मेरे हृदयमे भावना उत्पन्न हुई कि वास्तवमे बनारस (काशी) प्राचीन सस्कृति तथा विद्याका केन्द्र है। एव शिक्षाके लिए सर्वथा उपयुक्त क्षेत्र है। स्याद्वाद विद्यालयका स्थान भी नगरीके दूषित वातावरणसे दूर गगाके रम्य तटपर है। इस सस्थाने जैन समाज एव जैनधर्मका ध्वज उन्नत किया है।

मै समाजके श्रीमानो धीमानो, एव हितैषियोसे सानुरोध प्रार्थना करता हूँ कि वे वर्तमान परिस्थितिको दृष्टिमे रखते हुए विद्यालयको चिरस्थायी बना दे।

हिम्मतपुर (आगरा) जुगमन्दरदास जैन M P H

न जाने क्या काशीका वातावरण न केवल सस्कृतके ही अपितु अन्यान्य भाषाओके अध्ययनके लिए भी सर्वथा उपयुक्त है। वहांके वातावरणमे पहुँचकर विद्यार्थी जी-जानसे अध्ययनमे लग जाता है। काशीमे पढनेकी इच्छा तो बहुत पुरानी थी। किन्तु सन् १९२९ में दीपावलीके बाद स्याद्वाद विद्यालयमे रहनेका अवसर मिला वह भी केवल ६ माहके लिए। काव्यतीर्थकी परीक्षा देकर वापिस आया जरूर, पर इच्छा यही थी कि इस विद्यालयमे लम्बे समयतक रहूँ। सन् १९३६ मे साहित्याचार्यके अन्तिम खण्डकी परीक्षाकी गुरुताने पुन दो माहतक रहनेका अवसर दिया। विद्यालयके प्रधानाध्यापक श्री कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्त शास्त्री और साहित्याध्यापक श्री प० मकुन्द शास्त्री खिस्तेके सहृदयतापूर्ण व्यवहार और समीचीन शिक्षणा-पद्धतिका जब भी स्मरण हो आता है तब हृदय आनन्दमे भर आता है। स्याद्वाद विद्यालय श्री १०५ तपोनिधि पूज्य गणेशप्रसादजी वर्णीके द्वारा सस्थापित अनेक सस्थाओमे आद्य तथा प्रमुख सस्था है। इसने जैन समाजका मस्तक गौरवान्वित किया है साथ ही समाजको अनेक विद्वान् समर्पित किये है। अपनी सेवाओके शब्दोको प्रवाहित करनेके बाद विद्यालयकी सुवर्ण जयन्तीका आयोजन करना उसके सचालकोकी उत्तम सूझ है।

कटरा, सागर
६-१-१९५६ पन्नालाल साहित्याचार्य

यद्यपि पूज्य वर्णीजी सासारिक कृत्योसे निवृत्त है तथापि स्वोद्भूत स्याद्वाद विद्यालयकी स्वर्ण-जयन्ती उन्हें भी पुलकित करती होगी। उचित ही है, अपने आध्यात्मिक स्रोतका नदी रूप शुभानन्द देगा ही। प्राकृतिक सौन्दर्यपूर्ण इस विद्यामन्दिरकी किसी भी बातको भूलना असभव है। भूले भी कैसे ? जो बाते अन्य विद्यालयोमें असम्भव मानी जाती थी अथवा आज भी असभव है उन्हे इसने तथा इसके विद्यार्थियोने सहज ही सभव कर दिया है। सस्कृत और इगलिशके प्रौढ विद्वान् तैयार करनेका श्रेय इसी विद्यालयको है। मेरी हार्दिक विनति।

नौहरकलॉ (झासी)] भागचन्द्र शास्त्री

शुभ-कामना-सन्दोह

I send my best wishes for the success of the celebrations and hope that the Vidyalaya will continue to do its good work in the years to come

Vice-President's Secretariate, } *New Delhi* } **S Radhakrishnan**

यह महाविद्यालय सप्तम तीर्थंकर भगवान सुपार्श्वनाथके जन्मस्थानपर स्थापित किया गया है और इसमें सस्कृत तथा अंग्रेजीके पूर्ण विद्वान् उत्पन्न किये गये है। महाविद्यालयकी प्रगति सुनकर मुझे अत्यन्त सतोष होता है। स्वर्ण-जयन्तीके लिए मेरी हार्दिक शुभ कामनाएँ।

राज्यपाल, म प्र,
नागपुर
पट्टाभि सीतारामय्या

श्री स्याद्वाद महाविद्यालयकी स्वर्ण जयन्तीका समाचार पाकर प्रसन्नता हुई। श्री स्याद्वाद महा-विद्यालय काशीकी एक जानी हुई शिक्षा-सस्था है जहाँ सस्कृत एव प्राकृत भाषाओके प्रौढ अध्ययनकी सुन्दर व्यवस्था है। यहाँके स्नातकोका दृष्टिकोण सदा राष्ट्रीय रहा है। मै इस सस्थाकी उन्नति और स्वर्ण-जयन्ती समारोहकी सफलताकी कामना करता हूँ।

परिवहन एव रेल मत्री,
नई दिल्ली
लालबहादुर (शास्त्री)

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि "श्री स्याद्वाद महाविद्यालय" की स्वर्ण-जयन्ती आगामी ११-१२ फरवरीको इसरी (हजारीबाग) मे मनायी जानेवाली है। वास्तवमे यह विद्यालय अपने ढगका एक ही प्रतीत होता है, जहाँ सस्कृत और अंग्रेजी दोनो भाषाओमे उच्च शिक्षा दी जाती है। मुझे आशा है कि

यह विद्यालय ऐसे स्नातकोको उत्पन्न करेगा जो राष्ट्रीय कार्यों, समाज-सुधार सम्बन्धी तथा अन्य कार्योमे प्रमुख प्रवृत्ति रखेंगे।

समारोहकी पूर्ण सफलताके लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ है।

सेचन-विद्युत् मंत्री,
नई दिल्ली । गुलजारीलाल नन्दा

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि श्री स्याद्वाद महाविद्यालयने इस वर्ष अपने जीवनके ५० वर्ष पूर्ण करके ५१वे वर्षमे पदार्पण किया है और दिनाक ११-१२ फरवरीको इस महाविद्यालयकी स्वर्ण-जयन्ती मनानेका निश्चय किया है।

इस महाविद्यालयकी विशेषता यह है कि न केवल विद्या-क्षेत्रमे बल्कि समाज-सुधार-क्षेत्रमे भी स्नातकोको उत्तीर्ण किया है। स्वतन्त्र भारतमे ऐसे महाविद्यालयोकी अत्यन्त आवश्यकता है, और जो सेवा ऐसे विद्यालयोके सस्थापक करते है वह अत्यत प्रशसनीय है।

स्वर्ण-जयन्तीके शुभ अवसरपर मैं अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ भेजता हूँ।

(मुख्यमत्री शाह मजिल)
हैदराबाद दक्षिण बि० रामकृष्णराव

मुझे यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता है कि श्री स्याद्वाद महाविद्यालय काशी, अपने जीवनके ५० वर्ष समाप्त कर ५१वे वर्षमे पदार्पण कर रहा है। प्राकृत एव सस्कृत भाषाओके प्रौढ अध्यापनके साथ ही साथ विद्यार्थियोके लिए पाश्चात्य विद्याकी भी सुविधा प्रदान करना इस सस्थाकी विशेषता रही है। इस सस्थाने समाजको बडे-बडे विद्वान दिये है। यह हमारे लिए गौरवकी बात है। इस सस्थाके चिरायुष्य एव उत्सवकी सफलताकी कामना करता हूँ।

वित्तमत्री मध्यभारत—
ग्वालियर। मिश्रीलाल गगवाल

मुझे बडी प्रसन्नता है कि स्याद्वाद महाविद्यालयकी स्वर्ण-जयन्तीका उत्सव मनाया जा रहा है। यह महाविद्यालय जनता तथा समाजके लिए सदैवकी भाँति उपयोगी सिद्ध होता रहेगा। इसकी मुझे पूरी आशा है।

मेरी शुभकामना आपके महाविद्यालयके साथ है।

मुख्यमत्री, रीवाँ शम्भुनाथ शुक्ल

I am exceedingly pleased to visit the Syadvad Maha Vidyalaya which is a most notable Sanskrit College of the Digambar Jains in Banaras The building of the College occupies a very grand site on the Ganges and attracts visitors from all parts of the world. There

is a large number of students who are accommodated in a well disciplined boarding house and looked after by a staff of professors who are specialists in Sanskrit learning. The professors are as noble in their behaviour as their pupils are obedient and modest

9-12-'13
Kashi

Maha Mahopadhyay,
Satish Chandra, Vidyabhushan,
Siddhant Mahodadhi
Principal Sanskrit College, Calcutta.

आज प्रात काल बाबू भगवानदासजी तथा अन्य मित्रोके साथ मै इस पाठशालाको देखनेको आया। इसको देखकर हम लोगोको बहुत प्रसन्नता हुई। विद्यार्थियोको नित्य व्यायाम करना आवश्यक है।

सर्वगुणैर्विहिनोपि निर्वीर्यं कि करिष्यति । गुणीभूता गुणा सर्वे तिष्ठन्ति हि पराक्रमे ॥

मै आशा करता हूँ, पाठशाला के अधिकारी इसपर ध्यान देगे।

वैशाख कृष्ण ८ स० १९७४

मदनमोहन मालवीय
(डा०) भगवान्दास

I was very hospitably received at the Jain Hostel and student's hall on February the 23rd and very much interested by the local organization and the education of the young members of Jain Community. An ancient Greek philosopher said one "AVTORSORI" but the Jain religion seems by its stability and continuity to be an exception to that almost universal form

23-2-1915

M M. Allenge
Morton College, Oxford

It was a great pleasure to visit the Syadvad Maha Vidyalaya The building is situated on the Prabhughat and commands a grand view of the Ganges. A note-worthy feature of the place is the Temple dedicated among others, to Suparshvanath, the seventh Tirthankar, who is said to have born at the place I was highly pleased to get acquainted with Sanskrit and other professors There is also arrangement for the boarding and lodging accommodation of the scholars The Sanskrit library of the Jain works is fairly large, some of the most important works from which, I took nearly two hours to have a glimpse of.

A well conducted institution like this deserves patronage and support not only at the hands of members of the Digambar Jain Community, but also by the public in general I wish it every success.

29-12-1914 } **Tukaram Krishna Laddu,** Ph D
Queen's College, Banaras

मै स्याद्वाद विद्यालयमें चार दिन रहा। यहाँके अधिकारियो और विद्यार्थियोंसे मिलकर मुझे बडी प्रसन्नता हुई। विद्यार्थियोके विद्याप्रेम और स्वावलम्बनसे विश्वास होता है कि भविष्यमें वे समाजकी सेवा कर सकेंगे।

२०-७-'२१ } वेनीप्रसाद, एम० ए०, डी० लिट्०
प्रयाग विश्वविद्यालय

मैंने विद्यालयमे आज आकर बडा आनन्द प्राप्त किया। मुझे आशा है कि विद्यालयको जैन धर्मावलम्बियोसे सदा पूर्ण सहायता मिलती रहेगी जिससे यह संस्था चिरस्थायी हो। साथ ही मुझे यह भी आशा है कि यहाँके विद्यार्थी ससारमे उपयुक्त स्थानोको प्राप्त कर भारतका गौरव बढावेगे और उसकी समुचित सेवामे तत्पर रहेंगे।

२ मई १९३४ } श्रीप्रकाश
(राज्यपाल मद्रास)

श्री स्याद्वाद विद्यालय संस्कृत भाषा और जैनधर्मकी जो सेवा कई वर्षोंसे लगातार करता आ रहा है, उससे न केवल काशी वरन् काशीके बाहर भी विद्याप्रेमी लोग परिचित है। इसके अधिकारी इस बातका भी सतत प्रयत्न करते हैं कि छात्रोको विद्याभ्यास करानेके साथ-साथ उनमें स्वदेशानुराग भी उत्पन्न किया जाय और वह उस प्रवाहके साथ चल सके जो इस समय राष्ट्रको आन्दोलित कर रहा है। मुझे यहाँका काम देखकर सतोष हुआ और आशा करता हूँ कि यह उत्तरोत्तर उन्नति करता जायगा।

१९-१२-'३९ } सम्पूर्णानन्द
(मुख्यमंत्री उ. प्र)

स्याद्वाद विद्यालयमे आकर बडा सतोष हुआ विद्यार्थियोसे जो बातचीत हुई उससे पता चला कि उनमे विचार जाग्रति काफी हुई है और उनमे विचारकी उदारता भी मैंने देखी।

३-१-'४२ } काका कालेलकर

मै इस संस्थाके विषयमें क्या लिखूं! मेरे लिये तो यह सदा आदरणीय और पूज्य रही है।

११-१-'४२ } कमलापति त्रिपाठी
(सेचन-सूचना मंत्री उ. प्र.)

स्नातक-कोष

स्वर्ण जयन्तीका एक अग स्नातक-कोषकी योजना है। इसमे अबतक निम्न सहयोग प्राप्त हुआ है —

रुपया	नाम	स्थान
१००१)	सौ० केशरबाई फुन्दीलाल गोरावाला	मडावरा (झाँसी)
१००१)	श्री तुलाराम जैन, वैद्यराज	बेलनगज, आगरा
५०१)	,, प० अक्षयकुमार जैन, पेपर मर्चेन्ट एण्ड प्रिंटर्स, अन्धेरदेव	जबलपुर
२००)	,, डा० भागचन्द्रजी, डी० एम् सी०	डालमियानगर
११२)	,, बाबू चेतनलाल राजकुमार जैन	,,
१०१)	,, प० ज्ञानचन्द्र 'आलोक' शास्त्री, आचार्य एम० एस सी० आदि	,,
१०१)	,, बाबू कपूरचन्द्र जैन	ईसरी
१०१)	,, प० फूलचन्द्र, शास्त्री म० मत्री वर्णी ग्रन्थमाला	बनारस
१०१)	,, ,, कैलाशचन्द्र शास्त्री, आचार्य स्याद्वाद महाविद्यालय	,,
१०१)	,, ,, महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य, उपा० प्राच्य विद्या० का० वि० वि०	,,
१०१)	,, बाबू मोजीलाल जैन, बी० ए०, आर्टस् कालेज	,,
१०१)	,, प० जगमोहनलाल अमरचन्द्र, शास्त्री	कटनी
१०१)	,, ,, केशरीमल जैन शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य	,,
१०१)	,, ,, वंशीधरजी व्याकरणाचार्य	बीना
१०१)	,, ,, पन्नालालजी, काव्यतीर्थ	छपरा
१०१)	,, लाला बाबूलाल जैन—भगीरथ आइसक्रीम क० चाँदनीचौक	दिल्ली
१०१)	,, प० दरबारीलाल, शास्त्री, न्यायाचार्य आदि	दिल्ली
१०१)	,, ,, चन्द्रमौलिजी, शास्त्री	,,
१०१)	,, ,, पूरणचन्द्रजी, शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य	मुरादाबाद
१०१)	,, ,, शीतलप्रसादजी शास्त्री, आचार्य, एम० ए० एल० टी०	मुजफ्फरनगर
१०१)	,, ,, प्रेमचन्द्रजी, शास्त्री, एम० कॉम० आदि	डिब्रूगढ़
१०१)	,, ,, नेमिचन्द्रजी, शास्त्री, ज्योतिषाचार्य आदि	आरा
१०१)	,, ,, वंशीधरजी, न्यायालकार, प्रधान स० दु० दि० जै० वि०	इन्दौर
१०१)	,, ,, जीवन्धरजी, न्यायतीर्थ, भूतपूर्व प्रधान स० दु० दि० जै० वि०	,,
१०१)	,, प्रो० प्रेमसागरजी, शास्त्री, सा० र०, एम० ए०	बड़ौत (मेरठ)
१०१)	,, ,, राजकुमार, साहित्याचार्य, एम० ए० आदि	,,
१०१)	,, प० नरेन्द्रकुमार, शास्त्री, बी० ए०, एम० एल० ए०	रीवाँ
१०१)	,, डा० गुलाबचन्द्रजी, शास्त्री, आचार्य, पी०-एच० डी०	नालन्दा

१०१)	श्री डा० पूरणचन्द्रजी, ए० एम० एस० आदि	सागर
१०१)	,, ताराचन्द्र, बी० ए०, एल० एल० बी०, जु० मजिस्ट्रेट	,,
१०१)	,, डा० त्रिलोकचन्द्रजी, शास्त्री, आचार्य, एम० ए० एस०	पुरी
१०१)	,, प० ज्ञानचन्द्रजी, शास्त्री, बी० ए०, एल० टी०	जबलपुर
१०१)	,, ,, मोहनलाल, शास्त्री, लाखाभवन, पुरानी चरहाई	,,
१०१)	,, ,, भुवनेन्द्रजी 'विश्व'	,,
१०१)	,, ,, गुलाबचन्द्रजी, आचार्य, एम० कॉम० आदि	,,
१०१)	,, दि० महिला समाज द्वारा—श्रीमती सरस्वती बाईजी	,,
१०१)	,, प० बालचन्द्रजी, शास्त्री, काव्यतीर्थ	नवापारा राजिम
१०१)	,, प० श्रीरामजी, शास्त्री	खण्डवा
१०१)	,, ,, राजकुमारजी, शास्त्री, प्रतिष्ठाचार्य	बड़नगर
१०१)	,, ,, श्यामलालजी, शास्त्री, न्यायतीर्थ आदि	ललितपुर (झांसी)
१०१)	,, हुकुमचन्द्र, शराफ, एम० एस सी०	,, ,,
१०१)	,, हजारीलाल वकील, बी० ए०, एल एल० बी०	आगरा
१०१)	,, ला० जयचन्द्र जैन, स्वा० निशात टाकीज	अम्बाला छावनी
१०१)	,, वैद्य अभयकुमार गुलाबचन्द्र जैन, एम० ए० एम० नेचरोपैथ	नागपुर
१०१)	,, से० केवलचन्द्रजी जैन,	सतना
१०१)	,, प० राजधरलालजी, व्याकरणाचार्य	हस्तिनापुर
१०१)	,, ,, रतनचन्द्र शास्त्री, पवित्र केशर भंडार	तलोद (गुजरात)
१०१)	,, ,, सुरेशचन्द्रजी, शास्त्री, दि० जैन मि० स्कूल	हजारीबाग
१०१)	,, ,, बालचन्द्रजी, काछल्ल, मेनेजर बीसपंथी कोठी	मधुवन
१०१)	,, ,, जुगलकिशोरजी, बजाज, विशारद	बावली (मरठ)
१०१)	,, ,, पन्नालाल शास्त्री, क्लाथ मर्चेन्ट	छतरपुर
१०१)	,, ,, बिहारीलाल बाबूलालजी, विशारद, बी० कॉम०	बड़ामल्हारा (छतरपुर)
१०१)	,, प्रो० सगुनचन्द्र चौधरी विशारद एम० ए०	बामोदा
१०१)	श्री प० भागचन्द्रजी विशारद	गोंदिया
८१)	,, प० माणिकचन्द्रजी कौन्देय, न्यायाचार्य आदि	फिरोजाबाद
८३)	,, ,, भगवानदासजी, शास्त्री द्वारा	रायपुर
६०)	,, सेठ भागचन्द्र इटौरिया	दमोह (सागर)
६०)	,, ,, राजकुमारजी द्वारा	निवाई (राजस्थान)
५१)	,, ,, अमृतलालजी, शास्त्री, जैनदर्शन-साहित्याचार्य	बनारस
५१)	,, ,, बालचन्द्र, शास्त्री, धवला कार्यालय	बम्बई
५१)	,, ,, कुन्दनलाल, शास्त्री, एम० ए०, एल० टी० आदि	भेलसा
५१)	,, ,, धीरेन्द्रकुमारजी, न्यायतीर्थ	महावीरजी

५१) श्री प० हेमचन्द्रजी शास्त्री, बी० ए०	अजमेर
५१) ,, प्रो० बालचन्द्रजी, शास्त्री, एम० ए०, पुरातत्व संग्रहालय	नागपुर
५१) ,, प० ज्योतिस्वरूप जैन, शास्त्री, जैन-प्राचीन न्यायतीर्थ	सहारनपुर
५१) ,, ,, उदयचन्द्र, वैद्यशास्त्री	मेहराई (ग्वालियर)
५१) ,, प्रो० नन्दलालजी जैन, शास्त्री एम० एस सी०	छतरपुर
५१) ,, प० चुन्नीलाल बाबूलाल भट्ट, विशारद	खुरई
५१) ,, प्रो० सुखनन्दन, बी० ए०, साहित्याचार्य	बड़ौत (मेरठ)
५१) ,, ,, हरीन्द्रभूषण, सा० आ०, एम० ए० आदि	ललितपुर (झाँसी)
५१) ,, ,, उदयचन्द्रजैन, आचार्य, एम० ए० आदि, वर्णी कालेज	,, ,,
५१) ,, ,, भागचन्द्र शास्त्री—नोहर कलाँ, पो० जखौरा	,, ,,
५१) ,, ,, राजकुमारजी, शास्त्री आदि, दि० जैन बोर्डिंग	ईडर
५१) ,, , मोतीलाल जैन, न्यायतीर्थ	अलवर
५१) , ,, गोपालदासजी, शास्त्री	,
२५) श्री प० माधोचन्द्रजी, शास्त्री, न्यायतीर्थादि	आरा
२५) , ,, बाबूलाल फागुल्ल, शास्त्री आदि	बनारस
२५) ,, ,, कुन्दनलाल जैन, साहित्यमनीषी, सन्मति कुटीर, चन्दाबाडी	बम्बई–४
२५) , ,, कच्छेदीलालजी शास्त्री, बी० ए०	मथुरा
२५) ,, ब्र० नाभिनन्दन जैन, शास्त्री, बी० काम०	मुजफ्फरनगर
२५) ,, प० ताराचन्द्रजी, शास्त्री प्रा० ती० आदि	रामटेक
२५) ,, बा० दुलीचन्द्रजी, शास्त्री, बी० एस सी०, बी० टी०, एम्० एड०	शिवपुरी
२५) ,, प० ताराचन्द्रजी, शास्त्री आदि	हस्तिनापुर
२५) ,, डा० जगदीशचन्द्र, एम० ए० पी० एच० डी०, २८, शिवाजीपार्क	बम्बई-२८
२५) , प० गोविन्दरामजी, काव्यतीर्थ आदि	महरोनी (झाँसी)
२५) ,, ,, रामप्रसाद वैद्य—जैन बालामृत कार्या० बेलनगंज	आगरा
२५) , , प्रेमचन्द्रजी, शास्त्री, पो० बल्देवगढ़	अहार
२१) ,, मोतीलाल, शास्त्री	बीना
२१) ,, ,, अमरचन्द्र, शास्त्री आदि	डालमियानगर
२१) ,, ,, मुन्नालाल, काव्यतीर्थ—६०, गोराकुण्ड	इन्दौर
१५) ,, ,, विजयकुमार चौधरी, शास्त्री आदि	बडामल्हरा (छतरपुर)
१५) , ,, गुलाबचन्द्र जैन, विद्यार्थी	,, ,
११) ,, ,, नत्थालाल 'नीरज'	सतना
११) ,, ,, महेन्द्रकुमार जैन, शास्त्री, जू० हाई० स्कूल घौरा	(छतरपुर)
११) ,, ,, दयाचन्द्र शास्त्री	सेंधपा
११) ,, ,, क्षेमकरजी, न्यायतीर्थ, गृहपति दि० जैन बोर्डिंग	बड़वानी

५) „ „ रतनचन्द्र, शास्त्री, कासिल — अयोध्या
५) „ „ दयाचन्द्र, शास्त्री, प्रधानाध्यापक वर्णी विद्यालय — सागर

स्वर्ण-जयन्ती-कोष

विद्यालयकी आर्थिक दृढताके लिए स्वर्णजयन्ती कोषकी स्थापना की गयी है। इसमे अबतक निम्न सहयोग प्राप्त हुआ है —

७१००)	श्री साहु शीतलप्रसादजी	कलकत्ता
१५०१)	„ सेठ रामजीवनदासजी सरावगी एण्ड सन्स	„
१००१)	„ सोहनलालजी (फर्म मुन्नालाल द्वारकादासजी)	„
१०००)	„ साहु राजेन्द्रप्रसादजी	„
५०१)	„ सेठ सेडमल दयाचन्द्रजी	„
५०१)	„ चन्द्रकुमारजी	„
३०१)	„ श्रीमन्दिरदासजी	„
३०१)	„ सीताराम पन्नालाल	„
२५१)	„ सेठ कन्हैयालाल वृद्धिचन्द्रजी	„
२५१)	„ रामवल्लभ रामेश्वरजी	„
२५१)	„ जुहारमल चम्पालालजी	„
२५१)	„ नथमल सेठी एण्ड कम्पनी	„
२५१)	„ केशरीचन्द्र निहालचन्द्रजी	„
२५१)	„ बाबू नेमीचन्द्रजी	„
२५१)	„ जुगमन्दिरदासजी	„
२५१)	„ वंशीधर जुगलकिशोरजी	„
२५१)	„ लालजी अग्रवाल	„
२५१)	„ बी० आर० सी० जैन	„
२५१)	„ रतनलाल झाझरी	„
२५१)	„ बलदेवदास शिवदवजी	„
२५१)	„ सि० मूलचन्द दुलीचन्द परवार	„
२५१)	„ चन्द्रालय	„
२५०)	„ महावीर प्रसादजी बिडला	„
१०१)	„ बाबू लक्ष्मीचन्द्रजी	„
१०१)	„ सुरेन्द्रनाथ नरेन्द्रनाथजी	

१०१)	,, शीतलप्रसादजी	कलकत्ता
१०१)	श्रीमती मातेश्वरी निर्मलकुमारजी	,,
१०१)	,, सुन्दरबाईजी	,,
१०१)	श्री शान्तिप्रकाशजी	,,
१०१)	,, शिखरचन्द्रजी सरावगी	,,
१०१)	श्री गोपीचन्द्र पूरनचन्द्रजी	,,
१०१)	,, सेठ दुलीचन्द्र झूमरमलजी	
१०१)	,, चौधरी मोहनलालजी	,,
१०१)	,, घनश्यामदास बनारसीलालजी	,,
१०१)	श्री किशनदास नेमीचन्द्रजी	,,
१०१)	श्री सालीराम सरावगी	,,
१०१)	,, हीरालालजी	,,
१०१)	,, सेठ फूलचन्द्र रतनलालजी	,,
१०१)	,, ,, शिखरचन्द्रजी (फर्म रतनलाल सोहनलाल)	,,
१०१)	,, ,, जमानीराम रामनरायनजी	,,
१०१)	,, ,, बुधमल हरषचन्द्रजी	,,
१०१)	,, ,, कस्तूरचन्द्र आनन्दीलाल	,,
१०१)	,, ,, पारसमल नेमीचन्द्र	,,
१०१)	,, शान्तीलाल एण्ड कम्पनी	,,
१०१)	,, रतनलालजी	,,
१०१)	,, राजेन्द्रकुमारजी प्रिंटिंग मास्टर	,,
५१)	,, रामचन्द्र रामसिंह पाण्ड्या	,,
५१)	,, गजानन गोबरधनजी	,,
१०१)	,, महेशचन्द्रजी	अलीगढ
१०००)	श्री रघुबर दयालजी, एम० ए०, एल एल० बी०	करोलबाग (दिल्ली)
१०१)	,, राजकृष्णजी	,,
१०१)	,, मनोहरलाल नन्हेलालजी	,,
१०१)	,, हरिश्चन्द्रजी (फर्म निहालचन्द्र फकीरचन्द्र)	,,
१०१)	,, नेमीचन्द्रजी आडीटर्स	दिल्ली
५००)	श्री छेदीलाल गणेशदासजी	बनारस
२५१)	,, दाऊजी	,,
२५१)	,, फतेहचन्द्रजी जौहरी	,,
२५१)	,, हर्षचन्द्रजी वकील	,,

१०१)	,, मक्सूदनदासजी जौहरी	बनारस
१०१)	,, लालचन्द्रजी जौहरी	,,
१०१)	,, गुलाबचन्द्रजी	,,
१०१)	,, प्रयागदासजी	,,
५१)	,, मधुसूदनदासजी घडीवाले	,,
२५)	,, छेदीलालजी मारवाडी	,,
२५१)	श्री देवकुमारजी	कानपुर
१०१)	,, कपूरचन्द्र धूपचन्द्रजी	,,
१०१)	,, मेसर्स रामदेवजी जैन	,,
१०१)	,, कल्यानदासजी (फर्म नन्दूमल ज्योतिप्रसाद)	,,
१०१)	,, इन्द्रजीतजी वकील	,,
२५१)	श्रीमन्त सेठ राजेन्द्रकुमार—(फर्म सिताबराय लक्ष्मीचन्द्र)	भेलसा
२५१)	श्री बाबू जगतप्रसादजी जैन	डालमियानगर
१०१)	रावराजा सर सेठ सरूपचन्द्र हुकुमचन्द्रजी नाइट	इन्दौर
१०१)	श्रीमती धर्मपत्नी लाला मेहरचन्द्रजी	किरनपुर (बिजनौर)
१०१)	श्री सेठ जगन्नाथजी पाण्ड्या	काडरमा
१०१)	,, सेठ अमरचन्द्रजी जैन	जसवन्तनगर
१०१)	,, लाला उजागरमल वीरेन्द्रकुमार	मेरठ
५)	श्री सेठ रामप्रसाद	आलीपुरा (छतरपुर)
५)	श्री सेठ भागचन्द्र	,,
५)	श्री सेठ घासीराम	,,

डॉक्टर सतीशचन्द्रका भाषण ❋

सज्जनो, मुझे इस शुभ अवसरपर सभापतिका आसन देकर आप लोगोंने जो मेरा सम्मान किया है उसका हार्दिक धन्यवाद दिये बिना मैं आजकी मीटिंगकी कार्रवाईको शुरू नहीं कर सकता। औरोंकी

❋ श्रीयुत मान्यवर महामहोपाध्याय डाक्टर सतीशचन्द्र विद्याभूषण, एम० ए०, पी-एच० डी०, एफ० आई० आर० एस०, सिद्धान्त महोदधि, २७ दिसम्बर सन् १९१३ को स्याद्वाद महाविद्यालय, काशीके महोत्सवपर जो वक्तृता अंग्रेजीमें दी थी यह उसका हिन्दी अनुवाद है।

महामहोपाध्याय डा० सतीशचन्द्र विद्याभूषण एम० ए०, पी एच० डी० संस्कृत कालेज कलकत्ताके प्रिंसिपल थे। आप अच्छे साहित्यिक, दार्शनिक एवं इतिहासज्ञ थे। आपने जैन साहित्यकी भी बहुमूल्य सेवा की थी। आपकी उदारतासे ही कलकत्ता परीक्षाके पाठ्य-क्रममें जैन-न्याय और व्याकरण-का पाठ्यक्रम प्रविष्ट हुआ था। इसीलिये वीर नि० सं० २४४० के श्री स्याद्वाद महाविद्यालयके उत्सवमें भारत जैन महामण्डलने आपको सिद्धान्त-महोदधिकी उपाधि दी थी।

वर्तमान सेवक —

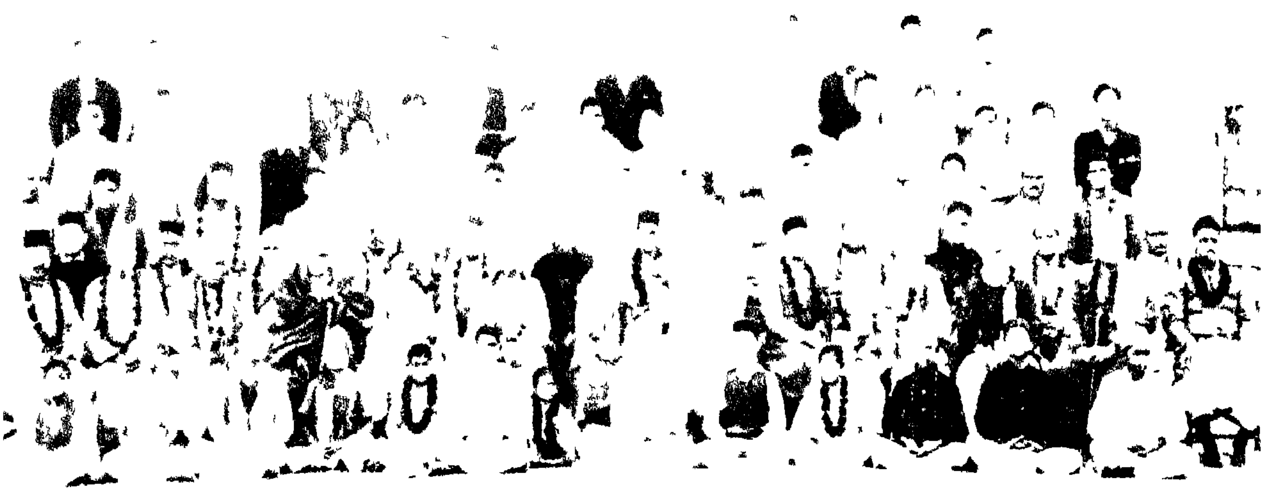


बैठे—सर्वश्री फतेहचन्द्र जौहरी, रतनचन्द्र जौहरी, हर्षचन्द्र वकील, दाऊजी जैन, सुमतिलाल जैन, खुशालचन्द्र गोगावाला, ऋषभदास जैन, राजबहादुर जैन, विमलदास कौंदिया

खड़े—सर्वश्री-प्यारेलाल, निर्मलचन्द्र वकील, मोजीलाल जैन, ला० मामचन्द जैन बा० गणेशदास जैन



स्या० विद्यालय सम्वत १९३३—



— सम्वत १९३५

अपेक्षा मेरा दृढ़ विश्वास है कि आप अनुभवी विद्वानो और जीवनपर्यंत जनधर्मका अभ्यास करनेवालोके इस दीप्तिमान् समूहमेंसे मुझसे कोई अच्छा और योग्य सभापति चुन सकते थे। परन्तु चूंकि आपने प्रसन्न होकर मुझे यह असाधारण मान दिया है इसलिए मुझे आपकी आज्ञाका पालन करना चाहिए और मैं एक ओर आपके अनुग्रह और दूसरी ओर आपकी सहकारितापर भरोसा रखते हुए आसन ग्रहण करता हूँ।

जैनधर्मपर कोई लम्बा-चौड़ा विवेचन करनेका न यह समय है और न यह स्थान। साथ ही मैं आपको यह भी विश्वास दिलाता हूँ कि मैं इस प्रसिद्ध जैन समाजको उसके ही मत और सिद्धान्तकी कोई बात सिखलानेका साहस नही करता हूँ। ऐसा करना, सज्जनो, उलटे बाँस बरेली ले जानेके समान होगा। परन्तु एक ऐसे व्यक्तिके मुखसे जो यद्यपि सम्प्रदायसे जैन नही है तथापि जैनधमका अभ्यासी रह चुका है, एक दो शब्दोका निकलना कुछ अनुचित भी न होगा।

मालूम होता है कि ईसा मसीहसे लगभग छ सौ वर्ष पहले इस सारे भूमण्डलपर मानसिक जागृति और कर्तव्यपरायणता उत्पन्न हुई थी। उस समय एक नयी परिपाटीका जन्म होना पाया जाता है, पूर्वीय और पश्चिमीय दोनो ही देशोमे एक नया युग प्रवर्तित हुआ था।

योरपमे पैथेगोरस नामके प्रसिद्ध यूनानी फिलॉसफरने समाजको एकताका सिद्धान्त सिखलाया। एशियामे, चीनके कनफ्यूशस और ईरानके जोरोस्टरने इस जागृतिमे हिस्सा लिया। प्रथमने अपनी उन शिक्षाओके द्वारा जिन्हे 'गोल्डन रूल' (Golden rule) कहते है और दूसरेने अपने उस सिद्धान्तके द्वारा जो आरमुज्ड (Armujd) और अहिरिमन (Ahriman) अर्थात् प्रकाश और अन्धकारकी शक्तियोके विसंवादके संबंधमे है यह कार्य किया। हिन्दुस्तानमें महावीरने, जिन्हे वर्धमान भी कहते है और जो इस वर्तमान कालमे जैनियोके अन्तिम तीर्थंकर हुए है अपने आत्म-संयमके सिद्धान्तको प्रकाशित किया और बौद्धधर्मके प्रवर्तक बुद्धदेवने अंधकार और दुःखमे पड़े हुए जगत्को ज्ञानादीपनके संदेशसे उद्घोषित किया।

कुछ कालतक महावीर और बुद्धके सिद्धान्त और धर्म एक दूसरेके बराबर बराबर (समानान्तर रेखाओंमे) चलते रहे। यह भले प्रकार निर्धारित किया जा सकता है कि महावीरका साक्षात् शिष्य और उनकी शिक्षाओको संग्रह करनेवाला इन्द्रभूति गौतम, बुद्धधर्मके प्रसिद्ध संस्थापक बुद्ध गौतम और न्यायसूत्रके कर्ता ब्राह्मण अक्षपाद गौतम समकालीन थे। हम देखते है कि बौद्धोके 'त्रिपिटक' जैसे धर्मग्रथोमे जैनधर्मके सिद्धान्तोका उल्लेख मिलता है और जैनियोके धर्मग्रथोमे, जिन्हे 'सिद्धान्त' कहते हैं, बौद्धोके सिद्धान्तोका विवेचन (गुण-दोष-विचार) पाया जाता है।

सर्वसाधारणतक पहुँचने तथा अपने उच्च सिद्धान्तोका मनुष्य समूहमे प्रसार करनेके लिए इन दोनो महान् शिक्षकोने अपनी शिक्षाके द्वारस्वरूप, उस समयकी दो अत्यन्त लोकप्रिय और प्रचलित भाषाओको पसद किया था। महावीरने प्राकृत भाषाको और बुद्धने पाली भाषाको। इस प्रतिवादके विषयमे कि पाली और प्राकृत भाषाएँ इतनी प्राचीन नही हो सकती है कि उनका अस्तित्व ईस्वी सन्से ६०० वर्ष पहले माना जाय, इतना कहा जा सकता है कि ये भाषाएँ या स्पष्टतया इनके वे विशेष रूप

(बोलचालके) जिनमे महावीर और बुद्धने शिक्षा दी, उस प्राकृत और पाली ग्रथोकी भाषासे जो हमतक पहुँची है जरूर ही बहुत भिन्न थे। और यह बात इस मामलेमे आसानीके साथ स्पष्ट की जा सकती है कि उनकी शिक्षाकी भाषाएँ जो हम तक लिखित रूपमे नही किन्तु मौखिक रूपमे पहुँची है, दोनों भाषाओके साधारण परिवर्तनोके साथ-साथ परिवर्तित होती रही है।

ईसाकी पहली शतीमे बौद्धधर्म दो शाखाओमे विभक्त हो गया, जिनको 'महायान' और 'हीनयान' अर्थात् बडा वाहन और छोटा वाहन कहते है। जैनधर्मके भी दो बडे टुकडे हो गये यथा 'दिगम्बर' जिनका विश्वास था कि आकाश वस्त्र होनेपर ही मुक्ति होती है और 'श्वेताम्बर' सफेद वस्त्र सहित मुक्ति प्राप्त होती है।

जैन साधु जो सर्व प्रकारके बन्धनोसे मुक्त होनेके अभिप्रायसे दीक्षित होता है, अपने लिए सर्व प्रकारके विषय-सुखोको अस्वीकार करता हुआ सिर्फ इतना भोजन जो जीवन धारण करनेके लिए काफी हो, जिसे किसी व्यक्तिने खास उसके लिए न बनाया हो और जो धार्मिक भक्तिके साथ श्रावको या गृहस्थो द्वारा दिया जाय, ग्रहण करता हुआ लौकिक जन तथा स्त्री ससर्गसे अलग रहकर एक प्रशसनीय जीवन व्यतीत करनेके द्वारा पूर्ण रीतिसे व्रत नियम और इन्द्रिय-सयमका पालन करता हुआ जगत्के सम्मुख आत्म-सयमका एक बडा ही उत्तम आदर्श प्रस्तुत करता है।

यद्यपि इन दोनो धर्मोने ब्राह्मणोके जाति-भेद या अन्य विधि विधानोके साथ कोई बडी भारी लडाई नही लडी, तथापि इनका उद्देश्य ऐसे आदर्श पुरुष उत्पन्न करना था जो जैन शास्त्रोमे 'यति' या 'साधु', और बौद्ध शास्त्रोमे 'भिक्षु' कहलाते है। यह आदर्श पुरुष समस्त ही श्रेष्ठ और उत्तम गुणोकी मूर्तिरूपसे देखा जा सकता है क्योकि उसका शरीर उसके वशमे है, वचनपर उसने अधिकार जमा लिया है और मनको भले प्रकार अपने अधीन कर लिया है। वह जगत्को जीतनेवाला है क्योकि उसने अपने आपको जीत लिया है। वह अपना सारा दिन अध्ययन और शिक्षणमे, सासारिक विषय-वासनाओके समुद्रमे रोते खाते और बहते हुए मनुष्योको सुख-शान्तिकी दृढ भूमिपर लानेके द्वारा उनका उद्धार करनेमे और भटकते हुए ससारी मुसाफिरोको मोक्ष-मार्ग दिखलानेमे व्यतीत करता है। यो तो ऐसे मनुष्य प्रतिदिन ही शास्त्रस्वाध्याय और ध्यानसे अपने हृदयको पवित्र करते है, परन्तु महीनेके खास दिनोमे वे परस्पर अपने पापोकी आलोचना करनेके लिए एकत्र होते है जो उनके धर्मका एक मुख्य चिह्न है।

यह आदर्श पुरुषकी बात है। परन्तु एक गृहस्थका जीवन भी जो जैनत्वको लिये हुए है इतना अधिक निर्दोष है कि हिन्दुस्तानको उसका अभिमान होना चाहिए। गृहस्थके लिए 'अहिंसा'को अपने जीवनका आदर्श (Motto) बनाना होता है। सिर्फ जीवधारियोको उनके मासके लिए वध करनेका ही उसके त्याग नही होता बल्कि उसका यह कर्तव्य है कि वह किसी छोटे जन्तुको भी किसी प्रकारका कोई नुकसान न पहुँचावे और उसे अपना भोजन बिलकुल निरामिष, सर्व प्रकारके मासाहारसे रहित, रखना होता है। सज्जनो, मेरा यह अभिप्राय नही है कि मै उसके भोजन और जीवन रीतियोके सबधमे बहुत से उत्तमोत्तम नियमोका विस्तारके साथ वर्णन करूँ, मै इतना ही कहना काफी समझता हूँ कि वे खानेपीनेके सबधमे सातिशय सयमशील है और उनका भोजन बडी ही सूक्ष्म दृष्टिसे शुद्ध तथा

असाधारण रीतिसे सादा होता है। ये भोले-भाले और किसीको हानि न पहुँचानेवाले जैनी, यद्यपि पन्द्रह लाखसे अधिक नही हैं, तथापि बहुत-सी बातोंमे प्रत्येक मानव-जातिके एक भूषण हैं, चाहे वह कैसी ही सभ्य क्यों न हो।

जैनियोके साहित्यमें एक विशेषता है। यूनानियोको छोडकर, जिन्होने अपने धार्मिक और लौकिक साहित्यको प्रारभसे ही एक दूसरेसे अलग रक्खा है, अन्य समस्त देशोका वही आदिम साहित्य है जो कि उनका धार्मिक साहित्य है। ब्राह्मणोके वेद, ईसाइयोकी बाइबिल (Old Testament) और बौद्धोके 'त्रिपिटक' की यही हालत है। जैन साहित्य प्रारभकालमे केवल धार्मिक प्रकृतिको लिये हुए था, परन्तु समयके हेरफेरसे उसने न सिर्फ धार्मिक विभागमें किन्तु दूसरे विभागोमे भी आश्चर्य-जनक उन्नति प्राप्त की। न्याय और अध्यात्मविद्याके विभागोमे इस साहित्यने बडे ही ऊँचे विकास और क्रमको धारण किया। ईसाकी पहली शताब्दिमे प्रसिद्ध होनेवाले उमास्वामिके जोडके अध्यात्मविद्याविशारद या छठी शताब्दिके सिद्धसेनदिवाकर और आठवी शताब्दिके अकलकदेवकी बराबरीके नैयायिक इस भारतभूमिपर अधिक नही हुए हैं। सिद्धसेनदिवाकरके न्यायावतार नामक ग्रथमे कुल न्यायविद्या केवल ३२ श्लोकोके भीतर भरी हुई है। न्यायदर्शन, जिसे ब्राह्मण ऋषि गौतमने चलाया है, न्याय अध्यात्मविद्याके रूपमे असभव हो जाता यदि जैनी और बौद्ध अनुमान चौथी शताब्दिसे न्यायका यथार्थ और सत्याकृतिसे अध्ययन न करते। जिस समय मैं जैनियोके न्यायावतार', 'परीक्षामुख' और 'न्यायदीपिका' आदि कुछ न्याय-ग्रथोका सम्पादन और अनुवाद कर रहा था उस समय जैनियोकी विचारपद्धतिकी यथार्थता, सूक्ष्मता, सुनिश्चितता और सक्षिप्तताको देखकर मुझे आश्चर्य हुआ था और मैंने धन्यवादके साथ इस बातको नोट किया है कि किस प्रकारसे प्राचीन न्यायपद्धतिने जैन नैयायिको द्वारा क्रमश उन्नतिलाभ कर वर्तमान रूप धारण किया है। इन जैन नैयायिकोमेसे बहुतोने न्यायपर टीका-ग्रथोकी भी रचना की है, और मध्ययुगमे न्यायपद्धतिपर यह एक बडा ही बहुमूल्य काम हुआ है, जो 'मध्यमकालीन न्यायदर्शन' के नामसे प्रसिद्ध है, वह सब केवल जैन और बौद्ध नैयायिकोका कर्त्तव्य है। और ब्राह्मणोके न्यायकी आधुनिक पद्धति जिसे 'नव्य न्याय" कहते है और जिसे गणेश उपाध्याय ने ईसाकी १४वी शताब्दिमे जारी किया है, जैन और बौद्धोके इस मध्यमकालीन न्यायकी तलछटसे उत्पन्न हुई है। व्याकरण और कोष-रचना-विभागमे शाकटायन, पद्मनंदि और हेमचन्द्रादिके ग्रथ अपनी उपयोगिता और विद्वत्तापूर्ण सक्षिप्ततामे अद्वितीय हैं। छदशास्त्रकी उन्नतिमे भी इनका स्थान बहुत ऊँचा है। प्राकृत भाषा अपने सम्पूर्ण मधुमय सौन्दर्यको लिये हुए जैनियोकी रचनामे ही प्रकट की गयी है, और यह बिलकुल सत्य है कि ब्राह्मण नाटकोमे जो प्राकृत भाषाका व्यवहार किया गया है उसके मूलकारण जैनी ही हैं जिन्होने सबसे पहले अपने शास्त्रोमे इस भाषाका प्रयोग किया है। और ऐतिहासिक ससारमें तो जैन साहित्य शायद जगत्के लिए सबसे अधिक कामकी वस्तु है। यह इतिहास लेखको और पुरातत्त्वविशारदोके लिए अनुसन्धानकी विपुल सामग्री प्रदान करनेवाला है, जैसी कि इसने पहले भी प्रदान की है और अब भी प्रदान कर रहा है। जैनियोके बहुत-से प्रामाणिक ऐतिहासिक ग्रथ भी हैं जैसे 'कुमारपालचरित।' ये ग्रथ और वे उपाख्यान, जिन्हे भिन्न भिन्न सम्प्रदाय या 'गच्छों' के जैनियोने तत्तत् समयोके 'धर्मके आसन' या 'पट्ट' पर विराजमान अनेक तीर्थकर और शिक्षक

और उनकी समकालीन घटनाओके बाबत सुरक्षित रक्खा है, भारतीय इतिहासकी पुरानी बातोंको निश्चित करनेके लिए उसी प्रकारसे बहुत उपयोगी सिद्ध हुए है, जिस प्रकारसे यूनानका पुराना इतिहास तैयार करनेमे वहाँके मीनार कार्यकारी हुए थे। और भी अधिक, इन समयोकी जाँच शिला आदिपर उत्कीर्ण लेखोकी साक्षीमे हो चुकी है और ये उनके अनुरूप पाये गये है जैसा कि मथुरासे मिला हुआ ईसाकी पहली शताब्दिका जैन शिलालेख और रुद्रदामन्का जूनागढ़ वाला शिलालेख, जो दूसरी शताब्दि का है, इत्यादि

यदि भारत देश ससार भरमे अपनी आध्यात्मिक और दार्शनिक उन्नतिके लिए अद्वितीय है तो इससे किसीको भी इनकार न होगा कि इसमे जैनियोको, ब्राह्मणो और बौद्धोकी अपेक्षा कुछ कम गौरव-की प्राप्ति नही है।

('जैनहितैषी' वर्ष १० अक ४ ५, २४६–२५३)

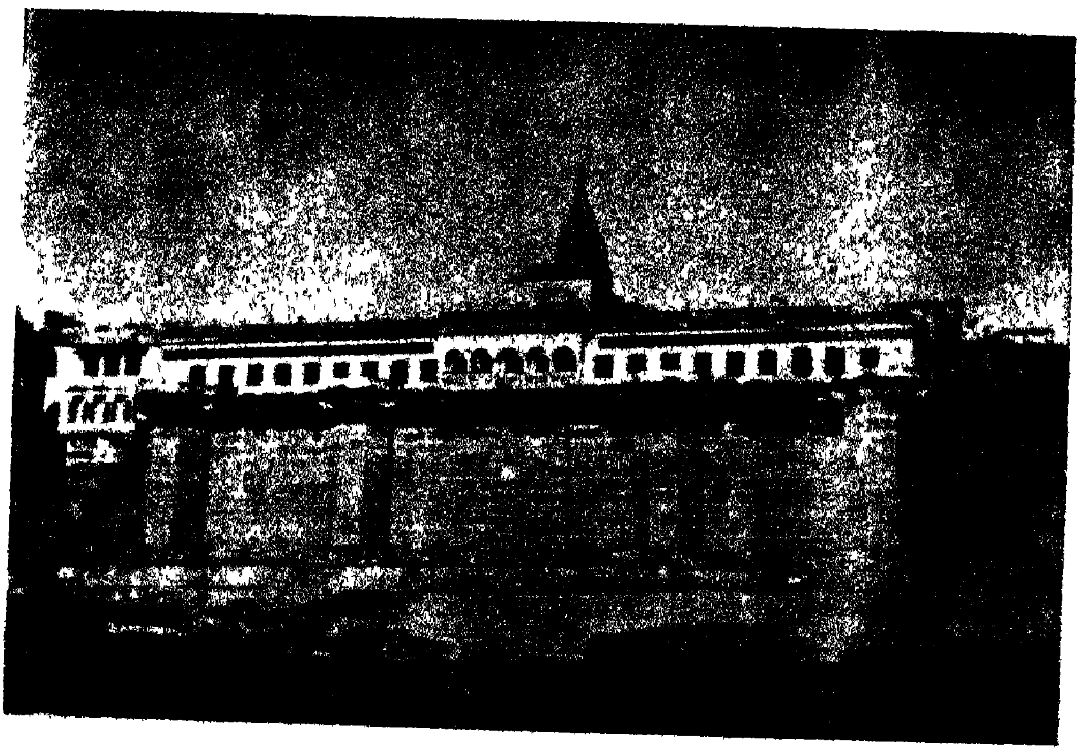
स सत्य विद्या तपसां प्रणायकः समग्रधीरुग्रकुलाम्बरांशुमान् ।
मया सदा पार्श्वजिनः प्रणम्यते विलीनमिथ्यापथदृष्टिविभ्रमः ।।

(स्वामी समन्तभद्राचार्य चरणाः)

स्याद्वाद महाविद्यालय काशी

के

पचास वर्ष



श्री स्याद्वाद महाविद्यालयके ५० वर्ष

स्वर्ण-जयन्ती सस्मरण से हमे सक्षेपमे इस विद्यालयके सस्थापक, पोषक तथा प्रगतिका परिचय मिलता है । तथापि जिन लोगोसे यह विद्यालय बना है उनका इस अवसरपर समुदित स्मरण किये विना 'गुणिषु प्रमोदम्' का पालन न होगा । फलत निम्न तालिकाएँ उपस्थित करते हैं—

संस्थापक—

१ पूज्य श्री १०५ क्षु० गणेशप्रसादजी वर्णी (सरक्षक)
२ पूज्य स्व० बाबा भागीरथजी वर्णी (सरक्षक)
३ माननीय स्व० प० पन्नालालजी बाकलीवाल
४ माननीय ,, सेठ माणिकचन्दजी जे० पी०, मुम्बई
५ ,, ,, बाबू देवकुमारजी रईश, जमीदार, आरा
६ ,, ,, बाबू छेदीलालजी रईश, बनारस
७ ,, ,, बाबू बनारसीदासजी जौहरी बनारस

सरक्षक—

दानवीर साहु शान्तिप्रसादजी, डालमियानगर ।

सभापति—

१ दानवीर सेठ माणिकचन्दजी जे० पी० बम्बई	१९०५ से १९१४ तक
२ दानवीर सर सेठ, रावराजा, आदि हुकुमचन्दजी, इन्दौर	१९१५—

उपसभापति—

१ स्व० बाबू माणिकचन्दजी रईस (कोषाध्यक्ष), बनारस	१९०५–१९१४
२ स्व० सेठ बनारसीदासजी मारवाडी, बनारस	१९२४–१९२७
३ श्री बाबू गणेशदासजी रईस, बनारस	१९२७–१९३१
४ श्री बाबू निर्मलकुमारजी रईस, आरा	१९३०–१९४२
५ श्री बाबू दाऊजी रईस, (हि० नि०), बनारस	१९४२ से अब तक

मत्री—

१ स्व० बाबू देवकुमारजी, आरा	१९०५ से १९०८ तक
२ ,, बाबू जैनेन्द्रकिशोरजी, आरा	१९०८ से १९०९ तक
३ ,, बा० लक्ष्मीचन्दजी, काशी	१९०९ से १९११ तक
४ ,, कुमार देवेन्द्रप्रसादजी, आरा	१९११ से १९१६ तक
५ ,, बा० विश्वम्भरसहायजी, जौनपुर	१९१७
६ श्री बा० सुमतिलालजी, इलाहाबाद	१९१८—

उपमंत्री—

१	स्व० बाबू लक्ष्मीचन्दजी, बनारस	१९०५–१९३२
२	श्री बाबू राजेन्द्रकुमारजी, बनारस	१९३३–१९३९
३	श्री बाबू प्यारेलालजी, बनारस	१९४३–१९५२
४	श्री प्रो० विमलदासजी चावली (आगरा)	१९५३—
५	श्री प्रो० खुशालचन्द्रजी गोरावाला मडावरा (झासी)	१९५४—

अधिष्ठाता—

१	स्व० बाबू नन्दकिशोरजी, दिल्ली (हिसाब निरीक्षक)	१९१३
२	,, ब्र० शीतलप्रसादजी	१९१४ से १९२७ तक
३	,, पूज्य श्री न्यायाचार्य प. गणेशप्रसादजी वर्णी	१९२८ से १९२९ तक
४	,, श्री बाबू हर्षचन्दजी वकील, काशी	१९३०—

उपअधिष्ठाता—

१	स्व० ब्र० ज्ञानानन्दजी, मेरठ	१९०९–१९२२
२	श्री सेठ छेदीलालजी, काशी	१९०५–१९०९
३	श्री बाबू रतनचन्दजी जौहरी, काशी	१९५१—

कोषाध्यक्ष—

१	स्व० बाबू छेदीलालजी काशी	१९०५ से १९१५ तक
२	,, ,, बनारसीदासजी जौहरी, काशी	१९१५ से १९२६ तक
३	,, ,, नानकचन्दजी, काशी	१९२६ से १९४० तक
४	,, ,, लक्ष्मीचन्दजी, काशी	१९४० से १९४९ तक
५	श्री ,, ऋषभदासजी, काशी	१९४९ से अब तक

हिसाब-निरीक्षक—

१	स्व० किशोरीलालजी इन्जीनियर, बनारस	१९०५–१९२७
२	श्री मधुसूदनदासजी जौहरी, बनारस	१९२७–१९४४
३	श्री बाबू राजबहादुरजी जैन, बनारस	१९४५—

वार्षिक अधिवेशनों के सभापति

अधिवेशन-वर्ष (१९०७) प० रामभाऊजी, नागपुर

अधिवेशन (१९१३) डा० हर्मन याकोबी (जर्मनी), डा० सतीशचन्द्र विद्याभूषण कलकत्ता, मिस एनी बेसेंट

,, (१९१४) प्रो० डा० तुकाराम लड्डू संस्कृत प्रोफेसर क्वीन्स कालेज

,, (१९१६) कविसम्राट्, महामहोपाध्याय प० यादवेश्वर तर्करत्न (इस अधिवेशनमें राष्ट्रपिता गांधीजी भी सम्मिलित हुए थे)।

अधिवेशन–वर्ष (१९१७) इज० बाबू छेदीलालजी रईस, बनारस
अधिवेशन (१९१९) श्री रायसाहब नानकचन्दजी, काशी
„ (१९२०) प० आनन्दशंकर ध्रुव, प्रिंसिपल व प्रो वाइस चांसलर, हिन्दू विश्व विद्यालय,
„ (१९२२) रायबहादुर बाबू द्वारकाप्रसादजी, नहटौर
„ (१९२४) बाबू श्रीप्रकाशजी, काशी (वर्तमान राज्यपाल, मद्रास)
„ (१९२५) प्रोफेसर फणिभूषण अधिकारी, हि० वि० विद्यालय, काशी
„ (१९२६) प्रोफेसर गंगाप्रसाद मेहता, हि० वि० विद्यालय, काशी
„ (१९२७) प्रोफेसर बी० एल० आत्रेय, हि० वि० विद्यालय, काशी
„ (१९२९) आचार्य श्री नरेन्द्रदेवजी, काशी विद्यापीठ
„ (१९३०) प० इन्द्रदेवजी तिवारी रजिस्ट्रार हिन्दू विश्व विद्यालय, काशी
„ (१९३२) प० माणिकचन्द्रजी न्यायाचार्य, फिरोजाबाद
„ (१९३४) गोस्वामी प० दामोदरलालजी, काशी
„ (१९३५) भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी पंडिताचार्य, श्रवणबेलगोला
„ (१९३६) डा० मंगलदेव शास्त्री, रजिस्ट्रार क्वीन्स कालेज काशी
„ (१९३७) बाबू गोविन्दलालजी गया
„ (१९३९) माननीय श्री सम्पूर्णानन्दजी (मुख्यमंत्री उत्तर प्रदेश) काशी
„ (१९४३, १९५३) पूज्य श्री गणेशप्रसादजी वर्णी
„ (१९४९) दानवीर, ती० भ० शि०, जै० दि०, रावराजा राज्यभूषण, रायबहादुर, श्रीमन्त सर सेठ हुकुमचन्दजी, नाइट, इन्दौर

अध्यापक मण्डल

१–स्व० प० अम्बादासजी शास्त्री सन् १९०५ से १९२५ तक
२–„ गुलाबजी झा सन् १९०८
३–„ „ रामावतारजी, सन् १९०८
४–„ „ गोनौडजी झा सन् १९०८
५–श्री „ वंशीधरजी सन १९१० (प्रधान अध्यापक तथा सुपरिटेंडेंट
६–„ „ राजारामजी, सन् १९१०
७–„ „ गणेशदत्तजी, सन् १९११ आयुर्वेदाध्यापक अवैतनिक
८–स्व०„ हृषीकेशजी ज्योतिषाचार्य, सन् १९११ अवैतनिक
९–स्व० प० उमरावसिंहजी धर्माध्यापक तथा सुपरिटेंडेंट सन् १९११ से १९१७ तक
१०–श्री „ वेणीमाधवजी सन् १९११
११–„ „ केशवदेवजी सन् १९११
१२–„ बाबू जगमोहनजी झा सन् १९११ अंग्रेजी अध्यापक
१३–„ बाबू कमलकृष्णजी चक्रवर्ती अंग्रेजी अध्यापक सन् १९१३
१४–श्री प० रामावधिजी सन् १९१३
१५–„ प० ढुंढीराजजी शास्त्री सन् १९१३
१६–„ प० तुलसीरामजी जैन, वाणीभूषण सन् १९१४

१७—श्री प० घनश्यामदासजी जैन न्यायतीर्थ सन् १९१४

१८— ,, बा० शिवजीलालजी काला अंग्रेजी मास्टर १९१४

१९—श्री प० सीतारामजी शास्त्री साहित्याचार्य सन् १९१५

२०— ,, प० सुब्रह्मण्यम् जी शास्त्री, सन् १९१५

२१— ,, ठाकुरप्रसादजी अंग्रेजी अध्यापक सन् १९१५

२२— ,, प० माधवजी शास्त्री सन् १९१७

२३— ,, प० दरबारीलालजी न्यायतीर्थ धर्माध्यापक सन् १९१८

२४— , प० राजकुमारजी धर्माध्यापक सन् १९१९

२५— ,, प० मुकुन्दजी शास्त्री खिस्ते, १९२० से १९४० तक

२६— , प० चन्द्रशेखरजी, अंग्रेजी अध्यापक सन् १९२१

२७— , प० कैलाशचन्द्रजी शास्त्री धर्माध्यापक सन् १९२३ व सन् १९२८ से

२८— ,, बाबू सुनीलचन्द्रजी बी० ए० अगरेजी अध्यापक सन् १९२३

२९—श्री प० फूलचन्द्रजी शास्त्री सन् १९२४ से १९२७ तक

३०— ,, , प्रेमदासजी, आयुर्वेदाध्यापक सन् १९२४

३१—श्री गयाप्रसादजी अंग्रेजी अध्यापक सन् १९२४

३२—श्री बा० लक्ष्मीचन्द्रजी अंग्रेजी अध्यापक सन् १९२४

३३— ,, बाबू त्रिभुवननारायणजी ,, ,, सन् १९२४

३४— ,, प० प्रभाकरजी, व्या० अ० सन् १९२५

३५— ,, पं० सहदेवजी अ० सन् १९२६

३६— ,, प० सीतारामजी न्या० अ० सन् १९२८

३७— , प० अनन्तजी शास्त्री फडके व्या० अध्या० सन् १९२८

३८—श्री प० उमानन्दजी झा, व्या० तथा न्या० अध्या० सन् १९३०

३९— ,, प० महेन्द्रकुमारजी न्यायतीर्थ, शास्त्री, न्यायाध्यापक सन् १९३० से १९४७ तक

४०— ,, प० सदाशिवजी, व्या० अध्यापक सन् १९३०

४१— ,, प० राजारामजी, बी० ए०, शास्त्री अंग्रेजी अध्यापक सन् १९३३

४२— ,, प० आनन्दजी झा न्या० अध्या० सन् १९३४

४३—श्री ,, बा० राजनारायणजी बी० ए० अंग्रे० अध्या० सन् १९३४ से १९३८ तक

४४— ,, प० सर्वजितजी शास्त्री व्या० अध्या० सन् १९३५

४५— ,, प० गणेशजी झा शास्त्री व्या० अ० सन् १९३६

४६— ,, प० भूपनारायणजी झा व्या०, सा० सहायक अध्यापक सन् १९३७

४७— ,, प० रामसुरेशजी पाण्डेय बी ए, बी टी अंग्रे० अध्या० सन् १९३८

४८— , प० शारदाप्रसादजी पाण्डेय व्यायामशिक्षक सन् १९३८

४९— ,, प० रामनन्दनजी ज्यो० आचा० ज्योतिषाध्यापक सन् १९३९

५०— , प० रामलखणजी बी० ए० अंग्रेजी अध्या० सन् १९३९

५१— ,, प० तारादत्तजी पन्त साहित्याध्यापक सन् १९४०

५२— ,, प० दिवाकरजी व्या० आ० सहायक अध्यापक सन् १९४० से

५३— ,, मा० ब्रह्मासिहजी, बी० ए० अंग्रेजी मास्टर सन् १९४१

५४— ,, मा० विजयनारायणलालजी, एम० ए०, अंग्रेजी अध्यापक सन् १९४१

५५– श्री प० गङ्गाधरजी पराजुलीन्या० अध्या० सन् १९४७ से

५६– ,, प० भोलानाथजी पाण्डेय साहित्याध्यापक सन् १९४७ से

५७– ,, प० अमृतलालजी जैनदर्शन-साहित्याचार्य, साहित्याध्यापक सन् १९४८ से

५८– ,, प० उदयचन्द्रजी एम ए, सर्वदर्शनाचार्य जैन न्याय अध्यापक सन् १९४७

५९– ,, नन्दकिशोररायजी एम० ए० अंग्रेजी अध्या० सन् १९४७ से

गृहपति-गण

१–श्री बाबू जौहरीमलजी सन् १९०८
२– ,, ,, ऋषभदासजी, इलाहाबाद सन् १९०८
३– ,, ,, नन्दूरामजी, सागर सन् १९०९
४– ,, ,, राधारमणजी सन् १९१०
५– ,, प० माणिकचन्द्रजी सन् १९१७
६– ,, बाबू जवाहरलालजी सन् १९१८
७–श्री प० सुव्वय्याजी शास्त्री
८–श्री प० राजकुमारजी सन् १९२१
९–श्री बा० पन्नालालजी चौधरी सन् १९२२ से १९४९ तक
१०–श्री प० पद्मचन्दजी व्या०-वे०ती०, सन् १९४९ से

वर्तमान प्रबन्ध समिति

१	पूज्य श्री १०५ क्षु० गणेशप्रसादजी वर्णी	संरक्षक
२	दानवीर साहू श्री शान्तिप्रसादजी, कलकत्ता	,,
३	दानवीर, तीर्थभक्त, शिरोमणि, जैन दिवाकर, राज्यभूषण रईस उद्दौला राज्यरत्न, राज्य-भूषण, रावराजा, रायबहादुर श्रीमन्त सर सेठ हुकुमचन्दजी नाइट, इन्दौर	सभापति
४	श्री बाबू निर्मलकुमारजी, रईस, जमीदार आरा	उपसभापति
५	,, ,, दाऊजी, काशी	,,
६	,, ,, सुमतिलालजी, इलाहाबाद	मन्त्री
७	,, प्रोफेसर खुशालचन्द्रजी गोरावाला, काशी विद्यापीठ	उपमन्त्री
८	,, बाबू हर्षचन्द्रजी वकील, काशी	अधिष्ठाता
९	,, ,, रतनचन्दजी काशी	उपअधिष्ठाता
१०	,, ,, ऋषभदासजी, काशी	कोषाध्यक्ष
११	,, प्रोफेसर विमलदासजी, काशी विश्व विद्यालय	निरीक्षक
१२	,, बाबू राजाबहादुरजी, काशी	हिसाब निरीक्षक
१३	,, प० माणिकचन्द्रजी न्यायाचार्य, फिरोजाबाद	सदस्य
१४	,, प० वंशीधरजी न्यायालंकार, इंदौर	,,
१५	,, प० सुमेरुचंदजी दिवाकर, सिवनी	,,
१६	,, रायबहादुर सर सेठ भागचंदजी सोनी, अजमेर	,,
१७	मा० श्री अजितप्रसादजी (सहारनपुर) पुनर्वास मन्त्री, नई दिल्ली	,,
१८	श्री सेठ रतनचंद्रजी (माणिकचंद्र पानाचंद्र कम्पनी) बम्बई	,,

१९ श्री सेठ छोटेलालजी, एम० आर० ए० एस०, कलकत्ता — हिसाब निरीक्षक
२० ,, सेठ छेदीलालजी, काशी — सदस्य
२१ ,, रायबहादुर कुँवर राजकुमारसिंहजी, इन्दौर — ,,
२२ ,, श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्दजी, भेलसा — ,,
२३ ,, चक्रेश्वरकुमारजी रईस व जमीदार, आरा — ,,
२४ ,, बाबू सुबोधकुमारजी, आरा — ,,
२५ ,, साहू राजेन्द्रकुमारजी (भू० पू० डाइरेक्टर भारत बैंक) दिल्ली — सदस्य
२६ ,, सेठ छदामीलालजी, फिरोजाबाद — ,,
२७ ,, लाला राजकृष्णजी, दिल्ली — ,,
२८ ,, सेठ बधीचदजी गगवाल, जयपुर — ,,
२९ ,, बाबू कपूरचन्दजी रईस, कानपुर — ,,
३० ,, सेठ अमरचदजी पाडया, पलासवाडी (आसाम) — ,,
३१ ,, दानवीर सेठ गजराजजी गगवाल, कलकत्ता — ,,
३२ ,, सेठ धर्मचदजी सरावगी कलकत्ता — ,,
३३ ,, सेठ मिश्रीलालजी काला, कलकत्ता — ,,
३४ ,, नेमीचन्दजी वकील, सहारनपुर — ,,
३५ ,, सेठ जगन्नाथजी पाड्या, कोडरमा — ,,
३६ ,, रायबहादुर सेठ हरकचदजी, राँची — ,,
३७ ,, बाबू फतेहचदजी जौहरी, काशी — ,,
३८ ,, ,, सालिगरामजी, काशी — ,,
३९ ,, ,, मधुसूदनदासजी, काशी — ,,
४० ,, ,, गणेशप्रसादजी, काशी — ,,
४१ ,, ,, विमलचदजी, काशी — ,,

ट्रष्ट कमेटी

१ श्री बाबू निर्मलकुमारजी, आरा — सभापति
२ ,, बाबू सुमतिलालजी, इलाहाबाद — मन्त्री
३ ,, साहू शान्तिप्रसादजी, डालमियानगर — सदस्य
४ ,, बाबू छोटेलालजी, कलकत्ता — ,,
५ ,, बाबू ऋषभदासजी, काशी — कोषाध्यक्ष
६ ,, दाऊजी, काशी — सदस्य
७ ,, सेठ छेदीलालजी जैन, काशी — सदस्य

वार्षिक छात्रसंख्याकी तालिका

	आचार्य कक्षा	शास्त्री कक्षा	मध्यमा कक्षा	प्रवेशिका कक्षा	जोड
१२-६-१९०५	\	×	\	×	५
१-१-१९०६	\	\	×	\	१३
१-१-१९०७	\	२	९	६	१७
१-१-१९०८		२	११	८	२१
१-१-१९०९	२	०	१४	१४	३०
१-१-१९१०	१	०	१६	१२	२९
१-१-१९११	०	२	१७	१७	३६
१-१-१९१२	१	०	८	२२	३१
१-१-१९१३	१	१	६	१९	२७
१-८-१९१४	०	६	८	२१	३५
१-८-१९१५	०	५	७	३१	४३
१-८-१९१६	०	४	११	२७	४२
१-७-१९१७	०	६	११	१३	३०
१-४-१९१८	०	१०	४	२०	३४
१-७-१९१९	०	८	५	२५	३८
१-७-१९२०	०	१२	११	२४	४७
१-७-१९२१	०	८	२०	२०	४८
१-७-१९२२	०	८	२१	२१	५०
१-७-१९२३	०	५	२४	२२	५१
१-७-१९२४	०	८	३१	११	५०
१-७-१९२५	०	१७	३३	१७	६७
१-७-१९२६	०	१५	२४	७	४६
१-७-१९२७	०	२०	२३	१०	५३
१-७-१९२८	१	१८	१७	१०	४६
१-७-१९२९	२	२२	१९	६	४९
१-७-१९३०	२	२४	१६	७	४९
१-७-१९३१	१	९	२६	१०	४६
१-७-१९३२	१	१४	१०	२०	४५
१-७-१९३३	१	३४	९	४	४८
१-७-१९३४	०	१७	९	१२	३८

	आचार्य कक्षा	शास्त्रीय कक्षा	मध्यमा कक्षा	प्रवेशिका कक्षा	जोड़
१-७-१९३५	०	१४	१६	१९	४९
१-७-१९३६	१	१४	१७	१२	४४
१-७-१९३७	१	१३	२४	१५	५३
१-७-१९३८	१	१९	१७	१९	५६
१-७-१९३९	१	१७	२४	१०	५२
१-७-१९४०	२	१८	२०	१३	५३
१-७-१९४१	२	२०	२३	१३	५८
१-७-१९४२	४	२२	१८	९	५३
१-७-१९४३	४	१०	१५	११	४०
१-७-१९४४	४	२६	२२	१०	६२
१-७-१९४५	५	२३	११	३	४२
१-७-१९४६	५	२२	११	२	४०
१-७-१९४७	७	१६	८	२	३३
१-७-१९४८	७	१८	१९	०	४४
१-७-१९४९	४	८	२८	४	४४
१-७-१९५०	३	५	३८	०	४६
१-७-१९५१	४	८	३१	०	४३
१-७-१९५२	५	१४	२४	०	४३
१-७-१९५३	३	२१	१७	०	४१
१-७-१९५४	५	१६	२५	०	४६
१-७-१९५५	७	१९	२९	०	५५

स्नातक-मण्डल—

हमारी अंतरंग इच्छा थी कि स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर सब विद्याकुल भाइयों का नाम-गुण प्रकाशित करें। डेढ़ वर्ष प्रयत्न भी किया पर सफलता नहीं मिली जैसा कि निम्न अपूर्ण सूची से स्पष्ट है—

संख्या	नाम	स्थान	योग्यता
१	श्री क्षु० प० गणेशप्रसादजी वर्णी	मडावरा (झाँसी)	न्यायाचार्य
२	श्री पं० माणिकचन्द्रजी	चावली (आगरा)	”

सख्या	नाम	स्थान	योग्यता
३	श्री ब्र ज्ञानानन्दजी (उमरावसिंहजी)	सलावा (मेरठ)	न्यायतीर्थ
४	श्री प० खूबचन्द्रजी	बेरनी (एटा)	न्यायविशारद
५	श्री प बंशीधरजी	महरौनी (झाँसी)	न्यायविशारद
६	श्री प० मक्खनलालजी	चावली (आगरा)	न्यायविशारद
७	श्री प० देवकीनन्दनजी	बरुआसागर (झाँसी)	व्याकरणविशारद
८	,, प० बद्रीप्रसादजी	— —	न्याय-काव्यविशारद
९	,, प० तुलारामजी	आगरा (बेलनगज)	व्याकरणविशारद
१०	,, प० व्रजलालजी	मालथौन (सागर)	व्याकरण-काव्यविशारद
११	,, प० निद्धामलजी	रामपुर मनिहारान (सहारनपुर)	व्याकरण,न्याय विशारद
१२	,, ब्रह्मचारी नेमिसागरजी वर्णी	— —	न्यायविशारद
१३	,, प० कुमारैयाजी	कारकल	व्याकरण-काव्यविशारद
१४	स्व० प० गजाधरलालजी	जटौआ (आगरा)	न्यायशास्त्री
१५	श्री प० बुधसैनजी	खेरीघरौआ (आगरा)	न्यायविशारद
१६	,, प० गुलाबचन्द्रजी	— —	न्यायमध्यमा
१७	,, प० बासुदेवजी	समडोली (कोल्हापुर)	न्यायविशारद
१८	,, प० उदयलालजी	बडनगर (मालवा)	साहित्यशास्त्री
१९	,, प० शिखरचद्रजी	— —	साहित्यमध्यमा
२०	,, प० योगेश्वर झा	— —	विशारद
२१	,, प० श्रीलालजी	टेहू (आगरा)	व्या०-काव्यविशारद
२२	, प० काल्पाजी	शेडबाल (बेलगांव)	न्यायविशारद
२३	,, प० पन्नालालजी सोनी	किशनगढ (रायपुर)	व्याकरणविशारद
२४	,, प० फुलजारीलालजी	मकरौली (एटा)	न्याय-व्या-साहि विशारद
२५	,, प० खेमचद्रजी	मालथौन (सागर)	व्याकरणविशारद
२६	,, प० मुन्नालालजी	मालथौन (सागर)	काव्यतीर्थ
२७	,, प० क्षीरसागरजी	— —	न्यायविशारद
२८	,, प० भीषमचन्द्रजी	रिसालकावास (आगरा)	न्यायविशारद
२९	,, प० लोकमणिजी	हिनौतिया (जबलपुर)	व्याकरणविशारद
३०	,, प० भामण्डलजी	रिसालकावास (आगरा)	व्याकरणविशारद
३१	,, प० रेवतीलालजी	सिकन्दरा (आगरा)	व्या -न्याय विशारद
३२	,, प० जुगमन्दरदासजी	बुड्ढाखेडा (सहारनपुर)	विशारद
३३	,, प० सुब्बैयाजी	मूडबिद्री	न्यायविशारद
३४	, प० कन्हैयालालजी	खजराहा (झाँसी)	व्या०विशारद
३५	,, प० बाबूरामजी	आगरा	विशारद

संख्या	नाम	स्थान	योग्यता
३६	,, प० मक्खनलालजी	टेहू (आगरा)	विशारद
३७	,, प० तुलसीरामजी	ललितपुर (झाँसी)	काव्यतीर्थ
३८	बा० दयाचन्द्रजी गोयलीय	गढी अब्दुल्लाखां (मुजफ्फरन)	बी० ए०
३९	,, प० देवराजजी	मूडविद्री	विशारद
४०	,, प० पारसदासजी	चावली (आगरा)	काव्यतीर्थ
४१	,, प० शान्तिराजजी	कारकल	साहित्यविशारद
४२	,, प० शान्तिकुमारजी	राणौली (जयपुर)	मध्यमा
४३	,, प० शान्तिकुमारजी	— —	साहित्यतीर्थ
४४	,, प० नाथूरामजी	ललितपुर (झाँसी)	मध्यमा
४५	,, प० अभयचन्द्रजी	भानगढ (सागर)	काव्यतीर्थ, वैद्यशास्त्री
४६	,, प० शिवलालजी	साभर (जोधपुर)	मध्यमा
४७	,, प० घनश्यामदासजी	महरौनी (झाँसी)	न्यायतीर्थ
४८	श्री बा० दीपचन्द्रजी	सलावा (मेरठ)	बी० ए०
४९	,, प० गोविन्दरायजी	महरौनी (झाँसी)	काव्यतीर्थ, साहित्यशास्त्री
५०	,, ब्र० चिंतामणिजी	कारजा (वर्धा)	न्यायमध्यमा
५१	,, प० उजागरमलजी	सलावा (मेरठ)	न्यायमध्यमा
५२	,, प० दयानन्दजी	ईडर	साहि शास्त्री, न्या विशारद
५३	,, प० लीलाधरजी	ललितपुर (झाँसी)	विशारद, एफ० ए०
५४	,, प० बद्रीप्रसादजी	खेकडा (मेरठ)	व्याकरणमध्यमा
५५	,, प० केवलचन्द्रजी	सतना (वि प्र)	विशारद
५६	,, प० सुखचन्द्रजी	सतना (,,)	विशारद
५७	,, प० कुँवरलालजी	बिलराम (एटा)	न्यायतीर्थ
५८	,, प० जुगमन्दिरलालजी	बाराबकी	न्यायमध्यमा
५९	,, प० जिनेश्वरदासजी	रामपुर (मुरादाबाद)	विशारद
६०	,, प० मूलचन्द्रजी	ललितपुर (झाँसी)	मध्यमा
६१	,, प० शिवप्रसादजी	गौरझामर (सागर)	न्यायमध्यमा
६२	,, प० उदयचन्द्रजी	दमोह (सागर)	न्यायविशारद
६३	,, प० जुगमन्दिरदासजी	चावली (आगरा)	न्यायमध्यमा
६४	,, प० हरप्रसादजी	गढाकोटा (सागर)	वैद्यशास्त्री
६५	,, प० भूरामलजी	— —	विशारद
६६	,, बा० बालचन्दजी कोछल्ल	दमोह (सागर)	विशारद, मैट्रिक
६७.	,, प० जीवन्धरजी	शाहगढ (सागर)	न्यायतीर्थ, न्यायशास्त्री

संख्या	नाम	स्थान	योग्यता
६८	श्री प० रमानाथजी	जावद (मन्दसौर)	व्याकरणशास्त्री
६९	,, प० चैनसुखदासजी	भादवा (जयपुर)	न्यायतीर्थ, साहित्यशास्त्री
७०	,, प० राजकुमारजी	हाटपीपल्या (म० भा०)	न्यायशास्त्री
७१	,, प० दरबारीलालजी 'सत्यभक्त	दमोह (सागर)	न्यायतीर्थ
७२	,, प० पन्नालालजी	मालथौन (सागर)	काव्यतीर्थ
७३	,, म० सि० हरिश्चन्द्रजी	जबलपुर	विशारद
७४	,, प० श्रीलालजी	नगलासरूप (आगरा)	विशारद
७५	,, प० दयाचद्रजी	बांदरी (सागर)	न्यायातीर्थ
७६	,, प० सुरेन्द्रचद्रजी	नगलासरूप (आगरा)	विशारद
७७	,, प० जयकुमारजी	देववन्द (सहारनपुर)	विशारद मध्यमा
७८	,, प० फूलचन्द्रजी	बहादुरपुर (म० भा०)	विशारद, मध्यमा
७९	,, प० फूलचन्द्रजी	बुढवार (झांसी)	शास्त्री
८०	,, प० भुवनेन्द्रजी	बुढवार (झांसी)	व्या मध्यमा, विशारद
८१	,, प० कस्तूरचन्द्रजी	भादवा (जयपुर)	व्या सा० मध्यमा
८२	,, प० श्रीलालजी	नगलासरूप (आगरा)	विशारद
८३	,, प० शान्तिनाथजी	कोल्हापुर	विशारद
८४	,, प० गिरधारीलालजी	गौरझामर (सागर)	न्यायशास्त्री
८५	,, प० कैलाशचद्रजी	नहटोर (बिजनौर)	न्यायतीर्थ शास्त्री
८६	,, प० चन्द्रकुमारजी	मुबारकपुर (मुजफ्फरनगर)	न्या० काव्यतीर्थ, मैट्रिक
८७	,, प० जगन्मोहनलालजी	कटनी (जबलपुर)	न्यायशास्त्री
८८	,, प० सत्यधरजी	समाई (सागर)	वैद्यशास्त्री
८९	,, प० भागचद्रजी	भेलसा	काव्यतीर्थ
९०	,, प० नाथूरामजी	नागपुर	धमविशारद
९१	,, प० रामलालजी	मारई (झांसी)	धर्मविशारद
९२	,, प० नेमिराजजी	मडबिद्री	धमविशारद
९३	मा० शिवरामसिहजी	रोहतक	धर्मविशारद
९४	स्व० ब्र० शान्तिप्रियजी	उज्जैन	धर्मविशारद
९५	श्री प० क्षेमङ्करजी	मालथौन (सागर)	न्यायशास्त्री
९६	श्री बाबू हजारीलालजी	रिमालकावास (आगरा)	बी० ए०
९७	,, प० सुमतिचन्द्रजी	चावली (आगरा)	न्यायशास्त्री
९८	,, प० नाथूरामजी	मालथौन (सागर)	मध्यमा
९९	,, प० कछेदीलालजी	महरौनी (झांसी)	न्यायशास्त्री

संख्या	नाम	स्थान	योग्यता
१००	श्री पं० चन्द्रशेखरजी	नजीबाबाद (बिजनौर)	विशारद
१०१	,, प० नेमिराजजी	मुडार (कर्नाटक)	विशारद
१०२	,, प० रोशनलालजी	बिनौली (मेरठ)	विशारद
१०३	,, पं० सुखलालजी	बागीदौरा (बाँसवाडा)	विशारद
१०४	,, प० फूलचद्रजी	सकरौली (एटा)	विशारद
१०५	नायक रामलालजी	बीना (सागर)	विशारद
१०६.	बा० चतुरचन्द्रकुमारजी	आरा	विशारद
१०७	,, प० छोटेलालजी	उडेसर (मैनपुरी)	शास्त्री. न्यायतीर्थ
१०८	,, प० अर्हद्दासजी	पिडरई—मण्डला	विशारद
१०९	,, प० प्यारेलालजी	बोर्ग (एटा)	न्यायतीर्थ
११०	,, प० मेतीलालजी	मोहम्मदी (आगरा)	न्यायतीर्थ
१११	,, प० देवेन्द्रकुमारजी	इन्दौर	व्याकरणमध्यमा
११२	,, प० बशीधरजी	वेरनी (एटा)	विशारद
११३	,, प० पद्मचद्रजी	छपरा (सागर)	विशारद
११४	,, प० सुनहरीलालजी (सुरेशचद्रजी)	विलराम (एटा)	विशारद
११५	,, प० भवरलालजी	उदयपुर	विशारद
११६	,, प० चिरजीलालजी	अलीगढ	विशारद
११७	,, प० भगवानदासजी	ढाना (सागर)	विशारद
११८	श्री प० गुलाबचद्रजी	हाटपीपल्या (उज्जैन)	विशारद
११९	,, प० लोकमणिदासजी	सोरई (झाँसी)	विशारद
१२०	,, प० राजकुमारजी	सकरौली (एटा)	विशारद
१२१.	,, प० सुन्दरलालजी	ढाना (सागर)	प्रा० जैन न्यायतीर्थ
१२२	,, प० जीवन्धरजी	टेहू (आगरा)	विशारद
१२३	,, प० चतुर्भुजजी	बिल्ला (झाँसी)	न्यायविशारद
१२४	,, प० देवकुमारजी	कोटला (आगरा)	मध्यमा, विशारद
१२५	,, प० वृषभानुजी	भमनेह (झाँसी)	विशारद
१२६	,, प० सूर्यपालजी	सकरौली (एटा)	विशारद
१२७	,, प० विहारीलालजी	खुर्जा (बुलन्दशहर)	विशारद
१२८	,, प० सतीशचद्रजी	सकीट (एटा)	शास्त्री, न्यायतीर्थ
१२९	, पं० फूलचद्रजी	सिलावन (झाँसी)	शास्त्री
१३०	,, प० रतनलालजी काला	अमरावती	विशारद
१३१	,, पं० हीरालालजी	सादूमल (झाँसी)	शास्त्री

संख्या	नाम	स्थान	योग्यता
१३२	श्री पं० कन्हैयालालजी	खिमलासा (सागर)	विशारद
१३३	,, पं० जिनेश्वरदासजी	बिरधा (झाँसी)	न्यायतीर्थ
१३४	,, पं० मुन्नालालजी	ललितपुर (झाँसी)	विशारद
१३५	,, पं० आनन्दकुमारजी	बरवाह (गवालियर)	मध्यमा, विशारद
१३६	,, पं० अजितवीर्यजी	टेहू (आगरा)	विशारद
१३७	,, पं० माधवप्रसादजी	बाँदकपुर (दमोह)	शास्त्री
१३८	,, पं० मूलचन्द्रजी	मालथौन (सागर)	न्याय-साहित्यशास्त्री, न्यायतीर्थ
१३९	,, पं० आनन्दकुमारजी	खैराना (सागर)	न्याय-साहित्यशास्त्री, न्यायतीर्थ
१४०	,, पं० छोटेलालजी	गौरझामर (सागर)	धर्म-न्याय-साहित्यशास्त्री
१४१	,, पं० रामप्रसादजी	रिसालकावास (आगरा)	न्यायतीर्थ, शास्त्री
१४२	,, डा० जगदीशचन्द्रजी	बसेडा (मुजफ्फरनगर)	शास्त्री, एफ० ए०
१४३	,, पं० राजेन्द्रकुमारजी	कासगज (एटा)	न्यायतीर्थ
१४४	,, पं० कमलकुमारजी	खुरई (सागर)	विशारद
१४५	,, पं० कस्तूरचंद्रजी	पाटन (जबलपुर)	शास्त्री
१४६	,, पं० हरिश्चंद्रजी	केसली (सागर)	विशारद
१४७	,, पं० कमलकिशोरजी	जबलपुर	शास्त्री
१४८	,, पं० मथुरादासजी	बेरनी (एटा)	व्याकरणमध्यमा,न्यायतीर्थ,एफ ए
१४९	स्व० पं० मनोहरलालजी	बीना (सागर)	न्यायतीर्थ, शास्त्री
१५०	श्री० पं० गोपालदासजी	साढ़ूमल (झाँसी)	धर्मशास्त्री
१५१	,, पं० पदमचन्द्रजी	सोरई (झाँसी)	विशारद
१५२	,, पं० विष्णुकुमारजी	घुहारा (सागर)	विशारद
१५३	,, पं० मोहनलालजी	बगायठा (सागर)	शास्त्री
१५४	,, पं० वर्धमान हेगडे	मूडबिद्री	विशारद
१५५	,, पं० भगवानदासजी	साढ़ूमल (झाँसी)	न्यायतीर्थ, शास्त्री
१५६	,, पं० धर्मचंद्रजी	गढ़ाकोटा (सागर)	विशारद
१५७	,, पं० शिवचरणलालजी	देहली	शास्त्री, एफ० ए०
१५८	,, पं० रतनलालजी	गौरझामर (सागर)	शास्त्री
१५९	,, पं० विष्णुकुमारजी	बदनेरा (अमरावती)	विशारद, मध्यमा
१६०	,, पं० भूपेन्द्रकुमारजी	कुरवाई (गवालियर)	शास्त्री
१६१	,, पं० गुणभद्रजी	चौरई (छिंदवाडा)	शास्त्री
१६२	,, पं० कमलकुमारजी	बक्स्वाहा (झाँसी)	व्याकरणतीर्थ, शास्त्री
१६३	,, पं० बालचंद्रजी	सोरई (झाँसी)	न्यायतीर्थ, शास्त्री

संख्या	नाम	स्थान	योग्यता
१६४	श्री पं० गुलजारीलालजी	केसली (सागर)	शास्त्री
१६५	,, पं० पन्नालालजी	ललितपुर (झाँसी)	काव्यतीर्थ
१६६	,, ब्र० नेमिसागरजी	पुसद (यवतमाल)	विशारद
१६७	,, पं० किशोरीलालजी "मणि"	सागर	विशारद
१६८	,, पं० सनत्कुमारजी	पनागर (जबलपुर)	विशारद
१६९	,, पं० भागचन्द्रजी	तेंदूखेडा (नरसिंहपुर)	विशारद
१७०	,, पं० नेमिचन्द्रजी	चावली (आगरा)	विशारद
१७१	,, पं० वंशीधरजी	मोंरई (झाँसी)	व्याकरणाचार्य शास्त्री,
१७२	,, पं० बालकृष्णजी	बडगाँव (जबलपुर)	धर्मशास्त्री, न्यायमध्यमा
१७३	,, पं० प्रसन्नकुमारजी	पटना (झाँसी)	शास्त्री
१७४	,, पं० रतनकुमारजी	मडावरा (झाँसी)	शास्त्री
१७५	,, पं० गङ्गाप्रसादजी	गौरझामर (सागर)	शास्त्री
१७६	,, पं० रमेशचन्द्रजी	खरिकता (आगरा)	शास्त्री
१७७	,, पं० हरिसुखलालजी	चावली (आगरा)	विशारद
१७८	,, पं० मनीषचन्द्रजी	खुर्जा (बुलन्दशहर)	शास्त्री
१७९	,, पं० अमरमूर्तिजी	नीमकीसराय (एटा)	शास्त्री
१८०	,, पं० सुमेरचन्द्रजी दिवाकर	सिवनी (छिंदवाडा)	न्यायतीर्थ, शास्त्री, बी० ए०
१८१	,, पं० श्रुतसागरजी	शाहपुर (सागर)	शास्त्री
१८२	,, पं० ज्योतिस्वरूपजी	धनौरा (मेरठ)	प्रा न्यायतीर्थ, न्याय-धर्मशास्त्री
१८३	स्व० पं० प्रेमचन्द्रजी	तारादेई (दमोह)	व्याकरण,काव्यतीर्थ शास्त्री
१८४	श्री० पं० पद्मनाभजी	मूडबिद्री	जैनव्याकरणतीर्थ, धर्मशास्त्री
१८५	,, पं० पन्नालालजी	सागर	शास्त्री, काव्यतीर्थ
१८६	,, पं० शीलचन्द्रजी	बरौदा (सागर)	मध्यमा
१८७	,, पं० महेन्द्रकुमारजी	सिवनी	विशारद
१८८	,, पं० राजधरलालजी	साढूमल (झाँसी)	धर्म-व्या-न्यायमध्यमा
१८९	स्व० अमरचन्द्रजी	मेंधपा (बिजावर)	विशारद
१९०	श्री० पं० चन्द्रकुमारजी	केसली (सागर)	न्यायमध्यमा, शास्त्री
१९१	,, पं० धर्मदासजी	भौंडी (झाँसी)	न्यायतीर्थ, धर्मशास्त्री
१९२	,, पं० महेन्द्रकुमारजी	फतेपुर (दमोह)	काव्यतीर्थ, धर्म न्यायमध्यमा
१९३.	,, पं० पन्नालालजी	गुरसौरा (झाँसी)	शास्त्री
१९४	,, पं० हरिप्रसादजी	मडावरा (झाँसी)	काव्य एवं न्यायतीर्थ
१९५.	,, पं० शिखरचन्द्रजी	नरसिंहपुर	शास्त्री, न्यायतीर्थ

सख्या	नाम	स्थान	योग्यता
१९६	,, पं० हरिप्रसादजी	मड़ावरा (झाँसी)	न्यायमध्यमा, धर्मविशारद
१९७	,, श्री० विमलदासजी	चावली (आगरा)	न्यायतीर्थ, शास्त्री, एम० ए०
१९८	,, पं० प्रेमचंद्रजी	तेंदूखेड़ा (होशगाबाद)	न्यायतीर्थ, शास्त्री
१९९	,, पं० शीलचंद्रजी	बिजवाड़ा (मेरठ)	न्यायतीर्थ, शास्त्री
२००	,, पं० गुलझारीलालजी	राहतगढ़ (सागर)	न्यायतीर्थ, धर्मशास्त्री
२०१	,, पं० पारसनाथजी	हुम (मैसूर)	विशारद
२०२	,, पं० तुलसीरामजी	पाटन (सागर)	विशारद
२०३	,, पं० परमानंदजी	मोरई (झाँसी)	साहित्याचार्य, शास्त्री
२०४	,, पं० श्यामलालजी	लागौन (झाँसी)	न्याय-काव्यतीर्थ, शास्त्री
२०५	श्री पं० नामिराजजी	बिलुक्कम (कडलूर)	न्याय-काव्यतीर्थ
२०६	,, पं० देवीलालजी	उदयपुर	काव्यतीर्थ
२०७	,, पं० अक्षयकुमारजी	मण्डला (म० प्र०)	धर्मशास्त्री, एफ० ए०
२०८	,, पं० चन्द्रकुमारजी	महरौनी (झाँसी)	विशारद
२०९	,, पं० राजधरलालजी	गुरसौरा (झाँसी)	व्याकरणाचार्य एल० एल० बी०
२१०	श्री बा० ताराचन्द्रजी	बीना (सागर)	विशारद
२१०	,, पं० शान्तिलालजी	बरौदा (सागर)	विशारद
२११	,, पं० धीरेन्द्रकुमारजी	मुजफ्फरनगर	न्यायतीर्थ
२१२	,, पं० मोतीलालजी	ललितपुर	न्यायतीर्थ, धर्मशास्त्री
२१३	,, पं० सुमेरचंद्रजी	बहराइच	साहित्यशास्त्री
२१४	,, पं० राजकुमारजी	टड़ा (सागर)	धर्म-साहित्यशास्त्री
२१५	,, पं० चन्द्रशेखरजी	पाढम (मैनपुरी)	शास्त्री
२१६	,, पं० चन्द्रसैनजी	बाधई (एटा)	न्याय-काव्यतीर्थ, शास्त्री, मैट्रिक
२१७	,, पं० विजयमूर्तिजी	नीमकीसराय (एटा)	एम० ए० शास्त्री
२१८	स्व० पं० नेमिचंद्रजी	अहारन (आगरा)	धर्म-साहित्यशास्त्री, एफ० ए०
२१९	श्री पं० रतनचंद्रजी	ललितपुर (झाँसी)	विशारद
२२०	,, पं० किशोरीलालजी	बहादुरपुर (झाँसी),	न्याय-काव्यतीर्थ, शास्त्री
२२१	,, पं० सुरेशचंद्रजी	कुण्डलपुर (सागर)	विशारद
२२२	,, पं० रामचंद्रजी निमवे	हातकलगढे (कोल्हापुर)	न्याय-काव्यतीर्थ
२२३	,, बा० चेतनलालजी	बावली (मेरठ)	विशारद, मैट्रिक
२२४	,, पं० राजकुमारजी	गुदरापुर (झाँसी)	न्या०-काव्यतीर्थ, साहित्याचार्य एम० ए०
२२५	,, पं० ताराचंद्रजी	नुनसर (जबलपुर)	न्यायतीर्थ, शास्त्री

संख्या	नाम	स्थान	योग्यता
२२६	श्री प० हेमचंद्रजी	चावली (आगरा)	शास्त्री, जैनदर्शनशास्त्री
२२७	,, प० दरबारीलालजी	सौंरई (झाँसी)	शास्त्री, न्यायतीर्थ, न्यायाचार्य
२२८	,, प० चन्द्रशेखरजी	कारंजा	विशारद
२२९	,, प० गुलझारीलालजी	सोरई (झाँसी)	विशारद
२३०	,, प० बालचदजी	गौना (झाँसी)	काव्यतीर्थ, शास्त्री
२३१	,, भ० शान्तिलालजी	मोजिथा (बडौदा)	विशारद
२३२	, प० कस्तूरचद्रजी	सागर	विशारद
२३३	,, प० गुलाबचद्रजी	मुगावली (गवालियर)	विशारद
२३४	,, प० वीरेन्द्रकुमारजी	तिगोडा (सागर)	विशारद
२३५	,, प० महेन्द्रकुमारजी	खुरई (सागर)	न्यायाचार्य
२३६	,, प्रो० खुशालचद्रजी गोरावाला	मडावरा (झाँसी)	साहित्याचार्य, एम ए, न्यायतीर्थ
२३७	,, बा० हजारीमलजी	नैला (बिलासपुर)	बी ए एल एल बी
२३८	,, प० नेमिचद्रजी	बसई (धौलपुर)	ज्योतिषाचार्य, शास्त्री, न्यायतीर्थ
२३९	, प० कुन्दनलालजी	कजिया (सागर)	न्यायतीर्थ, विशारद
२४०	, डा० ताराचद्रजी	चावली (आगरा)	विशारद, ए० एम० एस्
२४१	,, प० दुलीचद्रजी	केना (जबलपुर)	शास्त्री, एस० सी०
२४२	,, प० देवेन्द्रकुमारजी	धीकाका (अलवर)	शास्त्री
२४३	श्री प० केशरीमलजी	मुगावली (गवालियर)	न्यायतीर्थ
२४४	, प० जिनराजजी	सिरनाडि (दक्षिण कनाडा)	न्यायतीर्थ
२४५	,, प० देवकुमारजी	श्रवणबेलगोला	शास्त्री
२४६	,, प० अनन्तराजजी	अनिपाक्कम (साउथ कनाडा)	विशारद
२४७	,, प० रवीन्द्रनाथजी	अमरावती	शास्त्री, बी० ए०
२४८	,, प० ज्ञानचद्रजी	गोटेगाँव	शास्त्री
२४९	, प० ललितकीर्तिजी	बागीदौरा (बासवाडा)	शास्त्री
२५०	,, प० जुगलकिशोरजी	बाबली (मेरठ)	विशारद
२५१	,, प० श्रेयासकुमारजी	किरतपुर (बिजनौर)	शास्त्री, मैट्रिक
२५२	,, प० मानभद्रजी	धीकाका (अलवर)	विशारद
२५३	,, प० रतनचद्रजी	डाँड (सागर)	विशारद
२५४	,, प० माधवरावजी	रुअर (तवरधार)	मध्यमा
२५५	,, प० दामोदरदासजी	रीठी (जबलपुर)	विशारद
२५६	,, प० देवकुमारजी	श्रवणबेलगोला	शास्त्री
२५७	स्व० प० गुलाबचद्रजी	बमारी (सागर)	साख्य श्वे. दि न्यायतीर्थ

संख्या	नाम	स्थान	योग्यता
२५८.	श्री पं० कन्हैयालालजी	समोना (आगरा)	विशारद
२५९	स्व० पं० शिखरचंद्रजी	पीपलमंडी (देहरादून)	विशारद
२६०	श्री पं० अमरचंदजी	बरौदियाकलां (सागर)	शास्त्री
२६१	डा० गुलाबचंद्रजी	भेलसा	आयुर्वेदाचार्य, विशारद
२६२	श्री पं० ज्ञानचंद्रजी	सिरसागज (मैनपुरी)	न्यायतीर्थ
२६३	,, पं० सगुनचंद्रजी	मुगावली (गवालियर)	विशारद, एम० ए०
२६४	,, पं० अमीरचंद्रजी	बडगाँव (जबलपुर)	विशारद
२६५	,, पं० शीतलप्रसादजी	बड़ागाँव (मेरठ)	जैनदर्शनशास्त्री, न्यातीर्थ,एम ए
२६६	,, पं० ज्ञानचंद्रजी	करेली (हुशगाबाद)	विशारद
२६७	,, पं० लक्ष्मीचंद्रजी	खनियाधाना (झाँसी)	विशारद
२६८	,, पं० बालमुकुन्दजी	मोरेना (गवालियर)	शास्त्री
२६९	,, पं० नाभिनंदनजी	खतौली (मुजफ्फरनगर)	जैनदर्शनशास्त्री, एफ ए
२७०	,, ब्र० ब्रह्मसूरिजी (अभिनंदन-सागरजी मुनि)	नसरापुर (काल्हापुर)	न्यायतीर्थ, शास्त्री
२७१	,, पं० छक्कीलालजी (चन्द्रकुमार)	परसौन (सागर)	विशारद
२७२	,, पं० एन जी नागकुमारजी	नेलियागुलम्ब (नार्थ आरकाट)	न्यायतीर्थ, साहित्यमध्यमा
२७३	,, पं बाबूलालजी	खतौली (मुजफ्फरनगर)	सम्पूर्ण मध्यमा
२७४	,, पं० अमरचंद्रजी	कटनी (जबलपुर)	विशारद, बी० कोम०, एम० ए०
२७५	डा० भागचंद्रजी	कुलपुरा (सागर)	विशारद, एम० एस सी०
२७६	प्रो० निहालचंद्रजी	ललितपुर (झाँसी)	विशारद ,,
२७७	स्व० डा० भगवानदासजी	गुदरापुर (झाँसी)	शास्त्री आयुर्वेदाचार्य
२७८	श्री पं० पन्नालालजी	मालथौन (सागर)	व्याकरणशास्त्री
२७९	,, पं० अमृतलालजी	माढ़मल (झाँसी)	जैनदर्शन-साहित्याचार्य, शास्त्री
२८०	, पं० नागराजजी	मिजार (सा० कनाडा)	शास्त्री
२८१	,, पं० नन्हेलालजी	गैठी (जबलपुर)	शास्त्री
२८२	,, पं० धन्यकुमारजी	खुरई (सागर)	व्याकरणमध्यमा, बी ए , बी टी
२८३	,, पं० दीपचंद्रजी	बण्डा (सागर)	विशारद
२८४	श्री पं० रतनचन्दजी	मबई (टीकमगढ़)	शास्त्री
२८५	श्री , कपूरचन्दजी	गया	विशारद
२८६	श्री ,, हुकुमचन्दजी	बरुआसागर (झासी)	विशारद
२८७	श्री ,, पूरनचन्दजी	मुरादाबाद	आयुर्वेदाचार्य, ए० एम० एम०
२८८	श्री ,, रतनचन्दजी	तेवदा (भेलसा)	विशारद

संख्या	नाम	स्थान	योग्यता
२८९	श्री ,, केवलचन्द्रजी	खुरई (सागर)	विशारद, मैट्रिक
२९०	श्री ,, नाभिराजजी	मुडारेंहरी (सा क)	शास्त्री
२९१	डा० पूरणचन्द्रजी	कुलपुरा (सागर)	शास्त्री, आयु०चार्य, ए०एम०एस०
२९२	श्री ,, गुलाबचन्द्रजी	तालवेट (झांसी)	विशारद
२९३	श्री ,, नेमिचन्द्रजी	सिलौंडी (जबलपुर)	विशारद
२९४	श्री ,, हुकुमचन्द्रजी सराफ	ललितपुर (झासी)	विशारद, एम० एम० सी०
२९५	श्री ,, बाबुलालजी 'फागुल्ल'	मडावरा (झासी)	शास्त्री, सा० र०, मैट्रिक
२९६	प्रो० सुखनन्दनजी	वरमाताल (झासी)	शास्त्री, एम० ए०
२९७	वैद्य मूलचन्द्रजी	पिपरोदा (शिवपुरी)	शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य
२९८	श्री ,, मोतीलालजी	सीहौरा (सागर)	विशारद
२९९	श्री ,, दीपचन्द्रजी	लुहारी (सागर)	विशारद
३००	श्री ,, रतनचन्द्रजी	मडावरा (झासी)	साहित्यशास्त्री
३०१	श्री ,, कन्हैयालालजी	मरदानपुर (सागर)	साहि० धर्मशास्त्री
३०२	श्री ,, स्वरूपचन्द्रजी	ललितपुर (झासी)	जैनदर्शनशास्त्री
३०३	श्री ,, कुन्दनलालजी	बीना (सागर)	शास्त्री, बी० ए०, एल० टी०
३०४	श्री प्रो० देवेन्द्रकुमारजी	बाँदरी (सागर)	एम० ए०, साहित्याचार्य, साहित्यरत्न
३०५	प्रो० रतनकुमारजी	जैश्रीनगर (सागर)	बी० काम० शास्त्री आदि
३०६	श्री प० हुकुमचन्द्रजी	खिमलासा (सागर)	शास्त्री
३०७	प्रो० प्रेमसागरजी	कुरावली (मैनपुरी)	एम० ए०, शास्त्री, सा० र०
३०८	श्री प० छोटेलालजी	चुनगी (झासी)	व्या० मध्यमा, विशारद
३०९	श्री ,, महेन्द्रकुमारजी	भगुवाँ (छतरपुर)	शास्त्री
३१०	श्री ,, भागचन्द्रजी	नौहरकलाँ (झासी)	शास्त्री
३११	श्री ,, दयाचन्द्रजी	गौना (झासी)	सा० शास्त्री, मैट्रिक
३१२	श्री ,, प्रेमचन्द्रजी	हरदी (सागर)	मध्यमा (व्या०) शास्त्री
३१३	श्री ,, रवीन्द्रकुमारजी	सागर	एफ० ए०, शास्त्री
३१४	श्री ,, नदनलालजी	जवेरा (सागर)	विशारद, एफ० ए०
३१५	श्री ,, रामप्रसादजी	नयाबाजार दमोह	सा०रत्न, एफ० ए०, शास्त्री
३१६	श्री ,, बालचन्द्रजी	कटनी (जबलपुर)	एम० ए०, शास्त्री, साहित्यरत्न
३१८	श्री ,, ब्रजलालजी	टीकमगढ (झासी)	विशारद
३१९	श्री ,, पन्नालालजी	उमरिया (झासी)	विशारद, मैट्रिक
३२०	श्री ,, ज्ञानचन्द्रजी	गढ़ाकोटा (जबलपुर)	शा०सा०, मध्यमा

सख्या	नाम	स्थान	योग्यता
३२१.	प्रो० नन्दलालजी	शाहगढ (छतरपुर)	सर्वदर्शनाचार्य,एम०एस०सी०
३२२	श्री प० घनश्यामदासजी	लोहर्रा (झासी)	एफ० ए०, विशारद
३२३	श्री ,, उदयचन्द्रजी	पिपरौदा (शिवपुरी)	एम० ए०, बौद्धदर्शनाचार्य
३२४	श्री ,, दरबारीलालजी	डोंगराखुर्द (झासी)	शास्त्री, साहि०रत्न
३२५	श्री ,, हीरालालजी	वाडी (भोपाल)	साहित्याचार्य, काव्यतीर्थ, साहित्यरत्न
३२६	श्री मोतीलालजी	सिलावन (झासी)	बी० एस० सी०, शास्त्री
३२७	श्री प० भागचन्द्रजी	ललितपुर (झांसी)	साहित्यमध्यमा
३२८	श्री ,, विजयकुमारजी	बडागाँव (झासी)	काव्यतीर्थ, साहित्यशास्त्री
३२९	श्री , शिखरचन्द्रजी	मल्लपुरा (दमोह)	विशारद, मैट्रिक
३३०	श्री ,, राजारामजी	अहार (झासी)	शास्त्री
३३१	श्री , शिखरचन्द्रजी	दमोह (सागर)	विशारद
३३२	श्री , बृजकिशोरजी	जखौरा (झासी)	धर्मशास्त्री
३३३	डा० दुलीचन्द्रजी	शाहगढ (सागर)	शास्त्री, मैट्रिक
३३४	डा० बाबूलालजी	मालथौन (सागर)	विशारद
३३५	श्री ,, दयाचन्द्रजी	समनापुर (सागर)	एफ० ए०, जैनदर्शनशास्त्री
३३६	श्री , ताराचन्द्रजी	भोरझिर (हुशगाबाद)	बी० ए० साहित्यशास्त्री
३३७	श्री जयकुमारजी	सागल (वेल्लारी)	साहित्यशास्त्री, मैट्रिक
३३८	श्री ,, बिहारीलालजी	मलहरा (छतरपुर)	विशारद मैट्रिक
३३९	श्री ,, नन्दलालजी	आरा	मैट्रिक
३४०	श्री वृजनदनजी	विल्सी (बदायू)	बी० ए०, शास्त्री
३४१	श्री ,, गुलाबचन्द्रजी	बगौदियाकलाँ (सागर)	एम० ए०, जैनदर्शनाचार्य
३४२	श्री , लक्ष्मणप्रसादजी	मडावरा (झासी)	विशारद, मैट्रिक
३४३	श्री राजधरलालजी	अजनौर (टीकमगढ)	विशारद
३४४	श्री , धर्मचन्द्रजी	जबलपुर	विशारद
३४५	श्री , ज्ञानचन्द्रजी	जिजयावन (झासी)	बी० एस० सी० (कैमिकल), साहित्यरत्न, न्यायाचार्य
३४६	श्री ,, धन्नालालजी	सौना (झासी)	साहित्यशास्त्री, बी एस सी
३४७	श्री ,, सुरेशचन्द्रजी	जबलपुर	विशारद, मध्यमा
३४८	श्री ,, श्रीरामजी	छिन्दवाडा	शास्त्री, काव्यतीर्थ
३४९	श्री ,, रवीन्द्रकुमारजी	सागर	विशारद, शास्त्री
३५०	श्री , नगेन्द्रकुमारजी	धनगुवाँ (झासी)	साहित्याचार्य, बी० ए०, शास्त्री

संख्या		नाम	स्थान	योग्यता
३५१	श्री	,, स्वरूपचन्द्रजी	रीठी (जबलपुर)	शास्त्री, एफ० ए०
३५२.	श्री	,, विमलकुमारजी	आगासौद (सागर)	व्याकरणमध्यमा, मैट्रिक
३५३	श्री	,, नदकिशोरजी	मालथौन (सागर)	एफ० ए०, शास्त्री
३५४	श्री	,, मोहनलालजी	बह्मौरी (सागर)	शास्त्री, एफ० ए०
३५५	श्री	,, कञ्छेदीलालजी	पथरिया (सागर)	सा शास्त्री, साहित्यरत्न, एफ ए
३५६	श्री	,, दर्शनलालजी	मुल्हेडा (मेरठ)	विशारद
३५७	श्री	,, देवेन्द्रकुमारजी	चिरगाँव (झासी)	एफ०ए०, शास्त्री
३५८	श्री	,, रूपचन्द्रजी छावडा	नलवाडी (आसाम)	साहित्यशास्त्री
३५९	श्री	,, पुरुषोत्तमदासजी	गौना (झासी)	साहित्याचार्य द्वि० ख०, एफ०ए०
३६०	श्री	, कपूरचन्द्रजी	भौडी (झासी)	विशारद
३६१	श्री	,, रामदयालजी	मलहरा (छतरपुर)	साहित्यशास्त्री, मैट्रिक
३६२	श्री	,, हरिश्चन्द्रजी 'भगत'	सहारनपुर	विशारद
३६३	श्री	,, चन्द्रकुमारजी	कुलपुरा (सागर)	शास्त्री, इटर (साइस)
३६४	श्री	, ताराचन्द्रजी	जयसीनगर (सागर)	एफ० ए०, जैनदर्शनशास्त्री
३६५	श्री	,, धर्मचन्द्रजी	शाहगढ (सागर)	बी० काम० साहित्यरत्न, साहित्याचार्य द्वितीयखण्ड
३६६	श्री	, भागचन्द्रजी	वरदुआहा (छतरपुर)	शास्त्री द्वितीयवर्ष, मैट्रिक
३६७	श्री	कपूरचन्द्रजी	तिगोडा (सागर)	विशारद, एफ० ए०
३६८	श्री	, सुरेन्द्रकुमारजी	पचवटी (नासिक)	साहित्यशास्त्री, एफ० ए०
३६९	श्री	,, बाबूलालजी	कजिया (सागर)	धर्मशास्त्री, मैट्रिक, साहि० मध्यमा, सा० र०
३७०	श्री	,, रतनचन्द्रजी	धनगौल (झासी)	मध्यमा शास्त्री

ध्रौव्य-कोष

जो आमदनी एक मुश्त १०००) व उससे अधिक आती है, वह विद्यालय के स्थायी कोष मे जमा होती है, तथा कम से कम १००) तक भी दातार की इच्छा पर इस कोष मे जमा हो सकता है। ध्रौव्यका व्याज मात्र खर्च मे लाया जाता है। इस कोषमे अभी तक केवल २,००,०००) हो सका है। जिसकी रक्षा ट्रस्ट कमेटी करती है।

जिन महाशयोंने १०००) या अधिक प्रदान किया है उनकी शुभ नामावली एक सुन्दर पटिया पर सुवर्ण अक्षरोमे अङ्कित होकर विद्यालयके भवनमें सुशोभित है और दातारोके दातृत्व गुणकी कीर्तिको विस्तारित कर रही है। ५००) से ९९९) तक प्रदान करनेवाले महाशयोकी नामावली भी दूसरे पटिया पर रुपहले अक्षरोमें अङ्कित है। पाटियोकी नकल निम्न प्रकार है—

संख्या	उदार दातारों के नाम	रकम
	स्व० श्री झम्मनलालजी, प्रथम दातार कामा	
१	दानवीर साहू शांतिप्रसादजी, कलकत्ता	१,००,०००)
२	,, सेठ गुलजारीलालजी (भ्राता सेठ छोटेलालजी) कलकत्ता	२५,०००)
३	,, सेठ दीनानाथजी सरावगी सुपुत्र श्रेष्ठिवर्य्य जीवनदासजी, कलकत्ता मारफत अपने भ्राता सेठ छोटेलालजी के	१५,०००)
४	श्री सेठ रामजीवनदासजी सरावगी कलकत्ता	५०००)
५	,, सेठ रामजीवनदासजी सरावगी एण्ड सन्स, कलकत्ता	१०००)
६	सर सेठ स्वरूपचंदजी हुकुमचन्द्रजी, इन्दौर	१००१)
७	दा वी, रा ब, राज्यभूषण, रावराजा, सर सेठ हुकुमचंदजी, इन्दौर	१०,०००)
८	दा वी, रा ब, राज्यभूषण, रावराजा, सर सेठ हुकुमचंदजी इन्दौर	२००१)
९	सेठ त्रिलोकचन्द्र हुकुमचंदजी, इन्दौर	१००१)
१०	रायबहादुर सेठ ओंकारजी कस्तूरचंदजी इन्दौर	२५००)
११	श्रीमती चिरोंजाबाईजी धर्ममाता पूज्य श्री क्षुल्लक गणेशप्रसादजी वर्णी महाराज, सागर (अकलंक सरस्वतीभवनका २०००) इसीमें सम्मिलित है)	६००१)
१२	श्री सेठ जवाहरमलजी मूलचन्दजी, अजमेर	१०००)
१३	,, सेठ हरसुखरायजी अमोलकचन्द्रजी खुरजा	१०००)
१४	,, सेठ हीराचन्द्रजी गुमानजी बम्बई	१०००)
१५	,, सेठ माणिकचन्द्रजी हीराचन्द्रजी जे पी बम्बई	१०००)
१६	,, सेठ बालचन्द्रजी उगरचन्द्रजी, शोलापुर	१०००)
१७	,, सेठ रावजी साकलचन्द्रजी शोलापुर	१०००)
१८	,, दानवीर सेठ देवकुमारजी, आरा	१०००)
१९	,, मन्नूलालजी रामदासजी, बनारस	१०००)
२०	,, छेदीलाल गणेशदासजी बनारस	१००१)
२१	,, सेठ कुंजीलालजी बनारसीदासजी, बनारस	१००१)
२२	,, सेठ हनुमानदासजी बाबूनन्दनजी, बनारस	१०००)
२३	,, सेठ खड़गसेन उदयराजजी, बनारस	१०००)
२४	,, धन्नूलालजी अटॉर्नी कलकत्ता	१०००)
२५	,, बा० वनकुमारचन्द्रजी, आरा	२०००)
२६	,, सेठ माणिकलाल कन्हैयालालजी सतना (स्व० कोमलचन्द्रकी स्मृतिमें)	१००१)
२७	,, स० सि० ऋषभसावजी गुलाबसावजी, नागपुर	१०००)
२८	,, सेठ मूलचन्द्रजी सर्राफ, बरुआसागर	१०००)
२९	,, लाला गन्दूमलजी, झाँसी	१०००)

संख्या	उदार दातारों के नाम	रकम
३०	श्री रा० सा० लाला फूलजारीलालजी, करहल	१०००)
३१	श्रीमती केसरबाईजी, धर्मपत्नी सेठ दयाचन्दसा घनश्यामसा, बड़वाहा (नीमाड)	१०००)
३२	श्रीमती धर्मपत्नी लाला सुमेरचन्द्रजी, प्रयाग	१०००)
३३	श्री सेठ जोतीराम दलूचन्द्रजी दोशी, पढरपुर	१०००)
३४	,, सेठ केदारमलजी दत्तूमलजी, छपरा	१०००)
३५	,, भीमचन्द्रजी फूलचन्द्रजी गाधी, दहीगाव	१०००)
३६	, माणिकचन्द्रजी, काशी	१०००)
३७	, रा० ब० बा० द्वारिकाप्रसादजी, नहटौर	१००१)
३८	,, बनारसीदासजी काशीप्रसादजी, काशी	११००)
३९	,, सेठ बनजीलालजी ठोल्या जौहरी, जयपुर	११०१)
४०	श्रीमती गुलाबबाईजी धमपत्नी स्व० दानवीर, रायबहादुर सेठ कल्याणमलजी इन्दौर	१०००)
४१	श्री सिघई परमानन्दजी, बीना	१०००)
४२	, ला० रूपचन्द्रजी हुलाशरायजी, सहारनपुर	१०००)
४३	श्रीमन सेठ शिताबराय लक्ष्मीचन्द्रजी, भेलसा	१००१)
४४	श्री सेठ मन्नूलाल श्यामदासजी समैया आगासोद (सागर)	१०००)
४५	श्रीमती सजनीदेवी, धर्मपत्नी जिणवाणीभक्त लाला मुसद्दीलालजी, अमृतसर (पुस्तकालय खाते)	१००१)
४६	श्री बाबू गोविन्दलालजी, गया	१०००)
४७	श्री लाला कपूरचन्द्र धूपचन्द्रजी, कानपुर	१००१)
४८	,, लाला विश्वेश्वरनाथ मूलचन्दजी, कानपुर	१००१)
४९	,, रायबहादुर सेठ रतनलाल चादमलजी, राची	१००१)
५०	,, श्रीमती बनारसीदेवी धर्मपत्नी मोदी कालूरामजी, गिरीडीह	१००१)
५१	,, दिगम्बर जैन पचान, बम्बई	१३६५)
५२	,, मौजीलाल-अर्जुनलाल-दयाचन्दजी कठरया, बीना	१००१)
५३	श्रीमती प्यारीबहू धर्मपत्नी स्व० स० सि० कस्तूरचन्द्रजी, जबलपुर	१००१)
५४	श्री सकल दिगम्बर जैन पचान, मुजफ्फरनगर	१००१)
५५	,, सेठ हीरालालजी अजमेरा, गया (स्व० सेठ गगाबक्सजीकी स्मृतिमे)	१०००)
५६	,, स० सि० धन्यकुमारजी (फर्म स० सि० कन्हैयालाला गिरधारीलालजी) कटनी	१००१)
५७	,, बाबू रामस्वरूपजी, बरुआसागर	१००१)
५८	,, सिघई कारेलाल कुन्दलालजी सागर	१०००)
५९	श्रीमती दानशीला सेठानी गुन्नीबाईजी मातेश्वरी श्रीमन्त सेठ विरधीचन्दजी, सिवनी	१०००)
६०	श्री दिगम्बर जैन पंचान, सिवनी	१७००)

संख्या	उदार दातारो के नाम	रकम
६१	श्री सेठ हजारीमल किशोरीलालजी, गिरीडीह	१०००)
६२	,, ब्रह्मचारी खेतसीदासजी, गिरीडीह	१०००)
६३	,, सेठ भगवानदास शोभालालजी, सागर	१०००)
६४	,, सेठ लालचन्दजी, दमोह	१००१)
६५	,, सेठ मेदालालजी सरावगी, डालटनगज	१००१)
६६	,, सेठ सुन्दरमल नेमीचन्दजी, राची	२०००)
६७	, सेठ बालचद देवचदजी शाह, शोलापुर	१०००)
६८	, रा० सा० सेठ गणेशीलालजी डालटनगज	१२००)
६९	,, सेठ सूरजमलजी धूलियान	१००१)
७०	,, रा० ब० सेठ रतनलाल सूरजमलजी, राची	१००१)
७१	, सेठ गनपतराय नथमलजी, हजारीबाग	१०००)
७२	,, सेठ चैनसुख महासुखजी हजारीबाग	१०००)
७३	,, सेठ जमनालाल स्वरूपचन्दजी काला, धूलियान	१००१)
७४	श्रीमती गुलाबबाई धर्मपत्नी सेठ दानूलालजी, गया	१०००)
७५	श्री सेठ कन्हैयालालजी छावडा हजारीबाग	१०००)
७६	श्रीमती सौ० कचनबाई, धर्मपत्नी रा० सा० लाला प्रद्युम्नकुमारजी सहारनपुर	१००१)
७७	श्री सेठ रामचन्द्रजी खिन्दूका, जयपुर	११०१)
७८	, लाला प्रकाशचन्द्रजी, नानौता (सहारनपुर)	१००१)
७९	,, सेठ छोगालाल भंवरीलालजी सेठी, गया	१००१)
८०	, लाला जम्बूप्रसाद महेन्द्रकुमारजी, नानौता	१०००)
८१	,, रा० ब० नन्दकिशोर जैनेन्द्रकिशोरजी, दिल्ली	१००१)
८२	,, सेठ जयदयाल छोटेलालजी, कानपुर	१००१)
८३	, दिगम्बर जैन पचान, कोडरमा	१००१)
८४	दिगम्बर जैन पचान, सआदतगज लखनऊ (गोलकस)	१३४०)
८५	,, दिगम्बर जैन पचान, भेलसा	१००१)
८६	, सेठ मगनमलजी हीरालालजी पाटनी, किशनगढ (अजमेर)	१०००)
८७	श्रीमती धनवती देवीजी, इटावा	१००१)
८८	श्री ब्रह्मचारी सुमेरचन्द्रजी भगत (सुमतप्रसादजी, विनोदकुमारजी) जगाधरी	१००१)
८९	,, ब्रह्मचारी मूलशकरजी देशाई, प्रतापगढ (राजस्थान) (पारितोषिक खाते)	१०००)
९०	,, सेठ सागरमलजी, गिरीडीह (अकलक सरस्वतीभवन खाते)	१००१)
९१	श्रीमती ब्र० बनारसीबाईजी, गया	१०००)
९२	,, ला० राजकृष्ण प्रेमचन्द्रजी जैन, दरियागज देहली	१०००)

संख्या	उदार दातारो के नाम	रकम
९३	तीर्थभक्त सवाई सिघई भैयालाल जिनेन्द्रकुमारजी जैन, खुरई, (सवाई सिघई गनपतलालजी गुरहाकी स्मृतिमे)	१००१)
९४	,, सेठ धर्मदास रिषभदासजी, सतना	१०००)
९५	,, रायबहादुर सेठ हरकचन्द्रजी, रांची	१००१)
९६	,, सेठ जोखीराम बैजनाथजी, कलकत्ता	३००१)
९७	श्री सेठ नथमल बद्रीप्रसाद केदारप्रसाद-महावीरप्रसादजी सरावगी, कटनी	१०००)
९८	,, लाला सुखवीरप्रसाद धनेन्द्रकुमारजी, खनौली (मुजफ्फरनगर)	१०००)
९९	,, सेठ जगन्नाथजी पाड्या, कोडरमा	१०००)
१००	,, सकल दिगम्बर जैन पचान, राची	७०१)
१०१	,, रा० सा० बाबू प्यारेलालजी प्लीडर चीफकोर्ट, दिल्ली	६००)
१०२	, रा० ब० श्रीमन्त सेठ मथुरादासजी मोहनलालजी खुरई	५००)
१०३	,, सेठ मोतीलाल रावजी शोलापुर (अ० सरस्वतीभवन खाते)	५०१)
१०४	, बा० निर्मलकुमारजी रईस, जमीदार आरा	५०१)
१०५	, लाला हुकुमचन्दजी जगाधरमलजी दिल्ली	५०१)
१०६	,, सेठ हरप्रसादजी तुलसीरामजी, रोहतक	५००)
१०७	, सेठ धनराजजी गोकुलचन्द्रजी, कोपरगाँव	५०१)
१०८	, सेठ छगनलालजी, सुमारी	५००)
१०९	,, दि० जैन पचान, लखनऊ	५००)
११०	, दि० जैन पचान हिसार	५००)
१११	, शास्त्रसभा मदिर कूचासेठ देहली	८०१)
११२	, दि० जैन पचान, ललितपुर	५४१)
११३	,, सेठ शोभाराम गभीरलालजी इन्दौर	५०१)
११४	, सेठ गोदूलाल लक्ष्मीनारायणजी, गया	५०१)
११५	, सेठ सि० निर्मलकुमारजी जबलपुर	५०१)
११६	, लाला भगवानदासजी रपरिया, कलकत्ता	५०१)
११७	,, सेठ राजमलजी टोग्या इन्दौर	५०१)
११८	,, सिघई खेमचन्द पीताम्बरलालजी, जबेरा	५०१)
११९	,, दिगम्बर जैन पचान, रांची	५००)
१२०	,, सेठ चम्पालाल छोगालालजी पिटरवार (हजारीबाग)	५००)
१२१	,, लाला उग्रसेन कृष्णचन्द्रजी, खेकडा	५०१)
१२२	,, दिगम्बर जैन पचान, देहरादून	८००)
१२३	,, सेठ मिश्रीलालजी, हजारीबाग	५००)

संख्या	उदार दातारो के नाम	रकम
१२४	,, पं० दरबारीलालजी कोठिया, न्यायाचार्य, दिल्ली	५४१)
१२५	,, पं० किशोरीलालजी शास्त्री, सहारनपुर	५०१)
१२६	,, लाला जयप्रकाश त्रिलोकचंदजी, रामपुर मनिहारान	५५१)
१२७	, दिगम्बर जैन पंचान, नुकुड	५०१)
१२८	,, सेठ मिश्रीलाल धर्मचंद्रजी, चाईबासा (विहार)	५०१)
१२९	,, सेठ पन्नालालजी, रीवा	५०१)
१३०	,, प्रोफेसर पं० विमलदासजी, काशी	५०१)
१३१	,, चालूकोष मे (सन् २४ मे) इस कोषमे जमा किया	१००९८)
१३२	फुटकर	४२४)
		२९१५०७)

नोट १—श्री ब्रह्मचारी धनकुमारचन्दजी आरा वर्तमान ईसरीने १–९–४० को २०००) प्रदान किया है, अपने जीवनमे उसका व्याज ॥) सैकडा लेते हैं।

विद्यालय भवन तथा घाट

यह विद्यालय गंगाजीके तटपर स्थित है। सन् १९४८ ई० मे गंगाजीमे भीषण बाढ आयी थी जिससे इस विद्यालयका घाट भी टूट गया और विद्यालय भवनकी दशा चिन्ताजनक हो गयी। अत घाटका पुर्ननिर्माण करना अत्यन्त आवश्यक हो गया और प्रबन्धकारिणी सभाने इसके लिये ध्रौव्यकोषसे ५०,०००) खर्च करने की तत्काल स्वीकृति दी थी।

यह भवन घाट सहित आराके सुप्रसिद्ध रईस स्वर्गीय दानवीर श्री देवकुमारजीके पितामह पंडित प्रभुदासजीके दिगम्बर जैन मंदिरजीकी धर्मशाला है। यह विशाल भवन काशीमें अद्वितीय है और कई लाख रुपयेकी इमारत है। श्री देवकुमारजीके सुपुत्रों (बा० निर्मलकुमार चक्रेश्वरकुमारजी) ने इस भवनको विद्यालय-के लिये प्रदान कर दिया है।

इसकी सुरक्षाके लिए अपील की गयी और २२८३८) की सहायता दि० जैन समाजसे और ६५२५) की इम्प्रूवमेण्ट ट्रस्ट बनारससे प्राप्त हुई है। इसका निर्माण प्रारम्भ किया गया था, अबतक ४ कुएँ बन पाये हैं, जिसमें ४४०४०) लगा है। इसमें से १४६७६) विद्यालयके ध्रौव्य कोषसे लगा है। अब सरकारने काशीके घाटोंका निर्माण कराना निश्चित कर लिया है और घाटोंका निर्माण प्रारंभ हो गया है। यह घाट भी सरकारी प्रथम योजनामें आ गया है और इसका शेष निर्माण सरकार करायेगी। अत काम स्थगित कर दिया गया है।

अबतक जो ५००) या अधिककी सहायता प्राप्त हुई है, उसका विवरण निम्न प्रकार है। इन दातारों-की नामावली भी एक सुदर पाटियेपर सुवर्णमय अक्षरोंमे अंकित है ।

१	श्री इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बनारस	६५२५)
२.	,, श्रीमती चन्द्रवती देवी, धर्मपत्नी साहु रामस्वरूपजी, नजीबाबाद	२०००)
३	,, श्री देवेन्द्रकुमार जैन ट्रस्ट ,,	१०००)
४	,, श्रीमती धर्मपत्नी लाला सोहनलालजी, इटावा	१०००)
५	,, सिघई कुन्दनलालजी, सागर	१०००)
६	,, सेठ लालचन्दजी, मालगुजार, दमोह	१०००)
७	,, श्रीमन्त सेठ शिताबराय लक्ष्मीचन्दजी भेलसा	५०१)
८	,, लाला हरिश्चन्द्रजी, दरियागज, दिल्ली	५०१)
९	,, दिगम्बर जैन पचान डीमापुर (आसाम)	५०१)
१०	,, दिगम्बर जैन समाज, गोहाटी (आसाम)	५०१)
११	,, दिगम्बर जैन समाज, पलासवाडी (आसाम)	२१००)
१२	, गुप्तदान (मारफत ला० राजकृष्णजी दिल्ली)	५०००)
१३	, दिगम्बर जैन पचान, मनीपुर (आसाम)	१००१)
१४	,, लाला कपूरचन्द्र धूपचन्द्रजी जैन कानपुर, (मा० श्री प० कैलाशचन्द्रजी)	१०००)
१५	,, लाला मनोहरलाल नन्हेमलजी जैन देहली (मा० श्री प० कैलाशचन्द्रजी)	१०००)
१६	, दिगम्बर जैन समाज, बीना (मा० प० वंशीधर जी और प० फूलचन्दजी सिलावन)	७२३)
१७	, ला० फिरोजीलालजी दिल्ली	५२२॥)
१८	, ला० नेकचन्दजी फीरोजपुर छावनी (मारफत ला० फीरोजीलालजी)	५२२॥)
१९	सेठ धर्मदास ऋषभदासजी सतना	५०१)
२०	फुटकर	१४६३॥)॥
		२९३६३)॥

आय-व्यय ता० १२ जून १९०५ से ता० ३० जून १९५५ तक (५० वर्षों का)

८४६८०२॥।=) आय

- २९१५०७) ध्रौव्यकोष खाते
  - २८७००५) ध्रौव्यकोष खाते
  - ४५०२) अकलंक सरस्वती भवन व पुस्तकालय (ध्रौव्य) खाते
- १०४४६) इमारत खाते
- ६१२६।≡) बाबा भागीरथ भवन खाते
- १३६१-)॥। पुस्तक-क्रय तथा अकलंक सरस्वती भवन (चालू खाते) खाते
- १५३१९२-)। व्याज खाते
- २९३६३)॥ घाट मरम्मत व निर्माण खाते
- ३५४८३७≡)॥ अन्य खातोंमें (साधारणदान तथा मासिक दानादि) की आय

८४६८०२॥।=)

३९९१॥।) सचित-कोष खाते

८५०७९४॥=)

६३१७४६॥।=)॥ व्यय

- २२५२४५=)॥ भोजन खाते
- १०३८८७॥।≡)। वेतन खाते
- २१३२५॥।-)। इमारत खाते
- १२००३॥।≡)। अकलंक सरस्वती भवन व पुस्तकालय खाते
- ७४२७॥=) कार्यालय खाते
- ४४०३९।≡)॥। घाट मरम्मत व निर्माण खाते
  - २९३६३)॥ आय में व्यय
  - १४६७६।≡)। ध्रौव्यकोषसे व्यय
- १०५४७६॥।=)॥ अन्य खातों का (वृत्ति, रोशनी औषधि, व्यायामशाला, फरनीचर, परीक्षा छपाई म्यू० टैक्स, वार्षिकोत्सव आदि) व्यय
- १७३१०) बट्टेखाते (तफसील नीचे नोटमें)

६३१७४६॥।=)॥

२१९०४७॥≡)॥ श्री रोकड़बाकी

- २०८६१६=)॥ ध्रौव्यकोष खाते
- ६१२६।≡) बाबा भागीरथ भवन खाते
- ३०९१॥।) सचित-कोष खाते
- ३१३।=) अन्य खातों का जोड़

२१९०४७॥≡)॥

८५०७९४॥=)

रोकड़ बाकीका विस्तृत विवरण

१०८९७०) शेयर्स ह—

१०००००) प्रिफरैंसशेयर्स भाग्यनिधि लि० ।

३०१५) शेयर्स, अम्बिकाजूट मिल्स, कलकत्ता ।

२५००) शेयर्स, अलायन्स जूट मिल्स, कलकत्ता ।

१७९०) शेयर्स, इंपीरियल बैंक, बम्बई ।

१६६५) शेयर्स टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी लिमिटेड बम्बई,

१०८९७०)

४४५०) गिरवीखाते—

४४५०) आभूषण गिरवी रक्खे

३२५६५।।।)।। सरखतोपर कोठियोमे जमा—

*५०००) श्री विसेसरप्रसाद पुरुषोत्तमदास, काशी

६९९८।।=)।। श्री नरसिंहदास बल्लभद्रदास जैन काशी

४०६७≡) श्री राजेन्द्रकुमार कुंवरजी जैन कलकत्ता

१२००) श्री खड्गसैन उदयराजजी जैन काशी

४०००) श्री विश्वनाथप्रसाद एण्ड सन्स, काशी

५०००) श्री बल्देवप्रसाद अग्रवाल, काशी

५०००) श्री सोहनलाल बल्देवदास, काशी

८००) श्री छन्नूमल नरोत्तमदास, काशी

५००) श्री सुमतप्रसाद विनोदकुमार जगाधरी

३२५६५।।।)।।

५५०१) दातारों की कोठियो में जमा

३००१) सेठ जोखीराम बैजनाथजी सरावगी, कलकत्ता

२५००) सेठ ओंकारजी कस्तूरचन्द्रजी इन्दौर,

५५०१)

६६४०८।।)। बैंको तथा सरकारी सिक्योरिटीजमें—

१६९७।)। इंपीरियल बैंक आफ इंडिया, बनारस

६६०९।) पंजाब नेशनल बैंक बनारस

७१२७) पोस्टआफिस सेविंगस् बैंक, शिवाला

३६०००) नेशनल सेविंगस् सार्टीफिकेट्स

१५०००) गवर्नमेंट आफ इण्डिया दिल्ली का ३।। परमेन्ट १० वर्षीय ट्रैजरी सार्टीफिकेट ।

४०,७५) उत्तरप्रदेशीय सरकार (४ परमैन्टका डैवलपमैंट) सार्टीफिकेट

६६४०८।।)।

५००) श्री झमौल्लाकुवरि धर्मपत्नी श्री सुमेरचन्द्रजी इलाहाबादके नाम

७५) श्री भट्टारक चारुकीर्तिजी महाराजके यहाँ (ग्रन्थके लिये) डिपाजिट

२४०) डिपाजिट, बनारस एलक्ट्रिक सप्लाई क०

१३९।।।=) विभिन्न लोगो (खातो) के नाम

*मियाद समाप्त होने पर रुपया नही वसूल हुआ । नालिश की गई और केस चालू है।

१९७॥)॥। श्रीरोकड बाकी

१६०=)॥। विद्यालयमें बाकी

३७।=) घाटनिर्माण रोकडमे बाकी

१९७॥)॥।

२१९०४७॥=)॥

नोट (१) १००९८) रुपया चालू कोषमे, ध्रौव्यकोषमे (प्रबन्ध-कारिणी सभाके ता० १२—८—२४ के प्रस्ताव न० ९ के अनुसार) जमा किया गया था

(२) ८२८९०॥।=)॥ ध्रौव्यकोषसे निम्न कारणोंसे लिया गया—

११३१७) रुपयी बैंक बम्बई के फेल होनेसे सन् १९१७-१९१८ मे बट्टे खाते

५९९३=)॥ लाडली मोहनशाह शिवपुर बनारसकी डिगरी वसूल न होनेसे सन् १९५४—५५ मे बट्टे खाते

१४६७६।=)॥ घाट मरम्मत खाते आयसे अधिक व्यय हुआ

१०००९॥।=)॥ इमारत निर्माण में आयसे अधिक व्यय हुआ।

३०९९८॥=) मँहगाईके कारण (ता० १—७—४३ से अब तक) ध्रौव्यकोष मे व्यय हुआ (चालू-फड मे रुपया न होनेसे)

८२८९०॥।=)॥

वर्तमान स्थिति

जैसा कि वर्तमान आर्थिक स्थितिसे स्पष्ट है विद्यालयका मासिक व्यय लगभग बाइस सौ और वार्षिक व्यय २६०००) है। विगत निम्न प्रकार है —

पुरस्कार (अध्यापकादि)	१०५००)	छपाई	३००)
भोजनालय	१००००)	मन्दिरजी	१५०)
छात्रवृत्ति	१८००)	विवादोत्सव	१५०)
परीक्षा	६००)	भवन	१०००)
पुस्तकालय	४००)	म्यु० टैक्स	११७)
रोशनी	६००)	स्फुट	१८३)
औषधि	२००)	जोड़	२६०००)

वार्षिक आय १६०००) है। विगत—

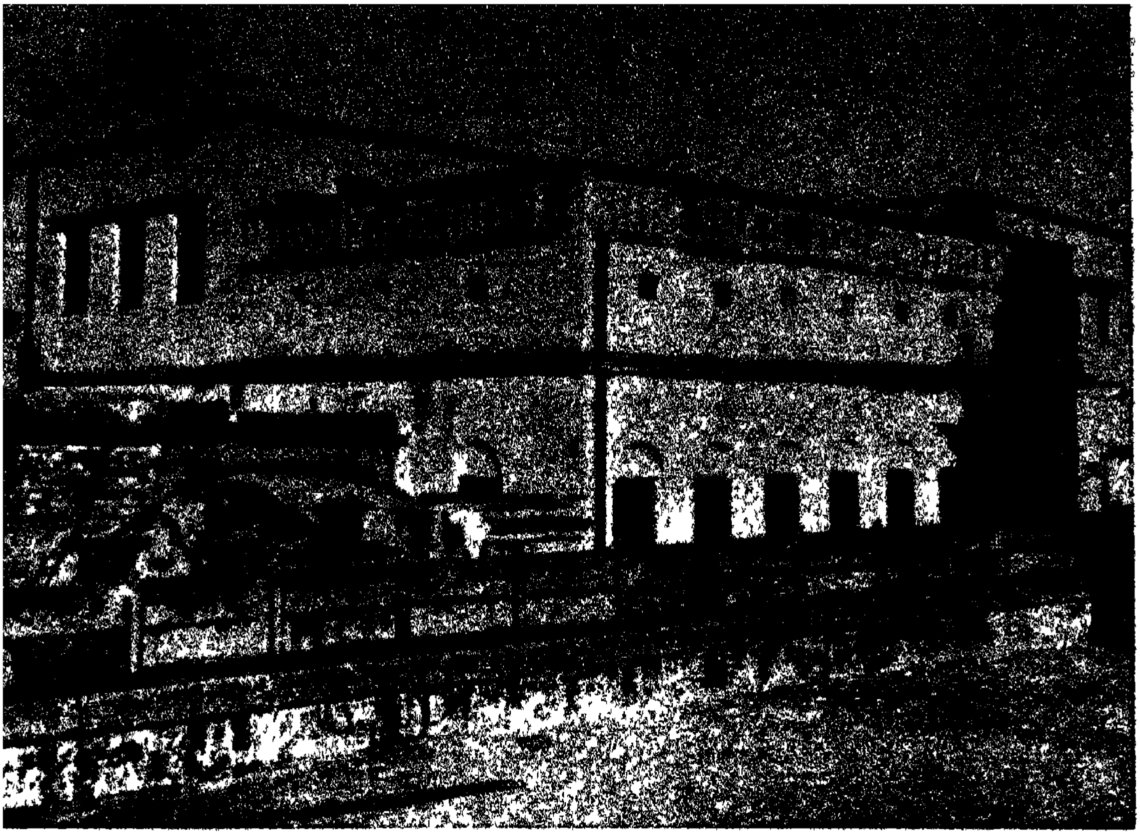
ध्रौव्यकोषका ब्याज	१००००)
मासिक दान (सरकारी सहायता सहित)	२५००)
साधारण दान	३५००)

अर्थात् इधर कई वर्षोंसे लगभग १००००) का घाटा होता आ रहा है। पूज्य श्री १०५ क्षु० वर्णीजीके आशीर्वाद एव सतत् प्रोत्साहन, प्रधानाध्यापकजी की प्रेरणा तथा समाजके स्वाभाविक विद्याप्रेमके कारण आप सब साधर्मियों द्वारा यथाशक्ति दी गयी सहायताके कारण विद्यालयने यद्यपि अब तक घोर आर्थिक संकटका सामना नहीं किया है तथापि यह स्थिति चिन्ताजनक है। इतना ही नहीं, यह हमारी भावी योजनाओंपर भी तुषारपात करती आ रही है। अतः निवेदन है कि आप विद्यालयको अपनी सतत चिन्ताका विषय बनायेंगे और सदाकी भांति स्वयमेव सुझाव और सहायता देकर इसके भविष्यको भी कर्मठ और युगनिर्माता बनायेंगे।

अन्तमें मैं स्वयं और प्रबंध समितिकी ओरसे उन सब संस्थापकों संपोषकों, सहायकों, अध्यापकों और स्नातकोंके प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ जिनकी सद्भावना, सहयोग और पुरुषार्थके बलपर यह विद्यालय फूला फला है।

सुमति लाल जैन
मंत्री

मुद्रक—पं० पृथ्वीनाथ भार्गव, भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट बनारस।



स्याद्वाद् विद्यालयका छात्रावास

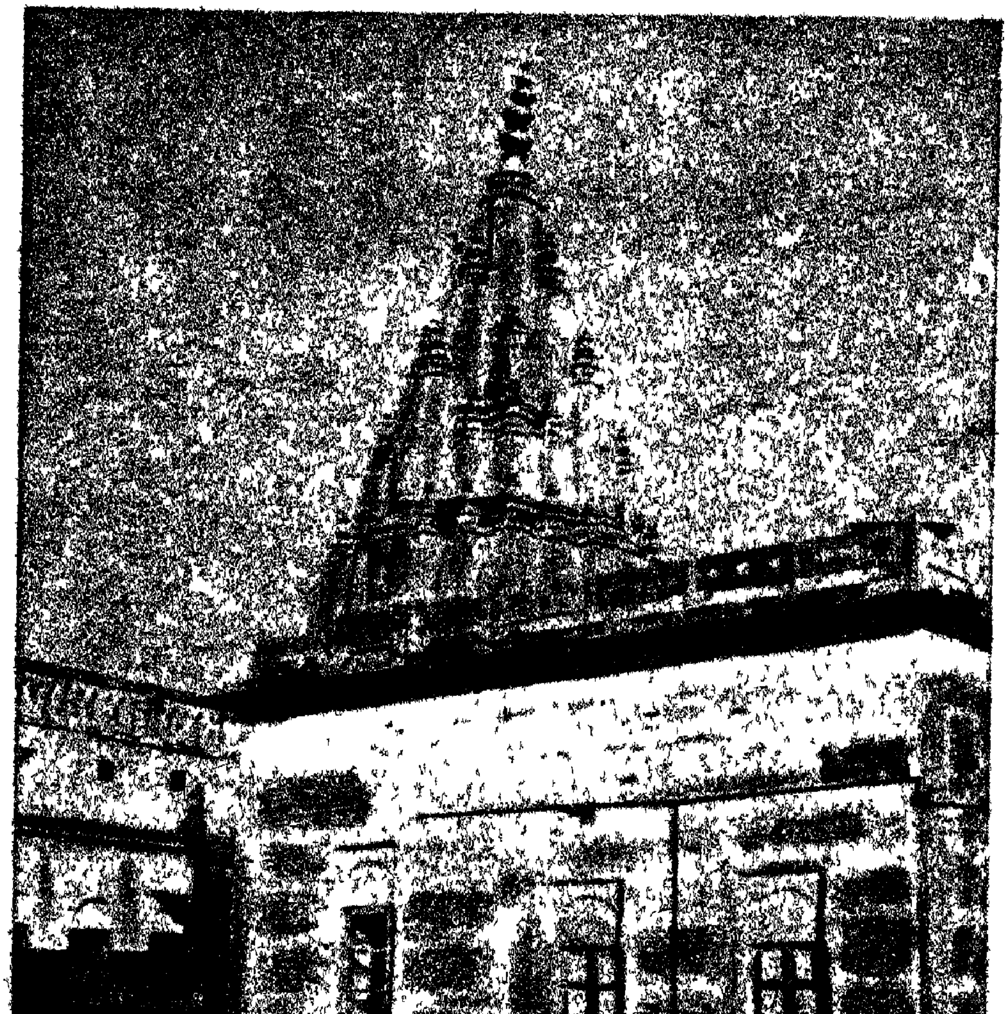


श्री अकलंक सरस्वती-भवन

श्री स्याद्वाद महाविद्यालय

स्वर्ण-जयन्ती

भदैनी—बनारस



श्री १००८ सुपार्श्वनाथ मन्दिर

मुद्रक—पं० पृथ्वीनाथ भार्गव, भार्गव भूषण प्रेस, बनारस